॥ રામ ॥

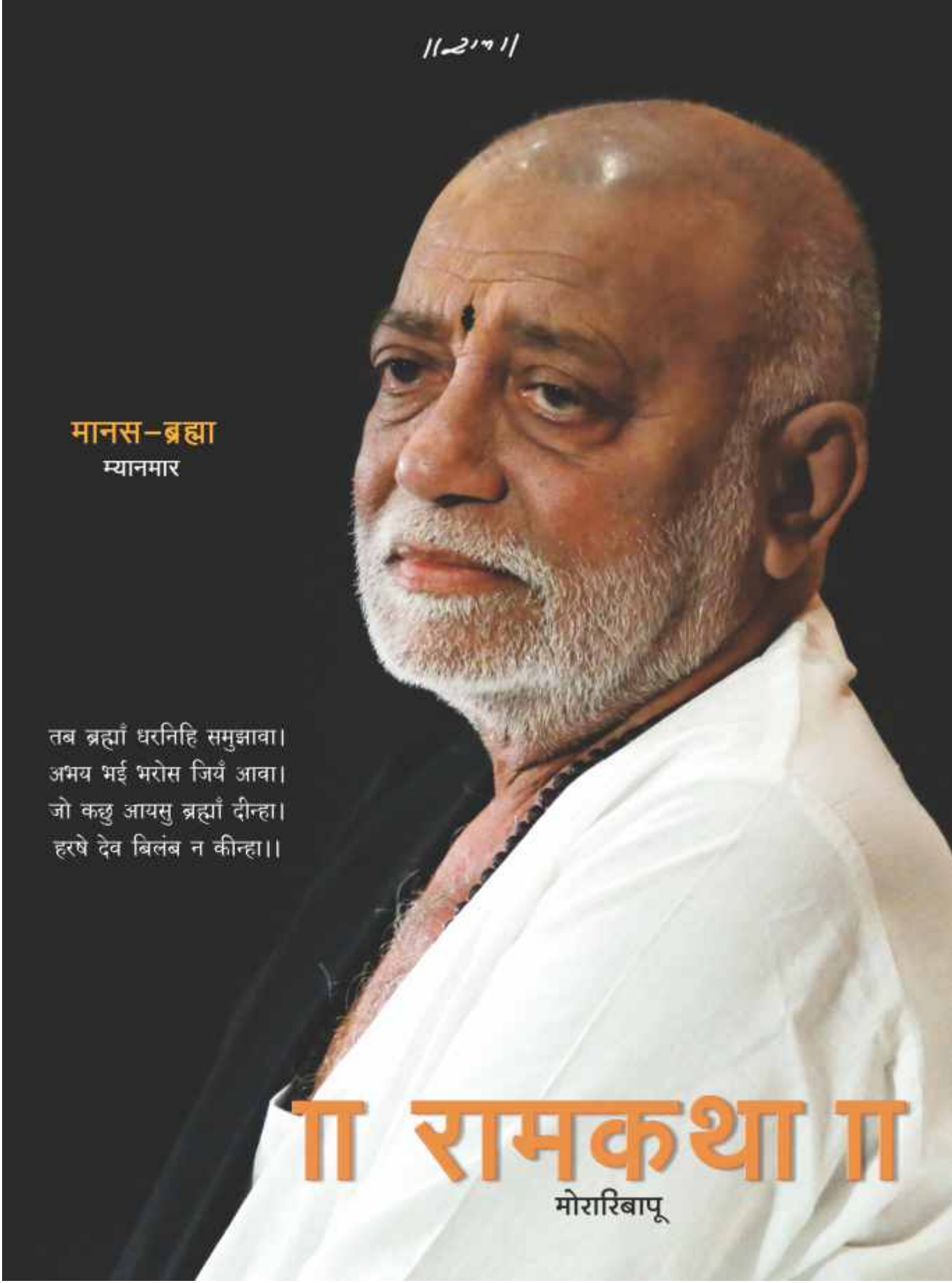

मानस-ब्रह्मा

म्यानमार

तब ब्रह्माँ धरनिहि समुझावा।
अभय भई भरोस जियँ आवा।
जो कछु आयसु ब्रह्माँ दीन्हा।
हरषे देव बिलंब न कीन्हा।।

॥ रामकथा ॥

मोरारिबापू

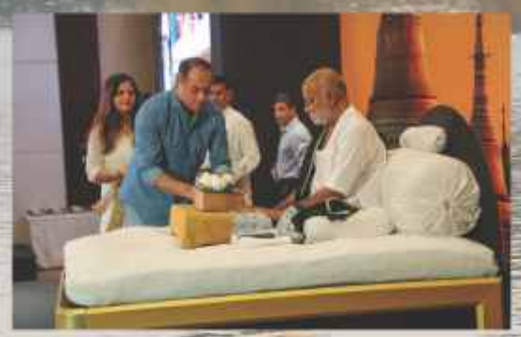

|| रामकथा ||
मानस-ब्रह्मा

मोरारिबापू
म्यानमार
दिनांक : ११-३-२०१७ से १९-३-२०१७
कथा-क्रमांक : ८०८

प्रकाशन :
जून, २०१९

प्रकाशक
श्री चित्रकूटधाम ट्रस्ट,
तलगाजरडा (गुजरात)
www.chitrakutdhamtalgajarda.org

कोपीराईट
© श्री चित्रकूटधाम ट्रस्ट

संपादक
नीतिन वडगामा
nitin.vadgama@yahoo.com

रामकथा पुस्तक प्राप्ति सम्पर्क-सूत्र :
ramkathabook@gmail.com
+91 704 534 2969 (only sms)

ग्राफिक्स
स्वर एनिम्स

प्रेम-पियाला

मोरारिबापू की रामकथा दिनांक ११-३-२०१७ से १९-३-२०१७ के दिनो में म्यानमार में सम्पन्न हुई। एक समय में जिसको ब्रह्मदेश या ब्रह्मा का देश कहा जाता था ऐसी भूमि में गाई गई बापू की यह रामकथा 'मानस-ब्रह्मा' विषय पर केन्द्रित हुई।

'रामचरितमानस' में ब्रह्मा किस-किस रूप में प्रगट हुए और तुलसी की रामकथा में ब्रह्मा का रोल कहां और कैसा है; ब्रह्मा का कार्यक्षेत्र क्या है, उसके बारे में इस कथा में बापू ने तात्त्विक संवाद किया। तुलसी की रामकथा के परिप्रेक्ष्य में ब्रह्मा का महिमागान बापू ने इन शब्दों में किया, 'ब्रह्मा हम सब का विधाता, हम सब का विरंचि, हम सब का फलदाता। हम सब समस्या में हो तो समस्या का जवाब देनेवाला विचारशील। कितने रोल में ब्रह्मा प्रस्तुत हुए हैं तुलसी की रामकथा में? ब्रह्मा हमारा सर्जक है, यह हमारा विधाता है, यह हमारा वयोवृद्ध एडवाईज़र है, निरूत्साही को उत्साहित करनेवाला है और कर्मफलदाता है।' साथ ही बापू ने स्पष्ट किया कि यहां जो ब्रह्मा का स्मरण होगा वो बुद्धपुरूष के रूप में होगा, एक सद्गुरु के रूप में होगा।

चतुर्मुख एवं चतुर्भुज ब्रह्मा के संदर्भ में अपना दर्शन प्रस्तुत करते हुए बापू ने चार-चार सूत्र कहना पसंद किया। बापू का कहना हुआ कि चतुर्मुख ब्रह्मा पृथ्वी को समझाते हैं तब चार रीत बिलग-बिलग है। सद्गुरु अथवा बुद्धपुरूष हमें ब्रह्मा का रूप लेकर चार पद्धति से समझाते हैं। पहली पद्धति है त्याग। दूसरी विनय। तीसरी पद्धति, बात समझाने के लिए शास्त्र आधार लेते हैं। और सद्गुरु ब्रह्मा चौथी पद्धति से समझाते हैं वो है प्रेम।

'ब्रह्मा कर्मयोगी भी है, प्रेमयोगी भी है, भक्तियोगी भी है और ज्ञानयोगी भी है।' ऐसे सूत्रात्मक निवेदन के साथ बापू ने ब्रह्मा में निहित कर्म, प्रेम, भक्ति और ज्ञान जैसे तत्त्वों को रेखांकित किये। तदुपरांत बापू ने ऐसा सूत्रपात भी किया कि ब्रह्मा बलवान है, बुद्धिमान है, आयुवान है और भक्तिवान है। ब्रह्मा, विष्णु और महेश के विभिन्न कार्यक्षेत्र को भी बापू ने सूत्रात्मक शैली में प्रस्तुत किया कि ब्रह्मा निर्माण करता है, विष्णु निर्वाह करता है और शिव निर्वाण करता है। तो बापू ऐसे निष्कर्ष पर भी आये कि जो सर्जन करता है उसको गालियां भी खानी पड़ती है। और 'मानस' में ब्रह्मा को बहुत गालियां दी गई। गालियां मीन्स खोटी-खरी सुनाई।

'मानस-ब्रह्मा' रामकथा के माध्यम से म्यानमार में-ब्रह्मदेश में-बापू ने यूं 'रामचरितमानस' अंतर्गत पितामह ब्रह्मा का जो दर्शन है उसका विशिष्ट विवरण किया एवम् सद्गुरु- बुद्धपुरूष को भी ब्रह्मा का दर्जा देकर अपना निजी दर्शन प्रस्तुत किया।

– नीतिन वडगामा

मानस-ब्रह्मा : १

ब्रह्मा हमारा सर्जक है, हमारा विधाता है

तब ब्रह्माँ धरनिहि समुझावा। अभय भई भरोस जियँ आवा।
जो कछु आयसु ब्रह्माँ दीन्हा। हरषे देव बिलंब न कीन्हा।।

बाप! परमात्मा की सहज कृपा के कारण आज से कथा का आरंभ हो रहा है। आप सभी को व्यासपीठ से मेरा प्रणाम। कमल का, परिवार का बहुत सालों पहले का मंगलमय मनोरथ। तीन साल पहले मैंने हाँ कही। कथा होगी, तू स्थान खोज ले। खोजते-खोजते उसने म्यानमार की बात कही और आज वो दिन आ गया। उसके मन में एक भाव रहा, कई बार मैं बोल गया कि मेरे मन में वो रह गया कि मेरी तोतली बोली में मैं अपने दादा को कथा सुनाउं। फिर उसने वो बात पकड़ ली। कथा होगी तो मानो दादा सुने ऐसे करूंगा। सुनते ही है लेकिन उसका भाव प्यारा रहा। आज सुबह मैंने पूछा, इतने साल कमाया है वो सब इसमें खर्च कर डालना है? बोले, इसके सिवा अच्छा खर्च करने का कौन-सा अवसर हो सकता है? मुझे यह भी खुशी है कि मेरे आयोजकगण प्रवचन करना तो सीख जाते लेकिन गाना भी सीख जाते हैं! कमल गा भी लेता है। उसके मन में जो कुछ बातें है वो उसने कम्पोझ भी करवाई। और मुझे यह भी प्रसन्नता है कि युवानी कथा सुनती तो है लेकिन आयोजन करने में भी इतनी रुचि और श्रद्धा रखते हैं। मैं मेरी प्रसन्नता व्यक्त करता हूं।

बात यह है कि कौन विषय पर बोलूं? कुछ मन में है लेकिन इस देश के बारे में मैंने जो जानकारी प्राप्त की उसको एक समय में ब्रह्म देश कहा जाता था। एक समय में उसको ब्रह्मा का देश भी कहा जाता था। अंग्रेजों ने फिर उसका बर्मा कर दिया। अब यहां की जनता ने वो सब अंग्रेजी बातें हटाकर के म्यानमार कर दिया। लेकिन मूल इस मुल्क का नाम, एक

बार यह एक भारत का पार्ट भी रहा। विश्वयुद्ध के दौरान जापान ने कब्जा कर लिया। यह इतिहास पढ़ा था और पढ़ाया भी। यह सब मेरी स्मृति में है। उसके बाद आंतरराष्ट्रीय समुदाय के कहने पर मुक्ति मिल गई। कितनी उथल-पाथल इतने छोटे-से मुल्क में हुई है! भारत के बहुत लोग यहां निवास करते हैं। एक तो पढ़ा कि यह ब्रह्मा का देश है। दूसरा, बुद्ध यहां आये थे। बुद्ध का बौद्ध धर्म यहां है। सारनाथ से एक शाखा यहां खोली गई। आज यहां वो कार्यरत है। और मैंने यहां यह भी जानकारी प्राप्त की कि यहां एक स्तूप है बहुत बड़ा। वहां भगवान बुद्ध के बाल है। जैसे श्रीनगर में हज़रत बाल है, महमंद पयंगबर साहब के बाल है। तो यहां बाल है। बौद्ध धर्म यहां आया और एक बात ओर भी मैं जोड़ना चाहूंगा कि मुघल सल्तनत का आखिर बादशाह, बादशाह ज़फ़र उसको जब अंग्रेजों ने केद कर लिया, निकाल दिया; उसकी दरगाह है। मैंने कल दर्शन भी किये।

यह मुल्क बड़ा प्यारा है। शताब्दियों पहले, सदियों पहले किसने खोजा, अल्लाह जाने! कथा के लिए तो कमल ने खोजा! मुझे बार-बार वो कहता था कि बापू, बहुत कम लोग है। ढ़ाई सौ, तीन सौ लोग है। अरे बेटा, कथा में कोई संख्या का सवाल ही नहीं होता! संख्या से क्या लेना-देना? बहुत है। इससे भी बहुत कम संख्या में कथाएं हुई है। संख्या तो गिनने जाओ तो इससे पचास गुना ज्यादा तो पाळियाद में स्वयंसेवक थे! पंद्रह-बीस हजार तो स्वयंसेवक थे वहां! संख्या से क्या लेना-देना? इतनी शांति से इतने करीब बैठे हैं; मुझे यह अच्छा लगता है। मैं कथाओ में कहता हूं, परमात्मा का प्रागट्य 'जोग लगन ग्रह बार तिथि।' पांच जो मिले तब होता है। जब जोग है तो कथा हो जाती है, यदि लगन न हो तो भी। ग्रह, बार, तिथि का तो मेरी कथा में ठिकाना है ही नहीं! कौन-सा वार, कौन तिथि वो तो अल्लाह पर छोड़ दिया! कभी-कभी योग भी होता है, लगन भी होती है, ग्रह भी होता है लेकिन पांचों इकठ्ठे हो जाए। तो मेरी दृष्टि में एक अच्छे स्थान में कथा आज से शुरू हो रही हैं। लोग भी बड़े शालीन है। मैं सोच रहा था इस कथा में कि कौन-से विषय पर गाउं? बातें करूं? तो जब यह ब्रह्म देश है, बर्मा का देश भी उसको कहा गया। उसको ब्रह्मा का देश कहा गया तो मैंने सोचा, इस कथा में 'मानस-ब्रह्मा' गाउं।

'रामचरितमानस' में, यह रामकथा में ब्रह्मा का रोल कहां है? ब्रह्मा किस-किस रूप में प्रगट हुए? अब आप प्रसंग के अनुकूल उस पर विचार करेंगे तो उसमें भी सब उजागर होने लगेगा। ब्रह्मा का बहुत बड़ा कार्यक्षेत्र तुलसी ने 'मानस' में विस्तार से कर दिया। कमल का विचार था कि दादाजी कथा सुने। गुरु कथा सुने ऐसा उसका भाव था। हमारी परंपरा में सब से पहले गुरु ब्रह्मा को ही माना जाता है। गुरु ब्रह्मा। सब से बड़ा गुरु ही तो सर्जक होता है। मैं यह भी आप से बात करूंगा कि गुरुरूपी ब्रह्मा उसके चार मुख कौन-कौन है? यहां शांति है। कोई चिंता नहीं, कोई भीड़भाड़ नहीं। खाना, पीना, सोना, घूमना और कथा सुनना इसके सिवा कोई काम नहीं। आप सब सादर निमंत्रित है।

तो 'मानस-ब्रह्मा', जिसको कई नाम से 'मानस' में पुकारा गया, आप जानते हैं। कभी बिरंचि, कभी अर्च, कभी विधाता, कभी कुछ, कभी कुछ। ब्रह्मा का देश, ब्रह्मदेश, वर्मा, बर्मा आदि-आदि यह लगा तो सुबह बैठा था, हुआ कि पहली कथा होली पर है तो होली पर बोलूं। होळी क्यां सळगाववी यार! मेरी मानो तो सब शुभ कार्य होली में करो। लोग कितने घबराये हुए हैं! मेरे राजकोटवाले वो चंद्रेश, जिसकी मोबाईल की दुकान है, मेरे पास मुहूर्त ले गया कि कौन-से दिन मुहूर्त रखूं? मैंने कहा यार, मैं मुहूर्त देनेवाला नहीं हूं। नहीं, आप जो दो। मुझे पूछा तो जरा मुश्किल हो जाएगी। कहा, होली के दिन उद्घाटन रख। उसने बड़ा कार्ड छपवाया! होली के दिन उद्घाटन! होली जैसा पवित्र दिन कौन हो सकता है? फिर सुबह सोचा कि ब्रह्मा पर बोला नहीं गया है स्वतंत्र रूप में। ब्रह्मा की स्तुति के रूप में भी शायद नहीं बोला गया। 'जय जय सुरनायक' में ब्रह्मा की अगवानी में शायद एक बार बोला गया। जो हो, खबर नहीं।

'मानस-ब्रह्मा', उसके बारे में हम इस कथा में विशेष रूप में 'मानस' का जो ब्रह्मा है वो क्या है उसकी चर्चा करेंगे। ब्रह्मा हम सब का विधाता, हम सब का विरंचि, हम सब का फलदाता। हम सब समस्या में हो तो समस्या का जवाब देनेवाला विचारशील; कितने रोल में ब्रह्मा प्रस्तुत हुए हैं तुलसी की रामकथा में? बहुत रोल में आए हैं। इस कथा में हम और आप बातें करेंगे। इसलिए जो दिमाग में आया वो दो पंक्तियां उठा ली 'बालकांड' की।

ब्रह्माजी का संकेत है यह दो पंक्तियों में। पहली पंक्ति है, जब ब्रह्माजी के पास धरती जाती है, जब रावण के जुल्म से पूरी धरती भर गई थी और सब से पहले अकुला उठी थी, धरती गाय का रूप लेकर इधर-उधर चिल्ला रही थी, मुझे कोई बचाओ, बचाओ! आखिर में सभी को मिलकर वो ब्रह्मा तक पहुंचती है। ब्रह्मा ने धरती को समझाया और धरती जो बहुत भयभीत थी वो अभय हो गई और हृदय में भरोसा आ गया। फिर ब्रह्मा की अगवानी में परमतत्त्व की पुकार हुई और भगवान ने आकाशवाणी से कह दिया कि मैं अवतार लूंगा और सब देवगण प्रसन्न होकर अपने-अपने लोक में लौटने लगे तब ब्रह्मा ने देवों को समझाया, आज्ञा दी कि तुम सब वानर बनकर धरती पर जाओ। तब सब हर्षित हो गये और बिना विलंब वो धरती पर बंदर के रूप में आ गये। ये दो पंक्तियों का आश्रय लेकर हम इस कथा में शायद पहली बार ब्रह्माजी के गुणगान करेंगे। ब्रह्मा हमारा सर्जक है, यह हमारा विधाता है, यह हमारा वयोवृद्ध एडवाईज़र है, निरुत्साही को उत्साहित करनेवाला है और कर्म फलदाता है। क्या-क्या नहीं है ब्रह्मा? ब्रह्मा के साथ हमारा बहुत-सा रिश्ता है साहब!

तो 'मानस-ब्रह्मा', इस कथा के नायक रहेंगे। गत कथा में हम महेश की वाङ्मय पूजा कर रहे थे। इस कथा में हम ब्रह्मा की वाङ्मय पूजा करेंगे। और हो सकता है कि किसी कथा में हम 'मानस-विष्णु' की पूजा करेंगे। ताकि ब्रह्मा, विष्णु, महेश का मेरा क्रम भी पूरा हो जाए।

मैं इस कथा में आपको चार-चार सूत्र बहुत कहूंगा। क्योंकि ब्रह्मा के चार मुख है और मेरी व्यासपीठ की समझ में यह उतरा है कि किसी को भी समझाओ तो उसको चार तरीके होते हैं। पांचवां है ही नहीं। व्यर्थ संख्या न बढ़ाएं। समझाना एक रीत से भी हो सकता है, एक मुख से भी हो सकता है। लेकिन हो सकता है, कोई एक मुख से न समझे। मुख मानी एक दूसरी पद्धति। दूसरी पद्धति से समझाना पड़ता है। व्यक्ति न माने, न समझे तो तीसरी पद्धति का उपयोग करना पड़ता है। इससे भी न माने तो कोई चौथी पद्धति से समझाया जाता है। यहां तो धरती गाय के रूप में उसको ब्रह्मा चार प्रकार से समझाते हैं। समझाने की राजनैतिक पद्धति भी चार प्रकार की होती है जिसको साम, दाम, दंड, भेद कहते हैं। लेकिन साम, दाम, दंड, भेद से गाय को नहीं समझाया जा सकता, बैल को समझाया जा सकता है, जो उद्दंड है। जो रांकस्वरूपा है, जो गोकर्ण है, जिसकी गो आंखें है, जिसका गोहृदय है, जिसकी गो की नम्रता है उसको साम, दाम, दंड, भेद का प्रयोग नहीं किया जा सकता। यह विवेक पितामह ब्रह्मा का होना चाहिए और है ही। जिसका वाहन ही तो हंस है, जो क्षीर-नीर को बिलग करता है। तो ब्रह्मा पृथ्वी को चार प्रकार से समझाते हैं। पांचवें प्रकार की जरूरत नहीं मेरी समझ में। और जब मैं गुरु के साथ जोड़ना चाहूंगा क्योंकि हमारी परंपरा गुरुवंदना ब्रह्मा से शुरू होती है। हम जब भयभीत होते हैं, हम जब आतंकी होते हैं; हम जब कहीं के नहीं रहते; हमारे पास कोई चारा नहीं, कोई उपाय नहीं; ऐसे समय में कोई गुरुतत्त्व, कोई चतुर्मुखी गुरु, कोई चार पद्धति से हमें समझानेवाला तत्त्व हमारे सामने ब्रह्मा के रूप में आ भी सकता है। या तो ऐसी क्षण में कहीं से भी जवाब न मिले तो कांपते हुए, आतंकित स्थिति में हृदय में विचारकर, ऋषिमुनियों का आश्रय लेकर, मुनियों का मौन और ऋषियों की वाणी का आश्रय लेकर हमें किसी न किसी ब्रह्मा के पास जाना चाहिए, जो गुरु है। हां, ब्रह्मा आ भी सकता है लेकिन कथा जो है उसमें पृथ्वी ब्रह्मा के पास गई।

गुरु के पास जाने के कुछ कदम बताये हैं। गुरु; मेरी दृष्टि में उससे आगे कुछ है ही नहीं। आखिरी तत्त्व है। 'नास्ति तत्त्वं परम्।' तो उसके पास जाने के लिए पृथ्वी ने जिस रूप से यात्रा की। ऋषिमुनियों के पास गई, देवताओं के पास गई फिर जा के ब्रह्मा को मिली। वहां शिव भी थे और फिर पूरी घटना। पृथ्वी जाती है और ब्रह्मा उसको समझाते हैं, चार प्रकार से समझाते हैं। किस प्रकार से बुद्धपुरुष हमारी ऐसी क्षणों में हमें समझाते हैं। दूसरी पंक्ति यानी अर्धाली में कहा, 'अभय भई भरोस जियँ आए।' ब्रह्मा के समझाने पर पृथ्वी अभय हो गई। 'किष्किंधाकांड' का प्रसंग है। सुग्रीव को अभय करने के लिए हनुमानजी कहते हैं, महाराज, वो नहीं आ पाएगा, आप वहीं आइए। यह चलने में आपके पास आने में समर्थ है ही नहीं। खुद आएगा तो दूसरी दिशा में भागेगा। तो आप वहीं आकर उसको अभय कर दो। विभीषण भगवान की शरण में आकर अभय प्राप्त करता है। वो खुद आता है। यहां पृथ्वी ब्रह्मा के पास जाती है।

एक वस्तु याद रखे, यहां ब्रह्मा तो एक पात्र है, त्रिदेव में उसकी जो-जो भूमिका है 'मानस' में, जो तुलसी ने रखा है वो आपके सामने रखकर हम बातें करेंगे लेकिन यहां जो ब्रह्मा का स्मरण होगा वो बुद्धपुरुष के रूप में होगा, एक सद्गुरु के रूप में होगा। वो किस रूप में हमें समझाता है, उसकी सात्त्विक-तात्त्विक चर्चा हम करेंगे। और 'अभय भई भरोस।' ब्रह्मा ने जब समझाया तो पृथ्वी अभय हो गई। कितनी भयभीत थी! कंपित थी लेकिन ब्रह्मा ने समझाया तो अभय हो गई। और अभय हुई उसके बाद उसके हृदय में थोड़ा भरोसा आया। यहां थोड़ा मैं रुकुं, हमें अभय मिले तो भरोसा आए कि भरोसा आए तो अभय मिल जाए? निर्णय क्या करोगे? दो सूत्र आ गये हैं, भय-अभय। लेकिन क्रम जो तुलसी ने उठाया उसमें अभय हो गई फिर भरोसा आया। कोई ब्रह्मा, कोई हमारा बाप, कोई हमारा बुद्धपुरुष, कोई हमारा सद्गुरु हमें अभय कर दे उसके बाद भरोसा आया। एक अनुभव है यह कि भरोसा आ जाय और भरोसे पर हम अभय हो जाए।

तीन प्रकार के जीव है जो 'मानस' ने बताये विषयी, साधक, सिद्ध; और चौथा जीव जो तलगाजरडा ने एड किया है, शुद्ध। आप जानते हैं। तो एक चौथे जीव की भी बात मेरी जिम्मेवारी से मैं करता हूं कि एक चौथा प्रकार जो है वो शुद्ध है। और तत्त्वत: मैं यह तीन बातें हटा नहीं सकता क्योंकि मेरे गोस्वामीजी ने कहा, मेरे दादा ने मुझे पढ़ाया। लेकिन मैं यह भी तो कह सकता हूं, असल में जीव का स्वभाव विषयी नहीं है। असल में जीव का स्वभाव साधक भी नहीं है। यह सब यात्रा के पडाव है यारो! असल में जीव सिद्ध भी नहीं है। जीव शुद्ध ही है।

ईस्वर अंस जीव अविनासी।
चेतन अमल सहज सुख रासी।

बिलकुल आखिरी निर्णय है 'उत्तरकांड' का कि जीव तो निर्मल है, जीव शुद्ध ही है। माया के द्वारा किसी को कर दिया विषयी; किसीको थोड़ा उपर उठ गया तो साधक; कोई हो गया सिद्ध। तत्त्वत: तो हम शुद्ध है। और जो मूल तत्त्व, तुलसी बहुत प्यारा शब्द युझ करते हैं 'सहज।'

मैं आप से निवेदन करूं मेरे भाई-बहन, आपके परिवार में सामनेवाली व्यक्ति की सहज स्थिति का स्वीकार कर लो। उसको स्वाभाविक जीने देना। किसी भी व्यक्ति को आप उसके स्वभाव के विरुद्ध जीने को कहते हैं तो किसी को अच्छा नहीं लगता। किसी की सहजता को छीन लेना पाप और अपराध ऐसे शब्द से मैं दूर रहता हूं लेकिन अक्षम्य है। जिसको अस्तित्व क्षमा नहीं करता। गुरु तो कर देगा, अस्तित्व नहीं करेगा। इसलिए जब हम भगवत्चरित्रों में देखते हैं, प्रसंगों में हम देखते हैं, सुनते हैं तब तो ऐसा पाया जाता है कि ईश्वर किसी के भी स्वभाव को सुधारने की चेष्टा नहीं करता। क्योंकि वो जानता है, इसका स्वभाव मैं भी बदल नहीं पाउंगा। कुछ काम सत्संग से होता है। मेरे व्यक्तिगत विचार में यदि धर्मात्मा सत्संग कराता हो केन्द्र में बैठकर तो उसको भी किसी के स्वभाव बदल दो, ऐसा नहीं करना चाहिए। जो ईश्वर ने बनाया है उसको तू क्यों अपने मरजी के मुताबिक मोड़ना चाहता है? आजकल क्या है, मेरे पास बहुत लोग आते हैं कि मेरे बेटा का स्वभाव ऐसा है! मेरे पति का स्वभाव ऐसा है! बाप! जीव शुद्ध है। जीव विषयी है ही नहीं। जीव शुद्ध है। यह साधक है ही नहीं। जीव शुद्ध है। यह सिद्ध है ही नहीं।

यहां 'अभय भई भरोस जियँ आवा।' यहां साधक और सिद्ध की बात निकाल दो, पहला और आखिर लो।

विषयी जीव जो है उसको आप पहले अभय कर दो तो फिर वो भरोसा करे। विषयी जीव जो है उसका पहले काम कर दो फिर उसको भरोसा आएगा। जैसे कि सुग्रीव। वालि को मार दो फिर उसको भरोसा आए। यह विषयी प्रकार। वो चाहे तो पहले अभय कर सकता है। उसकी तो इतनी ही शर्त है, एक बार मुझे पुकारे। वो तो बड़े कृपालु है, परम दयालु है। अभय कर देते हैं लेकिन यह यात्रा विषयी की है, शुद्ध की नहीं है। शुद्ध की यात्रा तो मेरा भरोसा है, तू अभय करे न करे तेरी मरजी! मेरा भरोसा है बस। फिर मैं श्रीमन् महाप्रभुजी को याद करूं, मुझे मेरा प्रभु चाहिए बस। भयभीत रहूं तू जाने! कहीं का न रहूं तू जाने! उत्थान हो, पतन हो तू जाने! जो भी हो, मेरा भरोसा! यह शुद्ध जीव है। इसीलिए महाप्रभुजी को याद करना पड़ेगा।

दृढ़ इन चरनन केरो भरोसो, दृढ़ इन चरनन केरो,
श्री वल्लभ नख चन्द्र छटा बिन, सब जग मांहे अंधेरो ...

मैं तो यह भी कहना चाहूंगा आप से कि पूर्ण भरोसा भी न हो, छोटा-सा हो लेकिन दृढ़ हो। जरा-सा हो लेकिन हो दृढ़। पूर्ण भरोसा बड़ी उपलब्धि है। छोटा-सा हो, सवाल है दृढ़ता का। छोटा-सा भरोसा यदि दृढ़ है, बेडा पार कर देगा। आठ प्रहर की पूजा रखो अपने घर में लेकिन छोटा-सा भरोसा न हो तो केवल श्रम, केवल थकावट; उसके अलावा कुछ नहीं बचता। छोटा-सा भरोसा यदि दृढ़ हो तो क्या नहीं करता? सत्य थोड़ा-सा क्यों न हो, बीमारियांमात्र खत्म हो जाती है। मैंने योगेशबापा को कहा, जिसने साक्षात्कार किया होगा वो ही बोल सकता है। बाकी यह शास्त्रकथन नहीं है, यह साक्षात्कारी कथन है। श्रीमन् महाप्रभुजी वल्लभजी और श्रीनाथजी भगवान गले मिले यह केवल चित्र नहीं है, यह हकीकत है। यह साक्षात्कारी सत्य है, यह केवल शास्त्रीय सत्य नहीं है। सिद्धांत का सत्य नहीं, अनुभव का सत्य है। 'रामायण' का आप अभ्यास खूब करो, मैं कितना खुश होता हूं उसकी तो कोई सीमा नहीं लेकिन 'रामायण' का अनुभव करो यह मेरे लिए ज्यादा आनंद की बात है। एक छोटा-सा अनुभव जरूरी है। हिन्दुस्तान को आज़ादी मिली। गांधीजी को याद करो। कोंग्रेस अधिवेशन था। आज़ादी तो मिल गई; वहां पद्मश्री कागबापू ने दो पंक्ति गाई-

अनुभव वगर अभ्यासथी जो घरनुं डहापण डोळशो,
जे वहाण तार्युं वाणिये ते तमे भेगा थई डुबाडशो।

पितामह ब्रह्मा ने पृथ्वी को चार प्रकार से समझाया। 'और अभय भई भरोस जियँ आवा।' विषयी यात्रा; क्योंकि घूमती रहती है। जो घूमता रहता है उसकी यात्रा विषयी होती है। पृथ्वी स्थिर नहीं है। नियम में तो उसको घूमना ही चाहिए। उसको मुझे स्थिर करना भी नहीं है। लेकिन मैं आपको समझाने के लिए, बात करने के लिए ऐसा कह रहा हूं। जिसके मन की, बुद्धि की, चित्त की पृथ्वी घूमती है, उनको तो पहले भरोसा दो, बाद में ही अभय हो। भरोसा हृदय का हो, मन का नहीं। बुद्धि का भी नहीं, चित्त का कोई ठिकाना नहीं और अहंकार तो भरोसा करनेयोग्य है ही नहीं! तुलसीजी कहते हैं, ब्रह्मा के समझाने पर धरती को हृदय में भरोसा आया। मन में नहीं। हमारे मन में कई बार भरोसा आता है लेकिन चला जाता है, चंचल है मन। हमारी बुद्धि मैं भी कई प्रमाण मिल जाते हैं। सामने निर्णय आ जाता है कि ऐसा सोचने के कारण यह हुआ। फिर भी हमें बौद्धिक भरोसा ठीक नहीं रहने देता। चित्त का भरोसा तो निरंतर विक्षिप्त हो जाता है। अहंकार; छोडो यार! मेरे गोस्वामीजी बहुत अनुभव के साथ गहराई की बात कहते हैं। पृथ्वी को भरोसा न मन का है, न चित्त का है; हृदय का भरोसा है। हृदय में भरोसे के देवता की स्थापना होनी चाहिए। 'अभय भई भरोस जियँ आवा।' हृदय में, जीव में भरोसा है। पहली पंक्ति केवल भूमिका में। दूसरी पंक्ति-

जो कछु आयसु ब्रह्माँ दीन्हा।
हरषे देव बिलंब न कीन्हा।।

जो आज्ञा ब्रह्मा ने देवगणों को की। हर्षित होकर अविलंबन देवताओं ने ऐसा किया। सीधा-सा अर्थ। कोई ब्रह्मा, कोई बुद्धपुरुष, कोई सर्जक। ब्रह्मा पात्र के रूप में लो तो गिनती कर के कर्मफल देता है। 'कर्म सुभासुभ देइ बिधाता।' एक उसके पास गिनती है, हिसाब-किताब करता है ऐसे वो फल देता है। जब गुरु के रूप में हम ब्रह्मा की आराधना करे अथवा ब्रह्मा को गुरु के रूप में देखे तो बात ओर हो जाती है। उसमें हमारा फ़र्ज इतना ही हो जाता है, उसकी आज्ञा को हम हर्षित होकर कुबूल कर ले। प्रत्येक शब्द बहुत उपयोगी है। यहां तो आप इतने ही लोग हैं तो एक-एक शब्द को घूटघूटकर पीएं। यहां फायदाकारक है। कथा ज्यादा एन्जोय कर सकते हैं। जैसे दादा कहते थे ऐसे कहने की कोशिश करूं। मेरा अनुभव कभी-कभी एक-एक शब्द

पर तीन-तीन दिन पाठ चलता था। आगे जाना ही नहीं। रुके, वहीं रुके। क्या दाता ने कृपा पी थी! और मुझे फायदा यह हो रहा है कि कृपा के बाद अब स्मृति भी लौट रही है। वर्ना कितना दबा-सा रह जाता! छोटा-सा बचपन था। हाफ पेन्ट पहनकर बैठते थे उसके चरणों में एक बच्चे की तरह। क्या-क्या डाल दिया था यह स्मृति आ रही है। खुद को तो आनंद आता है, आप सब मेरे हैं तो बांटता। सामान्य स्तर पर भी जो हमें आज्ञा मिले उसे हर्षित होकर कुबूल करनी चाहिए। उसमें अपना अभ्यास और गणित मत डालना। उसने तो कह दिया। हमारे पास कितने विकल्प रहते हैं यार! हजारो विकल्प लिये हम सब बीमार है! अस्वस्थ है!

हमारे पास लोग आते हैं। मैं कुछ कहता हूं तो खबर नहीं, कितने-कितने सामने विकल्प, तर्क लाते हैं! मेरा कहना आखिरी होता ही नहीं। याद रखना, मैं दृष्टांत देकर आपको समझाने की कोशिश कर रहा हूं। चंद्रेश को फिर एक बार मैं अभिनंदन दूं, होली के दिन उद्घाटन किया! मैंने कहा, यदि होली प्रगट हो गई, कुछ जला तो ठारने की जिम्मेवारी मेरी लेकिन कर होली के दिन। हमारे पास विकल्प की शृंखला है! अनगिनत विकल्प है! पहली बात तो यह है, बुद्धपुरुष कहे तो हर्षित होकर कुबूल करो। और दूसरी बात कि विलंब न करो। गेंद आए उसी समय हिट करना होता है। सुख की आए, दु:ख की आए, कोई भी गेंद आए। मेरे गुरु की ओर से यह बात आई उसको हर्षित होकर और अविलंब, यह दो बातें महत्त्व की है। फिर भी यह देवता तो देवता है। ब्रह्मा की बात मान ली हर्षित होकर; विलंब भी नहीं किया। बंदरों के वेश में धरती पर आ गये। यह देवताओं का कोई भरोसा नहीं! दिल में भरोसा नहीं था। भरत के मिलने के समय क्यों विघ्न डालने जाते हैं? क्यों डांवांडोल होते हैं 'मानस' में? भरत का और राम का मिलन हो जाएगा तो हमारा क्या होगा? राम गादी पर बैठ जाएंगे तो हमारा क्या होगा? सरस्वती को प्रार्थना करे, बुद्धि घूमाने की कोशिश करे! यह लोग स्थिर नहीं है।

तो यह है विषय की स्थापना। आगे के आठ दिन बातें करेंगे। अब 'मानस' के बारे में तो क्या कहूं? आप सब जानते हैं। फिर भी प्रवाही परंपरा का निर्वहण करने के लिए। भगवान महादेव के द्वारा जिसकी प्रतिष्ठा हुई है और अपने हृदय में उसकी स्थापना की है ऐसे 'मानस' के सात सोपान। उसको वाल्मीकि के शब्दों में हम 'कांड' कह देते हैं। बाल, अयोध्या, अरण्य, किष्किंधा, सुन्दर, लंका और उत्तर। कौन मंगल आचरण? कौन मंगलाचरण? अभी कुछ दिन पहले आंतरराष्ट्रीय महिला दिन गया। मुझे भी उस पर बोलना था। मैंने कहा, हम भारतीयों ने, हमारी परंपरा में जितना महिलाओं को स्थान दिया है। ओर धर्म का नाम न लूं। इतिहास क्या कहता है? एक धर्म में कहते हैं, एक स्त्री मजबूरी में यदि कुछ भूल कर दे उसको निर्वस्त्र कर के जितने लोग जाए, उसको हृदय में पत्थर लेकर पीटो सरेआम! सरे बाजार पीटो! यह कम जुल्म है? दुष्कृत्य ठीक नहीं। लेकिन किसी ने भूल की। तुम वहां उसको छोड़कर निकल जाओ। लेकिन पत्थर क्यों मारते हो? यह कौन धर्म है?

हमारे यहां अहल्या ने भूल की। मैं तो यह भी नहीं मानता। लेकिन चलो, मानो भूल हो गई। लेकिन पत्थर नहीं मारा। सब छोड़कर चले गये। पत्थर नहीं मारा उस पर। पत्थर पर तो पत्थर मार सकते थे! यदि हमने उसको पत्थर के रूप में स्थापित किया, शिला बन गई। यहां तो जीवंत स्त्री को पत्थर मारने की बात आती है! यह तो जिसस ने मना किया। कहा, तुममें से किसी ने पाप न किये हो वो ही पत्थर मारे। तो सब चले गये अपने-अपने एड्रेस पर! अहल्या पर किसी ने पत्थर नहीं डाला। सब उदासीन हो गये! निकल गये! वो पत्थर बन गई। उस पर पत्थर मारो जैसे शैतान पर पत्थर मारते हैं। यहां पत्थर मारने की पद्धति नहीं है। यहां कृपा की रज देने की पद्धति है।

महिलादिवस तो ऐसे मनाना चाहिए। 'वन्दे वाणीविनायकौ।' तुलसी को इस रूप से देखो तो परंपरावादी फ़कीर, लकीर के फ़कीर है? ओशो ने कभी कह दिया! मैं कुबूल नहीं करूंगा। ओशो की बहुत बातें मैं आपको सुनाता हूं जो मुझे प्रिय लगी है, बहुत प्यारी है। तुलसी लकीर के फ़कीर! मैं स्वीकार नहीं कर सकता। कहने का मतलब, कोई भी पंडित होगा, ब्राह्मण होगा, शास्त्रवेत्ता होगा, कोई भी होगा; कोई भी कार्य 'स्वस्ति श्रीगणेशाय' से ही काम शुरू करेगा। तुलसी ने यह परंपरा तोड़ी। 'वन्दे वाणी', पहले सरस्वती की वंदना। साल में एक दिन मातृदिन मनाओ और तीन सौ चौसठ दिन उनको मारो, पीटो, गालियां दो, दुर्व्यवहार करो, अपमान करो!

यह कहां का न्याय? इतिहास को भी मरोड देते हैं! अल्लाह करे, हमारे पास हमारा मूल इतिहास आ जाना चाहिए। तुलसीदासजी इस पूरी परंपरा से अलग हट के पहले वाणीदेवी की वंदना करते हैं। फिर माँ भवानी की वंदना करते हैं। फिर सीताजी की वंदना करते हैं। यह पूरा क्रम गोस्वामीजी ने उठाया और सात मंत्रों में कहकर नारीशक्ति की वंदना की।

वर्णानामर्थसंघानां रसानां छन्दसामपि।
मङ्गलानां च कर्त्तारौ वन्दे वाणीविनायकौ।।

●

जो सुमिरत सिधि होइ गन नायक करिबर बदन।
करउ अनुग्रह सोइ बुद्धि रासि सुभ गुन सदन।।

पांच सोरठें में, लोकबोली में पंचदेवों की वंदना की, स्मृति की। जो शांकरमत है, आदि शंकर की धारा है उसमें गोस्वामीजी मिल जाते हैं। पहला प्रकरण गुरुवंदना का है। गुरु की वंदना कर के 'मानस' की पहली चौपाई के रूप में शुरूआत होती है।

बंदऊँ गुरु पद पदुम परागा।
सुरुचि सुबास सरस अनुरागा।।

गुरुपदरज, गुरुपद नख ज्योति उसकी वंदना की, जो अनिवार्य है। गुरु की चरणरज से नेत्रों को पवित्र करते हैं। सब से पहली वंदना पृथ्वी के देवताओं की, ब्राह्मण देवताओं की वंदना। स्वर्ग के देवताओं की वंदना पहले नहीं की। पाताल के देवता की भी वंदना पहले नहीं की। पृथ्वी के देवता जो ब्राह्मण है, जो विप्र है, जो द्विज है, पहले उनकी वंदना की। क्यों तुलसीदासजी ने पहले उनकी वंदना की? ब्राह्मण पृथ्वी के देवता है साहब! स्वर्ग के देवताओं की वंदना प्रथम नहीं की क्योंकि स्वर्ग के देवताओं में इर्ष्या है, संघर्ष है, द्वेष है। स्वर्ग के देवताओं में चतुराई है, स्वार्थ है। तुलसी ने इसलिए स्वर्ग के देवताओं की वंदना पहले नहीं की। और पाताल के देवताओं की वंदना भी पहले नहीं की क्योंकि ज़हरीले हैं। ये नागदेवता है, विषमय जीवन है उसका। अथवा तो पाताललोक असुरों का मान लो तब भी वो विषयुक्त है ही। मेरी समझ में नहीं आता कि कौन लोगों ने डाल दिया कि ब्राह्मण की आंख में ईर्ष्या होती है, ज़हर होता है! बिलकुल निराधार असत्य है। जो सही में ब्राह्मण होता है उसकी आंख में ईर्ष्या नहीं हो सकती। द्वेष हो ही नहीं सकता। लोग बातें बनाते हैं, ज़हर थोडा इस तरफ डाला। थोड़ा यहां, थोड़ा वहां डाला फिर भी ब्राह्मणों की आंख में गया! क्यों मनघडंत बातें बनाते हो? मेरे तुलसी पृथ्वी के देवता की पहली वंदना करते हैं। जिसकी आंख में ईर्ष्या हो वो ब्राह्मणनामक व्यक्ति हो सकता है, ब्राह्मण नहीं। ब्राह्मण कभी स्वार्थी नहीं हो सकता साहब! इसलिए मेरा तुलसी पहली वंदना ब्राह्मण की करता हैं। उसके बाद सज्जनों की वंदना की। फिर समग्र साधुसमाज की वंदना की। तीरथराज प्रयाग की उपमा देकर कहा, चलता-फिरता तीरथराज प्रयाग है संत समाज। फिर सब की वंदना करते-करते-

सीय राममय सब जग जानी।
करउँ प्रनाम जोरि जुग पानी।।

●

महाबीर बिनवउँ हनुमाना।
राम जासु जस आप बखाना।।

पूरी सृष्टि को ब्रह्ममय समझकर गोस्वामीजी प्रणाम करते हैं। फिर वंदना करते-करते हनुमानजी महाराज की वंदना करते हैं। आइए, एक क्षण हम भी कर लें-

मंगल-मूरति मारुत-नंदन।
सकल अमंगल मूल-निकंदन।।
पवनतनय संतन-हितकारी।
हृदय बिराजत अवध-बिहारी।।

ब्रह्मा हम सब का विधाता, हम सब का विरंचि, हम सब का फलदाता। हम सब समस्या में हो तो समस्या का जवाब देनेवाला विचारशील; कितने रोल में ब्रह्मा प्रस्तुत हुए हैं तुलसी की रामकथा में? बहुत रोल में आए हैं। ब्रह्मा हमारा सर्जक है, यह हमारा विधाता है, यह हमारा वयोवृद्ध एडवाईज़र है, निरुत्साही को उत्साहित करनेवाला है और कर्म फलदाता है। क्या-क्या नहीं है ब्रह्मा? ब्रह्मा के साथ हमारा बहुत-सा रिश्ता है साहब!

मानस-ब्रह्मा : २

जिसके जीवन में सत्य, प्रेम, करुणा दिखाई दे वह साधु

'मानस-ब्रह्मा', जिसकी संवादी चर्चा हम कर रहे हैं। ब्रह्मा के कई रूप 'मानस' में प्रस्तुत किये गये हैं। जो प्रवाह चलेगा उसमें मैं आगे बढ़ूंगा। लेकिन 'नीतिशतक' का एक श्लोक मैं लिखकर लाया हूं। मैं बोलूंगा फिर आप बोलेंगे। आप जानते हैं, भर्तृहरि ने तीन शतक लिखे। एक 'नीतिशतक', एक 'शृंगारशतक' और एक 'वैराग्यशतक।' यह 'नीतिशतक' का श्लोक है।

अज्ञः सुखमाराध्यः सुखतरमाराध्यते विशेषज्ञः।
ज्ञानलवदुर्विदग्धं ब्रह्माऽपि तं नरं न रञ्जयति।।

सीधा-सादा इसका अर्थ है, अज्ञानी को समझाना आसान है। 'सुखमाराध्यः' यानी सुख से, शांति से, सरलता से अज्ञानी को समझाया जाता है। दूसरे चरण में योगीराज भर्तृहरि कहते हैं, 'सुखतरमाराध्यते विशेषज्ञः।' थोड़ा जानता है, थोड़ी विशेष जानकारी जिसके पास है उसको समझाना ओर सरल है। लेकिन जो मान बैठा है, मैं जानकार हूं, उसको समझाना ब्रह्मा को भी कठिन है! थोड़ा एड कर दो। कुछ न जानते हुए भी दंभ करता है, मैं तो बहुत जानता हूं! उसको समझाना बहुत कठिन है यहां। भर्तृहरि कहते हैं, ब्रह्मा भी उसको नहीं समझा सकते। मानव बेचारा क्या? इस कथा का जो सब्जेक्ट है 'मानस-ब्रह्मा' और ब्रह्मा जो पृथ्वी को समझा रहे हैं और धरती तब समझ गई, अभय हो गई। हृदय में भरोसा आ गया। अज्ञानता अच्छी वस्तु है ज्ञान के दंभ से। जानकारी के प्रपंच से अज्ञानता बहुत अच्छी। हम नहीं समझ पा रहे हैं। या तो हम बिलकुल मूढ़ रहे वो बेटर है। या तो हम सत्संग कर के थोड़ा विवेक प्राप्त कर ले, अच्छा है। लेकिन कृपया, मैं और आप कुछ भी न जानते हुए ऐसा पाखंड न करे, मैं सब जानता हूं! पृथ्वी को ब्रह्मा समझा पाया। पृथ्वी कुबूल करती है, यह मेरे बस की बात नहीं।

पृथ्वी को लगा कि अब मेरे बस की बात नहीं। मैं किसी की शरण हो जाऊं और अंततोगत्वा तुरंत वो ब्रह्मा के पास जाती है और ब्रह्मा उसको समझाते हैं। मैंने कल आप से बात की थी, ब्रह्मा चार प्रकार से समझाते हैं। यद्यपि 'मानस' में लिखा नहीं है लेकिन चतुर्मुख ब्रह्मा, बुद्धपुरुष, गुरुब्रह्मा ये चार प्रकार से समझाते हैं। फिर एक बार मैं तीन जीव की श्रेणी आपके पास रखूं। विषयी को समझाने की कोशिश करे तो चार प्रकार से करनी पड़ती है और वो है साम, दाम, दंड, भेद। तो विषयी जीव, हम जैसे जीव है उसको कोई शांति से थोड़ा समझाये? कुछ पैसे देकर समझाये कि ले भाई, बात खतम कर! न माने तो दंड-भय बताये। यदि न माने तो कपट करे, भेद करे, षडयंत्र रचा जाए नेपथ्य में और कोशिश की जाए। विषयी को समझाने के तरीके हैं।

साधक को समझाने के चार तरीके हैं। उसको धर्म से समझाया जाए। दूसरा, अर्थ से समझाया जाए। अर्थ का मतलब यहां पैसा नहीं, जीवन के अर्थ से समझाया जाए। हमें मुश्लिक क्या हुई, सभी धर्मों ने हमें धर्म की बात तो बहुत सिखाई लेकिन जीवन का अर्थ नहीं सिखाया गया! पवित्र 'कुर्रान' सिखाया गया; 'भगवद्गीता' सिखाई गई; वेद, पुराण, धम्मपद, आगम, धर्म तो बहु सिखाया। जीवन का अर्थ नहीं सिखाया! इसलिए साधक सही में बेचारा समझ नहीं पाया! 'गार्डन ओफ़ इडन' बहुत पुरानी कहानी। तीन-चार दिन पहले मैं छोटी-सी किताब पढ़ रहा था, 'गार्डन ओफ़ इडन।' वहां बहुत वृक्ष है गार्डन में। गार्डन तो कहा है लेकिन वहां पूरा जंगल है। ऐसा है मूल कथा में। उसमें जीवन का अर्थ नहीं समझाया। नहीं समझाना चाहते ऐसे धार्मिक लोगों ने अपने-अपने धर्म के नाम से ऐसा कहा कि दो ही वृक्ष है। है बहुत। इतने वृक्ष हो और दो वृक्ष कहे, मान मत लेना। ऐसी जगह भरोसा भी मत करो। भरोसा बहुत कीमती है। इधर-उधर मत रखो।

कहा गया कि दो वृक्ष है। एक वृक्ष का नाम है ज्ञान, एक वृक्ष का नाम है जीवन। कहा कि ज्ञान का फल खाना। अच्छी सलाह है धर्मों की। मैं ज्ञान का फल खाऊं। मैं ज्ञानी हो जाऊं, समझदार हो जाऊं, कुशल हो जाऊं। लेकिन जीवन का फल मत खाना! क्या बेईमानी की गई हमारे साथ धर्मों के नाम पर! तुम ज्ञानी हो जाओ तो कुछ धर्मों को अच्छा लगता है लेकिन तुम जीवन के अर्थों को समझ लो तो नहीं! ज्ञान की बड़ी-बड़ी बातें करो लेकिन प्रेम करो तो गुनहगार! तो फांसी, तो गोली, तो ज़हर! हमारी तकलीफ़ यह है कि ज्ञान के फल की छूट दी गई लेकिन जीओ मत, एन्जोय मत करो! ज्ञान की चर्चा करो। लेकिन आनंद करो, मौज करो, गाओ, ऐसा नहीं! तो तुम पापी हो! धर्म ने यही काम किया! इन दोनों को कहा, ज्ञान का फल खाओ। जीवन के फल खाए तो मरे! जो सही में ज्ञान का जानकार हो जाता है उसको जीवन के फल खाने की इच्छा होती ही है। जो धर्मगुरु ने कहा, कहा! मारो गोली! ये दोनों जीवन के फल खा गए! बेचारों को पकड़ा, बेचारों को मारा और गिरा दिया! गार्डन ओफ़ इडन्स में फ़ेंक दिया! लेकिन अच्छा हुआ यह दोनों पृथ्वी पर आ गये। किसी-किसी को यह दोनों मिल गए और जिस-जिसको यह दोनों मिल गये हैं उन्होंने जीवन का रस चख लिया है।

'मानस' का विधाता क्या कहेगा? 'मानस' का ब्रह्मा क्या करता है? उन्नीस विभाग में पूरी दुनिया को उसने बांट दी। जितना स्मृति में आए सो कहूं।

भलेउ पोच सब बिधि उपजाए।
गनि गुन दोष बेद बिलगाए।।

गोस्वामीजी कहते हैं, ब्रह्मा ने अच्छे-बुरे सभी को बनाये। अच्छा भी बनाया, बुरा भी बनाया। जब ब्रह्मा की वंदना गोस्वामीजी करते हैं तब एक सोरठा लिखते हैं-

बंदउँ बिधि पद रेनु भव सागर जेहिं कीन्ह जहँ।
संत सुधा ससि धेनु प्रगटे खल बिष बारुनी।।

ब्रह्मा की स्वंतत्र वंदना है 'मानस' में। वंदना प्रकरण में तुलसी लिखते हैं, 'बंदउँ बिधि पद रेनु।' ब्रह्मा के चरण की धूल को मैं प्रणाम करता हूं, जिसने भवसागर उत्पन्न किया। और सागर है तो उसमें रत्न भी है। यहां बिलग-बिलग पांच रत्न की बात की। भवसागर निर्मित करनेवाले ब्रह्मा के चरण रेणु की मैं वंदना करता हूं। उसने सागर से क्या निर्मित किया? 'संत सुधा ससि धेनु।' संतरूपी अमृत दिया हमें। संतरूपी चंद्रमाँ दिया। और संतरूपी कामदुर्गा हमें दी। यहां संत को तीन वस्तु में बांटा है। कोई संत मिले तो समझना, साधु नहीं मिला, सुधा मिली है; अमृत मिला है। कभी भी यह मत सोचना कि यह हिन्दु साधु है, मुस्लिम साधु है, इसाई साधु है। साधु हो। एक क्षण कोई साधु हमें देख ले, कोई साधु हम से बोले, कोई साधु हमारे सामने मुस्कुराए तो व्यक्ति नहीं बोल रही है, अस्तित्व बोल रहा है।

एक बात ओर बताउं, आपके बारे में पचीस लोग बोले, ये आदमी ऐसा है! यह बहन ऐसी है! यह साधु ऐसा है! यह धार्मिक आदमी ऐसा है! कुछ भी बोले, तुम यदि

भजन में रुचि रखते हो, बंदगी में रुचि रखते हो तो जवाब मत देना। भजनानंदी उस समय चुप रहे क्योंकि पचीस को आप जवाब नहीं दोगे तब जवाब पूरा अस्तित्व देगा। व्यक्तित्व नहीं, अस्तित्व जवाब देता है। आकाशवाणी होती है। नरसिंह मेहता के लिए हुई। कोई न कोई आवाज़ आई। शंकर शिवसंकल्प करते हैं और आकाशवाणी होती है। इसका मतलब यह है, रुको, प्रतीक्षा करो, अस्तित्व को बोलने दो। हम सोने-चांदी में डूब जाए ऐसे निकम्मे लोग हैं! हमारा बोलना क्या है? भगवान शंकर को दक्ष प्रजापति ने इतनी गालियां दी। मेरा बाबा एक शब्द नहीं बोला। नहीं तो शंकर दो टूक जवाब नहीं दे देते? शंकर ने दक्ष को जवाब नहीं दिया। वहां तो जवाब नहीं दिया लेकिन घर जाकर सती को भी नहीं कहा कि तेरे बाप ने इतना अपमान किया! यह है शिवतत्त्व। जब व्यक्ति समझ के साथ चुप हो जाए तब अस्तित्व बोलता है। यह पाठ हमें सिखना पड़ेगा बाप! यह सब जीवन के फल है। कोई साधु मिल जाए मुझे और आपको।

जलालुद्दीन रूमी एक बार अपने गुरु को कहता है, गुरुदेव, आप कुछ बोलते ही नहीं! आप चुप रहते हैं! और कभी-कभी आप बोलते हैं तो बहुत बोलते हैं! मैं आपके स्वभाव से विपरीत देख रहा हूं। तब गुरु कहता है, मेरे अंदर जब शब्द बलवा करता है तब मैं बोलता हूं। मुझे शब्द कहते हैं बोल, बोल, तेरा बोलना जरूरी है तब मैं बोलता हूं। तो साधु मौन भी हो; साधु समय मिले तो मुखर भी हो। ऐसा कोई बुद्धपुरुष एक क्षण मिल जाए तो व्यक्ति नहीं मिली है, साधु नहीं मिला है, सुधा मिली है, साक्षात् अमृत प्राप्त होता है। साधु का संग दुर्लभ है।

तीन वस्तु है महासागर में। और वो तीन वस्तु संत, सुधा, शशि। साधु मिले तो समझना, सुधा का प्याला मिला। पीओ, भरपूर पीओ, इसमें छक जाओ! आदमी थोड़ी-सी शराब पी लेता है तो सुख-दु:ख से पर हो जाता है यार! दो घूंट, क्या कहते हैं उसको? पेग? दो-तीन पेग लगा देते हैं तो छक जाते हैं! जिन्होंने फ़कीर की नजरों की पी हो उसकी खुमारी तो जनम-जनम रहती है। रंगों की ब्यौछार जरूर नहीं। होली के दिन किसी फ़कीर की नज़रों से भीग जाओ यही होली है। कोई साधु की नज़रों से हम भीग जाए। साधु मिला, मिली सुधा।

दूसरा, साधु मिले तो समझना आसमान का चांद मिल गया। अब कहे, कोई साधु मिले, फ़कीर मिले तो आसमान का चांद मिल गया? चस, चांद मिल गया। किस रूप में? चंद्रमाँ प्रकाश देता है, चंद्रमाँ शीतलता देता है। क्या हमारी अनुभूति नहीं है, कोई पहुंचे हुए फ़कीर-साधु आते हैं तो हमारे जीवन में प्रकाश आता है और जीवन में एक मधुरता, एक शीतलता आती है। वो चन्द्र न मिले लेकिन कृष्णचन्द्र मिल सकता है। वो चन्द्र न भी मिले लेकिन रामचन्द्र मिल सकता है। कल का शब्द याद करो, रामचन्द्र शायद न भी मिले लेकिन नामचन्द्र मिल सकता है। साधु मिले तो सुधा मिली, साधु मिले तो समझो हमें चांद मिला।

तीसरा रूप, बहुत प्यारा। मैं अपना अनुभव कह रहा हूं। साधु मिल जाए तो समझो, कल्पतरु मिल गया। कोई ऐसा बुद्धपुरुष मिल जाए, कोई ऐसा साधुपुरुष मिल जाए तो उसकी छांव मनवांछित फल देनेवाली छांव है। सब से बड़ा फल तो साधु वो देता है कि कोई इच्छा ही न रहे। कल्पतरु तो सभी इच्छा पूरी कर देता है लेकिन इच्छा ही न बचे। कल्पतरु का आखिरी स्वाभाविक गुण है। क्या नहीं मिलता?

'मानस' के ब्रह्मा ने भवसागर निर्मित किया उसमें संतरूपी अमृत, संतरूपी चांद, संतरूपी कल्पतरु हमारे लिए प्रगट किए लेकिन विधाता की सृष्टि तो मिश्रित है इसलिए असंतरूपी विष भी निकला। साधु मिले तो समझना सुधा मिली। दुष्ट मिले तो समझना हमें विष मिला। दुष्ट का संग विष का संग है। दूसरा, वारुणी। क्षणिक नशा देनेवाली मदिरा। गोस्वामीजी कहते हैं, ब्रह्मा ने उन्नीस तत्त्वों में जगत को बना दिया। उन्नीस द्वंद्व तुलसी ने लिखे हैं; उसमें पूरी सृष्टि आ गई। अच्छा-बुरा सब ब्रह्मा ने पैदा किया।

दुख सुख पाप पुन्य दिन राती।
साधु असाधु सुजाति कुजाति।।

ब्रह्मा ने क्या बनाया? दु:ख-सुख। जोड़के हैं, ट्विन्स है। ब्रह्मा के गर्भ से एक का जन्म नहीं होता, ट्विन्स ही पैदा होते हैं। सुख है तो दु:ख है। सीधी-सी बात है। क्योंकि पैदा ही उसने दो किये हैं। सुख है तो दु:ख है। दु:ख है तो प्रतीक्षा करो, सुख आएगा क्योंकि जुड़े हुए हैं। बिलग करना असंभव है। यह जुड़वें बच्चे हैं, उसका ओपरेशन नहीं हो सकता, असंभव। तो सुख है तो दु:ख है। इसलिए मेरा नरसिंह मेहता कहता है-

सुख दु:ख मनमां न आणीए, घट साथे रे घडियां;
टाळ्यां ते कोईनां नव टळे, रघुनाथनां जडियां.

सुख-दु:ख द्वन्द्व है। लेकिन हंस चोंच डालता है तो वो दूध का-पानी का भेद कर लेता है। हमें कम से कम इतना विवेक प्राप्त हो कि हमें सुख-दु:ख हमारें जीवन में है उसकी परख हो जाए कि यह सुख है, यह दु:ख है। आपको ऐसा नहीं लगता कि कभी-कभी हम सुख को दु:ख मान लेते हैं! कभी-कभी दु:ख को सुख मान लेते हैं! इसका मतलब परख नहीं है। मतलब विवेक नहीं है। विवेक नहीं इसका मतलब हम में सत्संग नहीं है। याद रखे, पूरी कथा में ब्रह्मा का वाहन हंस है। मेरी समझ में जो आता है व्यक्ति, पदार्थ, समय, देश और अपना स्वभाव उसके अनुकूल आदमी हो जाए, सुख। मन के अनुकूल जगह मिल जाए, सुख। सुख की परिभाषा यह है; मन के अनुकूल स्थान हो, अपने मन के अनुकूल समय हो। देश-काल जिस व्यक्ति के मिलने से अनुकूल लगे वो सुख। अपने अनुकूल व्यक्ति मिल जाए तो सुख। अपने अनुकूल जगह मिल जाए तो सुख। अपने अनुकूल समय मिल जाए तो सुख। अपने अनुकूल पदार्थ मिल जाए तो सुख। इसमें पैसा भी आ जाए, प्रतिष्ठा भी आ जाए। घर की सुविधा, साधन-सामग्री अपने मन के अनुकूल हो तो सुख। अपने स्वभाववाला कोई व्यक्ति मिल जाए तो सुख। इससे जितना विपरीत मिले वो दु:ख। अपने अनुकूल व्यक्ति, जगह, पदार्थ, समय न मिले तो दु:ख।

दूसरा जुड़वां है पाप-पुण्य। एक लाख रुपये का आप दान करो तो उसमें पुण्य है लेकिन उसमें थोड़ा पाप भी है। कुछ तो आपने गड़बड़ की होगी! इसका मतलब यह नहीं कि शुद्ध न हो। लेकिन कुछ ना कुछ कहीं ना कहीं होगा क्योंकि सटा हुआ है, जुड़वा है। इसलिए शंकराचार्यजी कहते हैं, 'न पुण्यं न पापं' सिक्का ही फेंक दो। क्योंकि एक सिक्के की दो पहलू है। उसको बिलग नहीं कर सकते। तो पाप और पुण्य। किसको कहोगे पाप और पुण्य? असल में मेरी व्यासपीठ को तो कोई पाप में भी रुचि नहीं और पुण्य में भी ज्यादा रुचि नहीं। मैं उलटा सवाल करता हूं, पूजा-पाठ तीन घंटे करे उसको लाभ होता है, यह तीन घंटे जो पूजा-पाठ न करे उसको खोट क्या हुई? इसका गलत अर्थ मत करना कि पूजा-पाठ न करे, बंदगी न करे, भजन न करे। ऐसा मैं नहीं कहता लेकिन न करे तो हानि क्या हो गई? करता है उसको फायदा जरूर है। और हो कि न हो, अल्लाह जाने! लेकिन दुनिया तो धार्मिक कहेगी। हां, धार्मिक आदमी है। तीन घंटे पूजा करता है; हवन करता है; यह करता है। फायदा तो है। गुणातीत भाव से करेगा तो बहुत फायदा है साहब!

मैं तो बार-बार कहता हूं कि बंदगी को ज़िंदगी से बिलग मत करो। ज़िंदगी ही बंदगी है। लेकिन हमें ज्ञान का फल खाने की छूट है, जीवन का फल खाने की छूट नहीं! खाए और मरे! यह सब अपना धंधा चलाने के लिए ज्ञान तक ही रखते हैं, जीवन तक नहीं! तुम अधम, तुम पापी, तुम नर्क में जाओगे! तो ही तथाकथित लोगों की दुकानें चलती है! आप सोचिए, किसी के सामने देखकर एक पवित्र मुस्कुराहट करो तो पूजा नहीं हो गई?

तू निशाने बेनिशां है तू बहारे सरमदी है।
तुझे देखना इबादत तेरी याद बंदगी है।

जल्दी करो यार! बादशाह जफ़र कहते हैं, जिसकी दरगाह वहां है, जिसको सलाम कर के मैं आया परसों। कहने का मतलब, कुछ अनुकूल बातें तो सुख। कुछ अनुकूल बातें नहीं तो दु:ख। एक ही व्यक्ति एक आदमी को बहुत अच्छा लगता है और दूसरे को जरा भी नहीं! व्यक्ति का क्या दोष? आदमी वोही का वोही बेचारा! लेकिन अनुकूल-प्रतिकूल के कारण मन कहता है, यह सुख, यह दु:ख। ऐसे ही पाप-पुण्य। छोटी-सी व्याख्या मेरे युवान भाई-बहन, जिस काम से आत्मा में ग्लानि हो वो पाप है। जुआ खेलना, शराब पीना, अत्याचार, ज़ुल्म यह सब पाप गिनाये हैं। मैं उसमें न जाउं। जिस कर्म से आत्मा में ग्लानि हो वो पाप है। जो कर्म करने से अकेले-अकेले आत्मा नाच उठे, प्रसन्न रहे वो पुण्य है। किसी को पैसा दिया यह पुण्य है; रोटी दी यह पुण्य है। जो कर्म ग्लानि दे वो पाप। जो कर्म प्रसन्नता दे वो पुण्य।

तीसरा जुड़वां दिन-राती। रात और दिन जुड़े हुए हैं। विवेक से निर्णय करो तो यह दिन है, यह रात है। तो रात-दिन जुड़े हुए हैं। बिलग नहीं किया जाता। प्रकाश है वो दिन है। अंधेरा है वो रात है। प्रकाश मानी समझ। समझ हो वो दिन है, मूढ़ता हो वो रात है। मोहनिशा, समझ नहीं तो लाख दिन हो फिर भी रैन है। और समझ है तो अंधेरी रात में भी उजाला। आगे के विधाता ब्रह्मा की सृष्टि के जुड़वें साधु-असाधु। साधु कौन? अब साधु की व्याख्या-

कहि सक न सारद सेष नारद सुनत पद पंकज गहे।
अस दीनबंधु कृपाल अपने भगत गुन निज मुख कहे।।

साधु और असाधु। मिश्रित जगत है। इसमें साधु भी होते हैं, असाधु भी होते हैं। जुड़वें है। विवेक से निर्णय करे। साधु मानी कौन? विशिष्ट कपड़ें, यूनिफोर्म वो साधु? तिलक लगाया, माला रखी; या तो लूंगी पहन ली, चादर ओढ़

ली; कौन संत? फ़कीर की क्या व्याख्या? मुझे तो सीधी-सादी व्याख्या समझ में आती है। जिसका जीवन बिलकुल सादा हो वो साधु। सादा भोजन, सीधी-सादी रहन-सहन, सीधी-सादी बानी, सीधा-सादा व्यवहार सब के साथ। साधुता ओर क्या? अनंत लक्षण है साधुओं के लेकिन गणवेश में नहीं, यूनिफोर्म में नहीं। जिसमें कुछ यूनिवर्सल मूल्य हो। जिसके जीवन में हमें दिखाई दे कि सत्य है। जिसके जीवन में हमें और आपको दिखाई दे कि प्रेम है। जिसके जीवन में हमें और आपको दिखाई दे कि करुणा है, वो साधु है, बस। और यह तीन न हो तो असाधु, बस। साधु लिबास में हो लेकिन सत्य न हो, प्रेम न हो, करुणा न हो तो क्या? हमनें साधुओं को गणवेश में बांध दिया! गणवेश खराब नहीं है। जिसस क्राईस्ट कहां तिलक करते थे? पयगंबर साहब कहां भगवें कपड़ें पहनते थे? क्या साधु नहीं थे? बुद्ध कहां यज्ञ करते थे? यज्ञ का तो विरोध करते थे। बुद्ध कहां वेद की बातें करते थे? वेद की अमुक बातों के कारण वेद का विरोध किया बुद्ध ने। लेकिन क्या बुद्ध साधु नहीं है? जिसके जीवन में सत्य-प्रेम-करुणा दिखाई दे वह साधु। न दिखाई दे, असाधु।

'मानस' के ब्रह्मा ने जगत बनाया उसमें सुजाति और कुजाति बनाई। कुछ पशु, पक्षी, प्राणी, झाड-पान अच्छी जाति के, अच्छी किस्म के। कुछ पेड़-पौधें जो अच्छी किस्म के नहीं है; कुछ पशु-पक्षी अच्छी किस्म के नहीं है।

दानव देव ऊंच अरु नीचू।
अमिअ सुजीवनु माहुरु मीचू।

देव-दानव जुड़वें हैं। क्या व्याख्या करें? अपना हक्क लगे वो हक्क की मांग करे, वो हक्क ले ले नियम के अनुसार वो देव है। हक्क न लगता हो फिर भी बलात् मजबूर कर के छीन ले वो दानव। शास्त्रों में देव-दानवों की कई व्याख्या है। इनमें न जाए। सीधी-सरल व्याख्या। असुर क्या करते हैं? छीनो! ले लो! नामशेष कर दो! अपना जो दायित्व लगे ऐसे जीए वो देव है, ऐसे न जीए वो दानव। कई उंचे लोग है। उच्चता, श्रेष्ठता, निम्नता, जगत उससे जुड़ा है। फिर यह उंच-नीच वर्णों में आ गया, जातिओं में आ गया, धर्म में आ गया! खबर नहीं, कहां-कहां आ गया! लेकिन है जुड़वें।

अमृत और विष। माहुरु मानी विष। अमृत है, विष भी है; जीवन है, मृत्यु है। जुड़ा है। आये हैं। जीवंत है तो मरेंगे, जो निश्चित है। भजन करते-करते होता है कि मृत्यु का अफसोस क्यों करे? बहुत कठिन तो है साहब! दिल तो साधु के पास भी है। करुणा न हो, दिल द्रवीभूत न हो ऐसा नहीं हो सकता। लेकिन मृत्यु उत्सव है। जन्म-मृत्यु जुड़वें है। माँ-बाप से जो जन्मे हैं वो मरेंगे। सद्गुरु से जन्मा है वो अमर रहेगा। सद्गुरु से जिसने जीवन जीया। माँ-बाप से हम सब जन्मते हैं लेकिन बुद्धपुरुष से हम नया जीवन प्राप्त करते हैं। उसको मारने की कोई व्यवस्था नहीं।

माया ब्रह्म जीव जगदीसा।
लच्छि अलच्छि रंक अवनीसा।।

ओर एक जुड़वा माया-ब्रह्म। माया और ब्रह्म जुड़े हैं। ब्रह्म से माया अलग नहीं की जाती। माया से ब्रह्म को अलग नहीं किया जा सकता। शंकराचार्य ने जगत को मिथ्या कहा तो कहा लेकिन उसको जला नहीं दिया। उसी जगत में उसने शास्त्रार्थ किया। उसी जगत में वो घूमे। उसी जगत में दिग्विजय किया। लेकिन समझे हैं, यह माया है, यह ब्रह्म है। जुड़वा है उसको बिलग नहीं किया जा सकता। माया को निकालना नहीं, पतली बनाना। इतनी पतली बनाओ कि मेरा ठाकुर उसमें से दिखाई दे। परदा माया का प्रतीक है। माया के पतले परदे से हरि का दर्शन करो। माया और ब्रह्म जैसे जुड़वा है वैसे यहां जीव-जगदीश जुड़वें है। यहां जगदीश का अर्थ है शिव। जगदीश का अर्थ विष्णु भी होता है। जगदीश का श्रेष्ठतम अर्थ है महादेव। जीव और शिव बिलग नहीं है, जुड़वें है। जीव और शिव तत्त्वत: एक है।

ममैवांशो जीवलोके जीवभूत सनातन:।

भक्तिमार्ग में दो बनाये हैं। तू ठाकुर, मैं चेला। बाकी दोनों एक है। लच्छि मानी अमीर, अलच्छि मानी निर्धन। जिसके पास संपदा है वो लच्छिपति, लाखोपति, संपदावान है। दुनिया में दोनों है; गरीब भी है, तवंगर भी है। जुड़े हुए हैं। रंक यानी यहां प्रजा और अवनीसा यानी राजा। प्रजा और राजा दोनों एक ही है। कई भास्यों में रंक का अर्थ दरिद्र करते हैं। रंक मानी प्रजा। प्रजा तो रांक ज होय! पांच साल तक उसको हारना पड़ता है! राजा और प्रजा जुड़े हुए हैं, अलग नहीं है। राजा चलो अंगी है, प्रजा उसका अंग है। अंग-अंगी संबंध है।

कासी मग सुरसरि क्रमनासा।
मरु मारव महिदेव गवासा।।
सरग नरक अनुराग बिरागा।
निगमागम गुनदोष बिभागा।।

क्या जुड़वें ब्रह्मा ने बनाये हैं! काशी और मगहर। काशी में मरो तो मुक्ति। मगहर में मरो तो मिली हो वो भी जाए! कबीर थे प्रवाही परंपरा के आदमी। मुक्ति मिले ऐसी-तैसी! जीवनभर काशी में रहा, मरते समय मगहर गये! क्या फ़र्क है? जुड़े हुए हैं। गंगा में स्नान करो तो पुण्य। कर्मनाशा में करो तो ज़िंदगीभर जितना किया हो पुण्य खतम! मरु, मारव-माळवा। माळवा संपन्न माना जाता है; हरियाला प्रदेश है। और मरु रण प्रदेश। रेगिस्तान जैसा है लेकिन जुड़े हैं। पानखर भी वसंत से जुड़ी हुई है। वसंत पानखर से जुड़ी हुई है। एक का गिरना, एक का कोंपले निकलता है। एक ही वृक्ष में दोनों प्रक्रिया संग-संग होती है। आगे का जुड़वा महिदेव यानी ब्राह्मण और गवासा; और गवासा भी कसाई का धंधा करता हो लेकिन सोचे कि मेरा भले जन्म का धंधा हो लेकिन मैं गाय को नहीं काटुंगा तो ब्राह्मणता। जुड़े हुए हैं। गजब करते हैं तुलसी! दोनों ब्राह्मण और कसाई को जोड़ते हैं। तुम सोने की बिल्ली नहीं दोगे हमें दान में तो तुम्हारा सत्यानाश हो जाएगा! यह महिदेव नहीं है, यह गवासा है, यह कसाई है। फिर एक जुड़वा, स्वर्ग और नर्क। स्वर्ग-नर्क दोनों जुड़वें है। भिन्न नहीं है। विवेक हो तो जो सत्संग करते हैं वो स्वर्ग है। और दुर्जनों का संग करते हैं वो नर्क। साधु का संग स्वर्ग है, दुर्जन का संग नर्क है। वैराग्य और अनुराग जुड़े हुए हैं। जहां वैराग होगा वहां अनुराग होगा ही। सच्चा वैरागी अनुरागी होगा ही। जुड़े हुए हैं। जो प्रेमी है वो त्याग करेगा, जो त्यागी है वो प्रेम करेगा। जिस त्यागी में, वैरागी में अनुराग नहीं वो वैरागी आधा है। जो अनुरागी में वैराग नहीं है वो अनुरागी आधा है। दोनों जुड़े हुए हैं।

जड़ चेतन गुन दोषमय बिस्व कीन्ह करतार।
संत हंस गुन गहहिं पय परिहरि बारि बिकार।।

करतार यानी ब्रह्मा। करतार यानी विष्णु नहीं। हे ब्रह्मा, मैं आपको प्रणाम करता हूं। जिसने भवसागर बनाया। तो परमात्मा ब्रह्मा ने ये जो सृष्टि बनाई उसमें ज्ञान का पेड़ भी है और जीवन का भी पेड़ है। लेकिन तथाकथित धर्मवालों ने कहा, ज्ञान का फल खाओ, जीवन का फल नहीं खाओ! जैसे यह बोले, 'गार्डन ओफ इडन।' यह कहानी मैं अपने ढंग से पेश कर रहा हूं कि जिसको ज्ञान समझ में आया वो जीवन को एन्जोय करेगा। जिसको समझ नहीं आई वो जीवन का फल नहीं खाएगा। धर्मगुरुओं की बात मानो! तुम 'गीता' पढ़ो लेकिन तबला न बजाओ! तुम 'कुर्रान' पढ़ो लेकिन गायन न करो! तुम 'बाईबल' पढ़ो लेकिन नर्तन न करो! तुम 'धम्मपद' पढ़ो लेकिन मुरली मत बजाओ! सब आधी-आधी बातें आई है। यह पुरानी कथा कहती है कि जिसने ज्ञान के फल खाएं है; बाकी ज्ञान के फल खाने के बाद भी जीवन का रस न मिले तो हमें जाना पड़े इन तथाकथित धर्मों के पास! और वो अपनी दुकान चलाये कि यह करो, यह करो! धन्य है यह भारत देश, सनातन धर्म जो ज्ञान भी देता है, जीवन भी देता है।

तो उसको मृत्यु के मुख में भेजा गया! दोनों को गिराया गया! वहां सांप मिला। नागदेवता को पूछा, हम तो एन्जोय कर रहे हैं और सब धर्मवाले पीछे पड़े हैं! एन्जोय कैसे करें? तो सांप से पूछा, इस गार्डन में जो पतित कर दिये थे इन दोनों ने। तो सांप ने कहा, भले मेरे में विष हो लेकिन जीवन का रस मैं बताउं कि दुनिया कुछ भी कहे, ज्ञान का फल भी खाओ और जीवन के पेड़ का फल खाकर तुम धन्य हो जाओ। जाओ, सब को कहो। मेरी कोई बात नहीं मानेंगे। तुम समझाओ, मेरे से तो लोग भागेंगे! सांप है हमारा मार्गदर्शक। वो ही सांप मेरे महादेव के गले में है। वो शंकर के कंठ में बैठा हुआ एक सांप हमें जीवन का रहस्य सिखाता है। जीवन यह है। किसको समझाये? अज्ञानी को समझाया जाता है। भर्तृहरि कहता है, विशेषज्ञ को ज्यादा

जिसके जीवन में हमें दिखाई दे कि सत्य है। जिसके जीवन में हमें दिखाई दे कि प्रेम है। जिसके जीवन में हमें दिखाई दे कि करुणा है, वो साधु है। और यह तीन न हो तो असाधु। साधु लिबास में हो लेकिन सत्य न हो, प्रेम न हो, करुणा न हो तो क्या? हमनें साधुओं को गणवेश में बांध दिया! गणवेश खराब नहीं है। जिसस क्राईस्ट कहां तिलक करते थे? पयगंबरसाहब कहां भगवें कपड़ें पहनते थे? क्या साधु नहीं थे? बुद्ध कहां यज्ञ करते थे? यज्ञ का तो विरोध करते थे। लेकिन क्या बुद्ध साधु नहीं है? जिसके जीवन में सत्य-प्रेम-करुणा दिखाई दे वह साधु। न दिखाई दे, वह असाधु।

सरलता से समझाया जाता है। लेकिन कुछ भी समझता नहीं फिर भी अपने आप को पंडित कहलाता है, ब्रह्मा भी उसको नहीं समझा सकते! कल हमनें जिसकी चर्चा की। विषयी को साम, दाम, दंड, भेद चार प्रकार से समझाया जाता है। साधक को धर्म की बात करते हैं, जीवन के अर्थ की बात नहीं करते। साधक को जीवन का अर्थ भी बताना चाहिए कि तू ज्ञान का फल खा और जीवन का अर्थ भी खा। लेकिन वहां रोका गया! साधक को धर्म से समझाया सकता है। साधक को जीवन का अर्थ बताकर गुरु समझा देते हैं। साधक को काम की मूल उर्जा का आशय समझाकर सावधान किया जाता है। वह उर्जा है। उसको गालियां न दी जाए; उसको समझाया जाए।

चतुर्मुख ब्रह्मा अथवा तो चतुर्मुख बुद्धपुरुष पृथ्वी को समझाते हैं तब चार रीत बिलग-बिलग है। सद्गुरु अथवा बुद्धपुरुष हमें ब्रह्मा का रूप लेकर चार पद्धति से समझाते हैं। पहली पद्धति है त्याग। हमें त्याग से समझाया जाए। त्याग यानी तुम्हें कपड़े फ़िंकवा दे, आभूषण फ़िंकवा दे, ऐसे नहीं। त्याग मानी संग्रहवृत्ति से मुक्त करना। मेरे भाई-बहन, त्याग मानी लेट गो। जाने दो यार! इसमें से फिर अभयता आएगी, भरोसा आएगा। हम पकड़ रखते हैं। घटना घट गई। जाने दो। तुम्हें दो शब्द कह दिये; किसी ने गालियां दी; जाने दो। दूसरी समझाने की पद्धति है विनय। कभी-कभी गुरु शिष्य को विनय करता है, बाप! बोल तू, दंड मैं भोगूंगा। तुझे पता चलेगा कि मेरे गुरु मेरे कर्म का फल भोग रहा है। तुझे बहुत दु:ख होगा और तेरी पीड़ा मैं सहन नहीं कर पाउंगा। यह विवेक है। पूरा बुद्धपुरुष वो है जो अपराधी को अपने अपराध के फल से बचाता है। कर्म सिद्धांत किसी को नहीं छोड़ता। और गुरु भोग दे। यह है विनय।

बुद्धपुरुष तीसरी बात समझाने के लिए शास्त्र आधार लेते हैं। गुरु का यह भी लक्षण रहता है। पिटीपिटाई परंपरा में नहीं रहते फिर भी शास्त्र का आधार तो लेना पड़ता है। शास्त्र का आदर तो होना चाहिए। जिसका 'भगवद्गीता' इष्टग्रंथ है, तो 'भगवद्गीता' का व्याख्यान करते-करते 'रामचरितमानस' की चौपाई नहीं गाओगे? 'गीता' पर प्रवचन करते हैं, 'विनयपत्रिका' पर भी बोलते हैं। शिव का भी दृष्टांत। यह संदर्भ लेते हैं। मूल को केन्द्र में रखो। तो शास्त्र का आधार लेना पड़ता है। शास्त्र की बड़ी महिमा है। 'मानस' की बात करते-करते मैंने जो सुना हो, थोडा पढ़ा हो वो 'भागवत' की बात करता हूं तो आप कितने प्रसन्न होते हैं! शास्त्र एक बहुत बड़ा आधार है।

सद्गुरु ब्रह्मा चौथी पद्धति से समझाते हैं वो है प्रेम। वो बोलेंगे नहीं, आंखों से प्रेम, बानी से प्रेम, केवल प्रेम से समझाते हैं। मुझे लगता है, श्रेष्ठ पद्धति प्रेम है। प्रेम के बिना विनय कचरा है। प्रेम के बिना शास्त्र की बात करो, दुनिया को तो अच्छा लगेगा लेकिन तुम कोरे रह जाओगे। प्रेम के बिना आप त्याग की बात करो तो सिद्धांत होगा, अनुभव नहीं। महिमा अनुभव की है। तो मुझे लगता है, तलगाजरडा को लगता है, यहां ब्रह्मा ने पृथ्वी को त्याग से समझाया, विनय से समझाया, प्रेम से समझाया, शास्त्र से समझाया।

थोड़ा कथा का क्रम उठाउं। वंदना प्रकरण में गोस्वामीजी नामचंद्र की वंदना करते हैं। नाम महाराज की महिमा गाई गई। मैं पूरी दुनिया को कहता रहता हूं, जो तुलसी ने कहा, जो शास्त्रों ने कहा, जो महापुरुषों ने कहा कि नाम समान कोई नहीं है। क्योंकि कलियुग है। हम ओर कर भी क्या सकते हैं? नाम का आश्रय लें। आपके पास कोई भी साधन हो, करो जरूर। लेकिन नाम के समान कोई नहीं। नाम साधन थोड़ा है? नाम साध्य है। आखिर लक्ष्य है नाम। कोई भी नाम। राम, कृष्ण, शिव, अल्लाह, दुर्गा जो भी नाम लो। जो आपका इष्ट हो उसका नाम लो। भाव से, अभाव से, अनख से, आलस से कैसे भी स्थिति में नाम लो। दादा कहा करते थे, बेटा, परमात्मा का नाम उदार है। इसका मतलब रघुपति के नाम की चर्चा है। रघुपति का नाम उदार है, ऐसा लिखा है। यानी राम का नाम उदार है। राम का नाम इतना उदार है कि आप यदि कोई दूसरा नाम लो तो भी राम का नाम बंधन नहीं करता। इतना उदार है। हमारे इष्ट का नाम इतना संकीर्ण है कि दूसरे का नाम लेना हम मना फरमाते हैं? कई लोग कहते हैं, तुम यह जपो। इसका मतलब तुमने तुम्हारे इष्ट के नाम को उदार नहीं बनने दिया! मेरा तुलसी कहता है कि मेरा रामनाम इतना उदार कि मुझे 'अल्लाह' बोलने की भी छूट देता है। व्यासपीठ पर बैठा हूं, रामनाम इतना उदार है कि मुझे जिसस की बातें करने की छूट देता है। रामनाम इतना उदार है कि मुझे तथागत की बातें करने की छूट देता है। रामनाम उदार है। रामनाम पावन नहीं साहब! अति पावन है। पावन से पावन कोई नाम है तो राघव का नाम है, इस सत्य को कोई माँ का लाल ठुकरा नहीं सकता।

एकमात्र बुद्धपुरुष का आश्रय आदमी को निजतंत्र-स्वतंत्र रखता है

'मानस-ब्रह्मा',जिसकी हम गुरुकृपा से कुछ सात्त्विक-तात्त्विक चर्चा कर रहे हैं। गोस्वामीजी ने 'रामचरित मानस' का आरंभ करते हुए सबसे पहले 'ब्रह्मा' का नाम लिया, 'बालकांड' के मंगलाचरण में -

यन्मायावशवर्त्ति विश्वमखिलं ब्रह्मादिदेवासुरा।

ब्रह्मा सर्जन के देवता है; विष्णु जीवन के देवता; महेश मरण के देवता। जब हम 'गुरुर्ब्रह्मा', 'विष्णु', 'महेश' कहते हैं तब ऐसा त्रिमूर्ति गुरु तीनों काम करता है। अपने आश्रित के अंत:करण में एक गुणातीत स्थिति का सर्जन करता है। अपने आश्रित को जीवन प्रदान करता है और अपने आश्रित को मरण की महिमा भी समझाता है। फिर भी एक परमतत्त्व है, उसमें कोई गुण नहीं है। फिर भी कुछ करना है, कुछ विसर्जित करना है, उसके लिए तो गुणाश्रय करना पड़ता है। इसीलिए जिसे हम परमतत्त्व कहते हैं। यद्यपि भगवान राम के चरणों में जिसे पूर्ण शरणागति है, वो उसको 'राम' कहते हैं; कृष्ण शरणागत उसको 'कृष्ण' कहते हैं; जो जिसके हो। ईस्लाम उसको 'अल्लाह', रेहमत करनेवाला कहते हैं, 'रहमान' कहते हैं। लेकिन ये जो परमतत्त्व है, वो जब कुछ करता है, पालता है, विसर्जित करता है तो उसे गुणाश्रय करना पड़ता है। गुणों का आश्रय जब हम करते हैं तब आश्रय स्वतंत्र कहां है? अब आपके मन में प्रश्न उठेगा।

कथा तीन प्रकार से सुनिए। भूमिका तो कायम मेरी ये रही कि कथा प्रसन्न चित्त से सुनिए; प्रशांत चित्त भी मैं बोलता हूं। लेकिन प्रशांत चित्त न भी हो तो लेकिन कम से कम प्रसन्न चित्त होकर सुनो। कथा ताज़े-तरोज़े होकर गुलाब के फूल की तरह सुनिए। गुलाब का फूल खिलता है, उस पर ओसबिंदु गिरता है, गुलाब उसको रख नहीं पाता। एक छोटा-सा हवा का झोंका आते ही गुलाब के ताज़े-तरोज़े बिल्कुल अनटच पर्णों से ओस गिर जाता है। कथा गुलाब के ताज़े फूल की तरह सुनो। और उसमें कोई सूत्र का ओस कण आ जाए, भले गिर जाए लेकिन तुम्हारे चित्त को स्नान कराके जाएगा; प्रसन्नता प्रदान करके जाएगा। पांच मिनट, दस मिनट, तीन घंटे, तीन मिनट कथा सुनो। एक कथा, दो कथा, एक साल, तीन साल; संख्या का कोई वो नहीं। लेकिन व्यासपीठ वैसे कोई मांग नहीं करती लेकिन ताज़ेतरोज़े होकर सुनो। दफ्तरों में, मिटिंग में फ्रेश होकर जाते हो, कथा में मुरझाए हुए मत आओ!

आदमी तीन प्रकार से कथा सुनते हैं। एक, आदमी कुतूहल से सुनता है। कुतूहल से सुननेवाले का देह ही कथा में होता है, मन नहीं। मन कई प्रकार के विचार करता है। ये आलोचना नहीं है, हमारी स्थिति का दर्शन है। मैं और आप ऐसे हैं। सती कथा सुनने कुतूहल से गई, क्या सुनाएगा कुंभज? वो बैठी लेकिन सुना नहीं। दूसरा, जिज्ञासा से कथा सुनना। जिज्ञासा से कथा सुनता है उसका शरीर भी कथा में होता है और कुछ-कुछ मन भी कथा में होता है कि कहीं कोई बात छूट न जाए। एक प्रकार ये भी माना गया कि कथा सुनने में न कुतूहल है, न जिज्ञासा है; केवल मुमुक्षुभाव है। वो देह तो होता है कथा में, मन भी कथा में है लेकिन वो मन को नहीं देखता, देह की भी परवाह नही करता। ऐसा श्रोता प्राण से कथा सुनता है।

यही तीन लक्षण वक्ता को भी लगा दो। कोई वक्ता सोचे; कथा करके देखें; जमावट होती है या नहीं? काली शोल तो ले आओ, धोली दाढ़ी कहां से लाओगे? एक श्रोता ने आज पूछा है, 'बापू, आप सफेद वस्त्र पहनते हैं और काली शोल रखते हो। ब्लेक एन्ड व्हाईट क्यों?' पहले मैंने भी कलरवाले कपड़ें पहने हैं। मूल तो सफेद और काला रंग जीवन से जुड़ा रहा। बाप! पिताजी ने एक बार दीपावलि के समय पे कहा कि बेटा, तू कुछ ग्रे कलर का शूट सीला। सगवड तो नहीं थी पर पिता का भाव था। तो शूट बनवाया भी, लेकिन मेरी आत्मा तो रंगों में नहीं रही; बेरंग रही। बेरंग याने दोरंग नहीं। दोरंगों के साथ तो जीना भी मत! जिसके जीवन में चढ़े न दूजो रंग वो बेरंग है।

मैं उस समय सर्विस करता था। ये शूट पहनकर याने टाई नहीं थी लेकिन कोट पहनकर, इनशर्ट करके नौकरी पर गया। तो कांतिबापा हमारी स्कूल के आचार्य थे, उन्होंने मुझे टाना मारा, आज-कल प्रायमरी टीचर वो भी कायमी नहीं हुए हैं, वो भी प्रोफेसर के लिबास में आते हैं! मेरे मन में ये नहीं बसता था तो मेंने छोड़ दिया। एक बार सावित्री माँ को पूछा, 'माँ, मेरी रुचि इन रंगों में नहीं है, तो मैं सफेद ज्यादा पहनूं?' तो माँ ने कहा, 'बेटा, तेरे शरीर को और मन को सफेद और काला ही अनुकूल पड़ेगा।' जनम देती है उसको पता होता है कि मैंने जिस चेतना को जनम दिया उसको कौन रंग रास आएगा? तो उस समय तो मैंने कुछ नहीं कहा, फिर भी माँ समझ गई कि सफेद और काला क्यों पसंद है? दादा की धोती जब जीर्ण हो जाती थी उसमें से गुदड़ी बनाकर उसमें माँ मुझे सुलाती थी और अमृत माँ जो काली साडी पहनती थी, उस काली साडी को इकठ्ठे करके उसमें से ओढ़ने की गुदड़ी बनाकर माँ मुझे ओढ़ाती थी। तब से मुझे लगता है, मेरे देह को नहीं, मेरी आत्मा को ये रंग लग गया है।

तो ये बातें वक्ता को भी लागू होती है कि कुतूहल से जैसे सुनना अच्छा है, वैसे कुतूहल से कथा गाना अच्छा है। कुतूहल से कथा करते-करते लोग जिज्ञासु बन गए हैं। और लगता है, कथा करते-करते मेरा भी ऐसे गहराई में गोता लग जाए। और फिर हो सकता है कि धीरे-धीरे प्राण लग जाए। तो आप कुतूहल से भी सुने, जिज्ञासा से भी सुने। इसका प्रमाण है 'श्रीमद्भागवत।' कुछ लोग शुकदेवजी के पास कथा की मांग करने आए तब वो लोग तो स्वार्थी है, कुतूहलवश है कि कथा का अमृत ले लिया जाए; कथा कुतूहल से मिल जाए। लेकिन शुक के सामने बैठे जो शौनकादि मुनिगण है, वो जिज्ञासा के श्रोता है। ये जो परस्पर संवाद है वो जिज्ञासा का है, ऐसा मेरी व्यासपीठ को लगता है। लेकिन पूरे प्राणों से कथा सुनी शुकदेवजी ने क्योंकि वो मुमुक्षुभाव से कथा सुन रहा है।

हमारी चर्चा चल रही है कि परमात्मा की सर्जनशक्ति, पालनशक्ति और विसर्जनशक्ति इसके लिए गुण का आश्रय करना पड़ता है। और आश्रय परवशता तो है ही। एकमात्र सद्गुरु का आश्रय जीव को मुक्त रखता है। धन का आश्रय, प्रतिष्ठा का आश्रय, रिश्ते-नाते का आश्रय, दुनिया की कोई भी चीज़ का आश्रय आदमी को पराधीन किए बिना रहता नहीं। एकमात्र दृढ़ाश्रय है, वो है किसी पहुंचे हुए फ़कीर, बुद्धपुरुष के चरणों का आश्रय।

एक बार निज़ामुद्दीन ओलिया ने अमीर खुशरो को पूछा था कि बेटा, मैं तो मेरी आंखों से देख रहा हूं कि तेरे में क्या-क्या घटना घट रही है? लेकिन तू बता, तू तो कवि है, दार्शनिक है। तो अमीर को निज़ाम ने पूछा कि तुझे महसूस होता है कि तुझमें क्या हो रहा है? कल जैसे किसी ने पूछा कि बुद्धपुरुष को पहचाने कैसे? तो ये तो बड़ा मुश्किल है। ब्रह्म को पहचानना बड़ा आसान है, बुद्धपुरुष को पहचानना कठिन है। वो स्वयं जनाए तो हम जान सकते हैं, लेकिन ये ब्रह्म के बारे में है, बुद्धपुरुष के बारे में नहीं। 'सो जानहि जेहि देहु जनाई।' उसमें ब्रह्म और बुद्धपुरुष में तफ़ावत है, भेद है। ब्रह्म को वो ही जान सकता है, जिसको वो जनाना चाहे। और वहां फलश्रुति है, 'जानत तुम्हहि तुम्हहि होई जाई।' तो हम वो हो जाते हैं। बुद्धपुरुष में ऐसा नहीं होता। बुद्धपुरुष लाख जनाए तो भी हम बुद्धपुरुष नहीं हो पाते, क्योंकि वो लाख जनाए, सब बेपरदा कर दे तो भी उसे जानने में हम कुछ न कुछ चूक कर देते हैं और हम कभी वो नहीं हो सकते। और इसीमें ही आनंद है। अमीर यदि निज़ाम हो जाए इसमें फायदा नहीं। खुशरो उसमें ही खुश रह सकता है कि निज़ाम और खुशरो में द्वैत बना रहे। कुछ बातों में अंतर जरूरी है। त्रापजकर दादा ने कहा था, 'मजा छे दूर रहेवामां।'

मुझे पूछा कि 'बुद्धपुरुष को कैसे पहचाने?' तो मैंने कहा, एक बात भरोसा करने जैसी है कि बुद्धपुरुष हमको पहचानता है। और उसको जानकर हमें क्या करना है? वो हमें जाने ये ही पर्याप्त है। वो जानता होगा तभी तो हमसे प्यार करता होगा। अपने को तो इतना ही जानना कि 'हे गुरु! मैं तुझे अपना जानूं।' 'अपना जानूं' का मतलब ये नहीं कि मैं तेरे पर कब्जा करूं। तू गंगाजल है। किसी की मुठ्ठी में रहनेवाला नहीं है। तू पी ले ये तेरा भाग्य है। तू गिरफ्तार करे तो चुक गया! हवा की लहर है गुरु; सूरज की रोशनी है गुरु; एक ताज़े खिले हुए फूल की खुश्बू है गुरु, जिसको हम अपनी बाहों में नहीं ले सकते, वो सबकी होती है।

तो अमीर ने प्रश्न का उत्तर दिया कि मुझे ये महसूस हो रहा कि पहले मुझे लगता था, मैं इतना बड़ा धनी, इतना बड़ा राजनीतिज्ञ, कवि। अमीर बहुत कुछ है, कोई सामान्य आदमी नहीं कि ऐर-गैर था और निज़ाम के पास चला गया! कई संप्रदायों में, कई धर्मों में जिसको कोई काम नहीं था वो घूस गए हैं! इसका वर्चस्व समाज पे होने लगा! जब निकम्मे लोग के हाथों में कुछ क्षेत्र आये तो समाज को बहुत सहना पड़ता है। इसमें धर्म, राजसत्ता, सामाजिक क्षेत्र भी आ जाता है। छोटे-छोटे नशे में झूम रहे हैं लोग! दुनिया उसके हाथों में है ये दुर्भाग्य है। कुछ-कुछ होते हैं माँ के लाल ये ओर बात है। ऐसे कुछ लोगों के हाथों में धर्म याने जीवन आ गया है, जिसको कुछ पता ही नहीं! विदेशों में भी कई परंपराएं गई और बहुत फैल गई! उसमें शरीक होनेवाले लोगों को देखिए तो किसीको रोटी का सवाल था वो मुंड मुंडाए भए संन्यासी! धर्म जैसी किंमती चीज ऐसे लोगों के हाथों में जाए ये खतरा है। धर्म तो पिघला हुआ सीसा है।

अमीर बहुत कुछ था। लेकिन उसने बड़ी प्यारी बात कही, मुझ में परिवर्तन ऐसा महसूस हो रहा है कि मैं बहुत बड़ाई कर चुका हूं पूर्वजीवन में, उसे मेरी बड़ाई मत समझियेगा। मुझे लग रहा है, मेरा अहम् विसर्जित हो रहा है। हर आश्रय में बंधन है। और यदि आप कुछ सबल है, आश्रित है तो भी आप बलवान होने के कारण अनदेखा कर देते हैं, तो आप फिर अंततोगत्वा अहम् के आधीन हो जाते हैं। मेरी समझ में एकमात्र आश्रय 'भरोसो दृढ़ इन चरनन केरो।' 'दृढ़ाश्रय', जो महाप्रभुजी कहते हैं। वहां परम स्वतंत्रता है। ईश्वर से भी जिसका दर्जा ऊंचा माना जाता है अध्यात्मजगत में वो गुरु और आश्रित की पावनी परंपरा में एकमात्र बुद्धपुरुष का आश्रय आदमी को निजतंत्र-स्वतंत्र रखता है। बाकी हर आश्रय पराधीन करता है।

किसी खुदा की दखल हो ज़िंदगी के लिए।
खयाले यार ही काफ़ी है मेरी बंदगी के लिए।
ये वो अदा है जो बाज़ार में नहीं मिलती।
यहां तो लोग तरसते हैं तेरी सादगी के लिए।

तो परवशता हो तो केवल बुद्धपुरुष की हो। न दौलत की, न प्रतिष्ठा की, न जीवन की, न सौंदर्य की, न रिश्ते-नाते की। व्यवहार विवेक से निभाया जाए। बाकी आधीनता कहीं भी होगी, परवशता होगी। गुणाश्रय बंधन है। गुण का अर्थ ही रस्सी होता है।

याद रखना, लोग कहते हैं ना, 'कर्म का सिद्धांत', जो कर्म करे उसको फल मिले। ऐसा नहीं है। छोटा-सा एक अंतर भी है। कर्म करता कोई ओर है और भोगना किसी ओर को पड़ता है। इसमें 'चाणक्यनीति' का चाणक्य कहता है, चार लोगों को जिसके साथ जुड़े हैं, उसके कर्मो का दंड भोगना पड़ता है। एक, स्त्री। स्त्री भूल करे तो उसके कर्म का फल उसके पति को भोगना पड़ता है क्योंकि दोनों जुड़े हुए हैं, एक है। एक हाथ में आपकी पीड़ा है, तो पूरे शरीर को सहन करना पड़ता है। एक अंग को जख्म हुआ उसकी सजा पूरा शरीर भोगता है। चाणक्य मुझे ठीक लगता है। थोड़े कर्म के सिद्धांत को इधर-उधर करके ये आदमी ने प्यारी बात कही। मैं सहमत होता हूं।

दूसरा, प्रजा का अपराध राजा को भोगना पड़ता है। प्रजा को अपने बच्चे समझकर जो निभाता है, पालता है वो राष्ट्र की प्रजा चूक करती है, तो दंड राजा को भोगना पड़ता है। तीसरा, राजा पाप करे तो उसके उपुरोहित को, कुलगुरु को भोगना पड़ता है। रामकाल में 'पुरोहित' का अर्थ होता था प्रधानमंत्री। दशरथ के राज्य में वशिष्ठजी पुरोहित थे याने उसके प्रधानमंडल के वो मुख्य थे। लेकिन वशिष्ठ ब्रह्मा का पुत्र है। वशिष्ठ ने मना किया कि मैं किसी परिवार का उपुरोहित कर्म करने नहीं जाऊंगा। तब ब्रह्मा ने कहा, मैं तुझे रघुकुल का उपुरोहित कर्म सौंप रहा हूं, वहां ब्रह्मा नरभूप बनकर आएगा और तुझे ब्रह्म के दर्शन हो जाएंगे। तब से वो उपुरोहित थे। 'उपरोहित्य कर्म अति मंदा।' 'मानस' में लिखा है। वशिष्ठ ने बलवा बोला था पितामह ब्रह्मा के सामने कि मैं किसीका उपुरोहित्य कर्म करने नहीं जाऊंगा, आपका बेटा हूं। चौथा, शिष्य अपराध करे तो गुरु को भोगना पड़ता है। शिष्य का अविनय, शिष्य का द्वेष, शिष्य एक-दूसरे की इर्ष्या करे, दंड भोगना होता है, जिसने हमको आश्रय दिया हो। 'गुरुभोक्ता।'

एकमात्र बुद्धपुरुष का आश्रय ही है जो हमें स्वतंत्र रखता है। गुण आधारित जीवन बांधता ही है। चाहे सर्जक हो, पालक हो, चाहे संहारक हो। इसीलिए तुलसी ने 'बालकांड' के मंगलाचरण में ब्रह्मा का नाम पहली बार लिया तो ये लिखा। ये जो प्रपंच है जगत। इस माया के आधीन पूरा विश्व है। ये विश्व जिसने बनाया है, ब्रह्मादि देव गुण आधारित होने के कारण माया के आश्रित ये भी है। तो यहां से ब्रह्मा नाम का पुण्यस्मरण है। करीब सत्ताईस बार 'ब्रह्मा' शब्द है 'मानस' में।

तब ब्रह्माँ धरनिहि समुझावा।
अभय भई भरोस जियँ आवा।।

तो बाप! बुद्धपुरुष हमारा सर्जक है। हम पत्थर की तरह थे। मैं अपने बारे में सोचूं तो हम क्या थे? गुरु के हाथ में आ जाते हैं तो हमारा सर्जन कर देता है।

बनके पत्थर हम पड़े थे, सुनी-सुनी राह पे।
जी उठे हम जब से तेरी बांह आई बांह में।

चरवाहे के पास हीरा आ जाए तो घेंटे के डोक में बांध दे। हीरा यदि नासमझ के पास जाए तो ऐसा होता है। लेकिन बैरखे का पारा यदि बुद्धपुरुष से मिल जाए तो कल्पतरु हो जाता है। अपने हाथ में बैरखा हो तो उसे कल्पतरु समझना। फेरो न फेरो, माला रखो न रखो, लेकिन तस्बी तकदीर बदल देती है। 'मेटत कठिन अंक भुआला।' कोई भी नाम लो लेकिन तुलसी पे जितना रामनाम जमता है, इतना और कोई नहीं जमता। रुद्राक्ष पर और स्फटिक पर भी लेने की मैंने छूट दी है, लेकिन तुलसी और राम का जो नाता है, पौधे के रूप में और मेरे गोस्वामीजी के रूप में भी वो गज़ब है! पिकासो के हाथ में केनवास, रंग और पींछी दे दो, तो जगप्रसिद्ध मोनालिसा बना देता है। टागोर के हाथ में कलम दे दो, 'सत्यं शिवं सुन्दरं' बना देते हैं। माइकल के हाथ में चट्टान दे दो तो मधर मेरी का शिल्प बना देता है।

मुझे शूली पे चढ़ाने की क्या जरूरत?
मेरे हाथ से कलम ले लो मर जाऊंगा।

बादशाह ज़फ़र ने कहा है। आज उनकी कुछ कविताएं भेजी है मुझे।

कोई बुद्धपुरुष अपना बना ले कि 'तुलसीदास मेरो', तो क्या घटना घट जाती है! ब्रह्मा पृथ्वी को समझा रहे हैं -

तब ब्रह्माँ धरनिहि समुझावा।
अभय भई भरोस जियँ आवा।।
जो कछु आयसु ब्रह्माँ दीन्हा।
हरषे देव बिलंब न कीन्हा।।

बाप! ब्रह्मा ने 'मानस' में धरती को समझाया। 'किष्किन्धाकांड' के अंत में हनुमानजी को समझाएंगे जामवंत के रूप में। और समझाने की उसकी पद्धति चार प्रकार की रही क्योंकि वो चतुर्मुख है। ब्रह्मा का जन्म 'भागवत' और पुराण के अनुसार भगवान नारायण की नाभि से हुआ। उसे 'नाभिज' भी कहते हैं। 'भागवत' में है, नारायण की नाभि से निकले तो वो कमल की नाल में चढ़े, हजारों कल्पों तक ऊपर-नीचे चढ़ते ही रहे। ब्रह्मा को मूल में पांच मस्तक थे; वो भी पंचानन थे लेकिन वो अपनी रचना पर एक बार मोहित हो गए और उसके पीछे दौड़ पड़े तो ये अविनय देखकर भगवान महादेव को ठीक नहीं लगा और उन्होंने ब्रह्मा का एक मस्तक काटा। 'महिम्नस्तोत्र' में भी उसका उल्लेख है। तबसे पितामह चतुर्मुख हो गए। तो ब्रह्मा के चार मानसपुत्र जो एक ही आशा में रहते हैं। आशा के दो अर्थ है। एक, दिशा; दिशा ही जिसके वस्त्र है। दूसरा, इच्छा; एक ही इच्छा है। हम चार हो और कोई पांचवां आ जाए तो वो हमें कथा सुनाए और हम चार ही हो तो हममें से एक सुनाए, तीन सुने। ये ही उनका व्यसन है। 'रामचरित' सुनना, गाना। वो अपने बूढ़े बाबा ब्रह्मा के चरणों में बैठे हैं मानसपुत्र होने के नाते। सनतकुमार निम्बार्की है। बहुत अच्छा मिला है हमको। कोई त्रुटि नहीं है। बस, निभ जाए तो ठीक है। हम कितना आनंद महसूस करते हैं कि भगवान कृष्ण का अच्युत गोत्र हमारा गोत्र है। कृष्ण का 'सामवेद' ये हमारा वेद है। कृष्ण की जो देवी है, पटरानी रुकमिणी वो हमारी कुलदेवी मानी जाती है। हमारी परिक्रमा गोवर्धन की है। मथुरा हमारी धर्मशाला है। गोपाल गायत्री हमारी गायत्री है।

सनतकुमार कहते हैं, हम तो किसीको जानते नहीं। आपको कुछ पूछना चाहते हैं। आप हमें समजाइए। हमारे लिए तो आपकी कृपा है। लेकिन अब कलियुग आ रहा है तो कलियुग के जीवों के लिए एक साधन हमें समझा दो, जो आपके द्वारा सरल साधन बताया हो। कभी देवर्षि नारद आयेंगे तो हम उसको कह देंगे और देवर्षि की गति सर्वत्र होने के कारण वो धरती पे जाकर कलियुग के प्रारंभ में कलिजीव को कहे कि तुम्हारे लिए ये साधन है। उसी समय ब्रह्मा चार साधन कहते हैं। कलियुग के जीव कुछ न करे, कीर्तन करे। सनतकुमार ने पूछा, किसका कीर्तन करें? चार मुखवाले ब्रह्मा ने कहा, चार वस्तु का कीर्तन करें। उसमें चौथे कीर्तन को ब्रह्मा ने सर्वश्रेष्ठ कहा। आगे के तीन न कर पाए तो भी चौथा न भूले।

एक, गुण-संकीर्तन। मेरे भाई-बहन, मैं यही कहूं, गुण-संकीर्तन करो। जो परमतत्त्व है उसके गुणों का संकीर्तन करो। राम प्रभु के अनंत गुण है। मैं और आप हमारा जो इष्ट है, उनके अनंत गुणों को हमारी क्षमता के अनुसार गुनगुनाए। अब कोई कहे कि हमसे गुणसंकीर्तन नहीं हो सकता, तो क्या करें? तो फिर दूसरा संकीर्तन कहा, कर्म-संकीर्तन। जो परमतत्त्व है, उनकी लीला का संकीर्तन करे। कृष्णलीला, रामलीला, शिवचरित्र, भुशुंडिचरित्र, महापुरुषों के चरित्र का संकीर्तन करो। भगवान के चरित्र का, भक्त के चरित्र का, विष्णु का और वैष्णव का भी चरित्रवर्णन से कर्म-संकीर्तन करें। तीसरा, भाव-संकीर्तन। न गाना, न वक्तव्य देना, कुछ नहीं। केवल भाव-संकीर्तन। परमात्मा के उदार स्वभाव को, गुरु के उदार स्वभाव को याद करके आंख में आंसू आ जाए तो शुरू हो गया भाव-संकीर्तन। अपने प्रियजन की स्मृति भाव-संकीर्तन है। फिर वो आए न आए, छोड़ो, उनकी स्मृति तो आई।

लो आ गई उनकी याद, वो नहीं आए।

चौथा, नाम-संकीर्तन। ब्रह्माजी ने कहा, कलियुग के जीवों के लिए मेरा संदेश है कि नाम-संकीर्तन करो। जो नाम में रुचि हो उस नाम का संकीर्तन। कल कुछ चिठ्ठियां मुझे मिली, पूछा, हम बैरखा रखते हैं, कब तक घुमाते रहे? तुम्हें जो देखना है वो चैनल न आए तब तक घुमाते रहो! क्योंकि दुनिया में बहुत चैनल चलती है! जब तक हमारे भीतर की चैनल न मिल जाए तब तक घुमाते रहो। मेरे त्रिभुवनेश्वर कहा करते थे, जब नाममहिमा की चौपाईयां आती थी तब कहते थे, नाम निरंतर जपने से बेटा, पहले आस्था आती है, फिर श्रद्धा आती है, फिर भरोसा आता है।

कल भी किसी ने पूछा था कि 'बापू, भगवान की कृपा से भरोसा आता है?' भगवान की कृपा से भरोसा आता है, ये बात ठीक नहीं। इसका मतलब आप प्रतीक्षा कर रहे हैं कि जब वो कृपा करे तब भरोसा आए। कृपा तो हो चुकी है। कृपा न होती तो जुवानी में कथा करवाना, सुनना, गाना ये तुममें क्यों आता? ईश्वर कुछ नहीं करता कृपा के सिवा। कृपा की प्रतीक्षा नहीं, समीक्षा की जाए। हमारे शुक्रताल के दंडी स्वामी के पास मैं जब भी जाता, इसकी व्याख्या करवाता था। मेरे कुछ महात्मा ऐसे हैं जिसके पास कुछ चर्चा करवाता हूं। हमारे गुजरात में एक खाखी महात्मा वो अच्छी भागवतकथा कहते थे। वृत्रासुर की जो चतुःश्लोकी है वो मैं उनसे बार-बार सुनता था। वृत्रासुर ने मांगा, हे हरि, मुझे कुछ नहीं चाहिए, तेरी दृष्टि में जो उत्तम लोग है उनसे मेरी दोस्ती करवा दे। तू नहीं, तेरा चाहिए। कृपा को पहचानकर भरोसे के लिए तो हमें आगे बढ़ना होगा। पहले आस्था, फिर श्रद्धा, फिर भरोसा लेकिन इससे पहले निरंतर नामजप।

आस्था प्रारंभ में अस्थायी होती है। जिसकी आस्था एक जगह नहीं होती उस पर करुणा करना कि

इसमें अटकाव नहीं आया है, भटकाव है। कई लोगों की आस्था बदलती मैं देखता हूं। कभी ये देव पर आस्था, कभी वो देव; कभी ये मंत्र, कभी वो मंत्र; कभी ये गुरु पर आस्था, कभी वो गुरु पर आस्था। इसमें साधक का दोष नहीं है। आस्था का पड़ाव ही ऐसा है कि थोड़ा भटकाव रहता है। ऐसे भटकते-भटकते चैनल बदलते-बदलते आ जाएगा जो हमें देखना है। आस्था नीरोगी साधक का पूरा परिचय नहीं है। भटकती आस्था से तो बेहतर है, इस मार्ग से ही निकल जाए। बुद्धपुरुष अस्थायी साधक हो तो उसके प्रति समता रखता है, ममता छूट जाती है। बुद्धपुरुष कभी विषम-असम हो ही नहीं सकता। समता तो उसकी जड़-चेतन पर होती है। हरिस्मरण से आस्था की नीव परिपक्व होती है।

उसके बाद का पड़ाव श्रद्धा। मैंने तलगाजरडी दृष्टि से देखा है कि निरंतर बैरखा चलता है, निरंतर नामस्मरण लिए चलता है श्रद्धा की ओर। श्रद्धा के भवन में प्रवेश होता है तो आदमी को सुख-दुःख, मान-अपमान की चिंता नहीं रहती। गाली देनेवाले भी नासमझ है, प्रशंसा करनेवाले भी नासमझ है। सब तुमसे बदला मांग रहे हैं! हमने तुम्हारी इतनी सेवा की, तुम हमारी खुशामत करो! ये बावा नहीं कर पाएगा! कभी कुछ झेलना भी पड़ता है। किसीको अकारण अहंकार आ जाए, उसका नुकसान हो जाए और साधु का भजन रुक जाए, जबान थोड़ी उसमें चली जाए इससे बेहतर है 'उदासीन नित रहइ गोसांई।' बाप! प्रभु से कहो, श्रद्धा बढ़े। श्रद्धा ये करा देगी।

श्रद्धा से जिसका नाम-संकीर्तन चलता रहेगा, कैसे भी भाय-कुभाय, उसका प्रवेश विश्वास में होगा। ऐसा दादा का क्रम है। कुछ चिंतक ऐसा भी कहते हैं ओशो आदि कि श्रद्धा अच्छी चीज़ है, विश्वास बुरा है। कुछ पाठक भी ऐसे नासमझ है कि ऐसी बातें सुनकर उसके पक्ष में घूस जाते हैं! सनातन मत भूलो। किसीकी किसीसे तुलना न करो। एक आम के दो फल एक जैसे नहीं है। सबकी अपनी इकाई, अपनी निजता है। एक छोटे-से बच्चे को भी इतना ही आदर दो। तुम ज्यादा पढ़े-लिखे हो, तुमने ज्यादा कथा सुनी, ज्यादा कथा कही तो उस बच्चे को नकारो मत। उसमें भी चेतना है। उसकी चेतना का अनादर न हो जाए। तो बाप! वो शिव, उसकी आस्था के बारे में क्या कहूं? श्रद्धा तो उसकी धर्मपत्नी है। और स्वयं विश्वास है।

तुम्ह पुनि राम राम दिन राती।
सादर जपहु अनँग आराती।

निरंतर रामनाम जप रहे हैं। तो विश्वास का खंडन ये तो शिव का खंडन है। नारद के मुख से तुलसीदासजी ने एक पंक्ति बुलवाई -

मामवलोकय पंकज लोचन।
कृपा बिलोकनि सोच बिमोचन।।

रामकथा तुलसी ने पूरी की है नारद से मुलाकात कर। उसके बाद सीधा शिवचरित्र, पार्वती का अभिप्राय। फिर वो प्रश्न करती है, ये चरित्र कागभुशुंडि के पास कैसे आया? लेकिन आखिरी जो प्रकरण है, वो भगवान का बाग में जाना, भरत से बातचीत करना, संतों का लक्षण, सनतकुमारों का आना। आखिर में नारद आते हैं। तुलसीदासजी की महिमा देखो साहब! वो राम का निर्वाण नहीं करना चाहते, इसीलिए राघव का सरजू जलप्रवेश तुलसी नहीं लिखते। तुलसीदासजी वृंदावन गए तो नाभाजी को मिलने गए। नाभाजी बाहर गए थे तो तुलसीदासजी नाभाजी की जूतियां रहती थी वहां सो गए। नाभाजी उनको जगाते हैं और व्यंग्य करते हैं, 'आप सो गए? संत सो जाएगा तो दुनिया को कौन जगाएगा?' फिर 'कवितावली' में तुलसीदासजी ने एक पद लिखा, 'जोगी जागे' जिसको संयम-नियम की चिंता हो; भोगी जागे, जिसको भोग भोगना है; राजा जागे, जिसकी सत्ता पे कोई चढ़ाई करे! 'तुलसी सोए भरोसे एक नाम के।' नाभाजी की आंख में से अश्रुधारा बहने लगी कि तेरे जैसा विश्वासु कोई नहीं देखा!

अभी 'इमेज प्रकाशन।' 'हुं ईश्वरमां मानुं छुं'। ऐसा पुस्तक निकाल रहा है, इसमें बिलग-बिलग क्षेत्र के अभ्यासुओं से, साधकों से, अनुभवीओं से लेख मांगे। मैंने कहा, मुझे पूछ रहे हो तो ईश्वर में मानना या न मानना इससे ईश्वर को कुछ फ़र्क नहीं पड़ता और न हमको कुछ फ़र्क पड़ता। माने तो लोग हमें धार्मिक कहे। मैंने कहा, ईश्वर को जानना जरूरी है। मेरा महादेव कहता है, 'प्रेम ते प्रगट होहि में जाना।' 'रामनाम सब धर्ममय जानत तुलसीदास।' ईश्वर को माने न माने उससे उनको क्या फ़र्क पड़ता है? मोरारिबापू की कथा कोई सुने या ना सुने उससे मोरारिबापू को क्या फ़र्क पड़ता है? कथा के प्रारंभ में जिसने बबूल को कथा सुनाई है! फिर मुझे दूसरों की जरूरत क्या हो? आओ तो आपका आनंद, न आओ तो आपका आनंद। ईश्वर को जानो।

जाने बिनु न होई परतीति।
बिनु परतीति होई नहि प्रीति।।

कल हम नाममहिमा की चर्चा कर रहे थे। तुलसीदासजी 'मानस'सर का रूपक बनाते हैं; चार घाट निर्मित करते हैं। ये चलते-फिरते 'रामचरितमानस' में शरणागति के घाट से तुलसी कथा का आरंभ करते हैं और हमें लिए चलते हैं कर्म के घाट पर प्रयाग में जहां भरद्वाजजी याज्ञवल्क्यजी को कथा के बारे में जिज्ञासा करते हैं कि महाराज, राम तत्त्व क्या है? याज्ञवल्क्य मुस्कुराते हैं, आपको रघुपति की प्रभुता का पता है, फिर भी मूढ़ की तरह मुझे प्रश्न पूछते हैं तो मैं भी आप जैसा श्रोता मिले तो रामकथा सुनाऊंगा, ऐसा कहकर याज्ञवल्क्यजी प्रयाग की पीठ से, कर्म की पीठ से रामकथा का आरंभ करते हैं।

कथा आरंभ में पहले भगवान शिव का चरित्र उठाया। एकबार के त्रेतायुग में भगवान शिव दक्षकन्या सती को लेकर कुंभजऋषि के आश्रम में कथा सुनने हेतु गए। कुंभज ने पूजा की और कथा सुनाई। परमसुख आस्वाद लेकर शिव ने कथा सुनी लेकिन सती कुतूहल कर रही है तो शरीर कथा में था पर मन नहीं था। कथा के बदले में भक्ति की चर्चा हुई। भगवान महादेव कुंभज से बिदा मांगकर कैलास की ओर निकले। दंडकारण्य से निकले और वर्तमान युग का रामजन्म। सीता के वियोग में वियोगी राम के आक्रंद को देखकर सती के मन में संदेह हो जाता है और शिव कहते हैं कि देवी, संदेह न करो। आपका नारी स्वभाव है। आपको नुकसान करेगा। सती को बहुत समझाया। लेकिन उपदेश नहीं लगा। शिव ने कहा, आप जाकर परीक्षा करो। मैंने बार-बार कहा, ईश्वर परीक्षा का विषय नहीं, प्रतीक्षा का विषय है। दक्षकन्या के नाते, अपनी बौद्धिकता के नाते जाती है। रंगे हाथ पकड़ी गई! शिव के पास लौटी। शिव से झूठ बोलती है कि मैंने कोई परीक्षा नहीं की। शंकर भगवान ने ध्यान में देख लिया। प्रभु की प्रेरणा हुई। आकाशवाणी हुई। शिव सोचते हैं, सती का ये शरीर हो तब तक मेरा और उनका कोई रिश्ता नहीं। विश्वनाथ कैलास पहुंचे।

सत्तासी हजार साल बीत गए। शिव जागकर राम-राम रटने लगे। सती शरण गई। सन्मुख आसन देकर रसप्रद कथा सुनाने लगे। उसी समय प्रजापति नायक दक्ष महाराज यज्ञ करते हैं और सब देवता यज्ञ में जा रहे हैं। कथा सुनते-सुनते सती जिज्ञासा करती है, 'महाराज, देवतागण कहां जा रहे हैं?' शिव ने कहा, देवी, आपके पिता यज्ञ कर रहे हैं। मेरे साथ वैर रखते हैं इसीलिए मुझे नहीं बुलाया। सती ने जिद्द की, 'मैं जाऊं।' शिव ने बहुत समझाया लेकिन न मानी। और शिव ने सती को भेज दिया। पिता के यज्ञ में अपने पति का आसन तक नहीं देखा तब सती को बुरा लगा। पूरी सभा को संबोधन करके आक्रोश में कहा, जिन्होंने शिव की निंदा की है, वो भलीभांति फल प्राप्त करेंगे। योगअग्नि में जलाकर सती ने अपने शरीर को भस्म कर दिया! हाहाकार हुआ! यज्ञ विध्वंस हो गया। सती जलते समय ईश्वर से मांगती है, जनम-जनम मुझे शिव के चरणों में अनुराग हो। इसी कारण सती का दूसरा जन्म नगाधिराज हिमालय के घर हुआ। पार्वती के रूप में सती प्रगट हुई। हिमालय में बहुत उत्सव मनाया गया। नारदजी आकर भविष्यवाणी करते हैं, उसे शिव पति के रूप में मिलेंगे लेकिन उसको तप करना पड़ेगा। पार्वती तप करने के लिए जाती है। तप की फलश्रुति मिल जाती है। यहां शिवजी को ब्रह्माजी समझाते हैं, आप शादी करो। भगवान शंकर मान जाते हैं। बीच में कामदेव की कथा आई। शिव की बारात निकलती है, उसकी चर्चा हम कल करेंगे। हो सके तो रामप्रागट्य की कथा भी गाएंगे।

> हर आश्रय में बंधन है। और यदि आप कुछ सबल है, आश्रित है तो भी आप बलवान होने के कारण अनदेखा कर देते हैं, तो आप फिर अंततोगत्वा अहम् के आधीन हो जाते हैं। मेरी समझ में एकमात्र आश्रय 'भरोसो दृढ़ इन चरनन केरो।' 'दृढ़ाश्रय', जो महाप्रभुजी कहते हैं। वहां परम स्वतंत्रता है। ईश्वर से भी जिसका दर्जा ऊंचा माना जाता है अध्यात्मजगत में वो गुरु और आश्रित की पावनी परंपरा में एकमात्र बुद्धपुरुष का आश्रय आदमी को निजतंत्र-स्वतंत्र रखता है। बाकी हर आश्रय पराधीन करता है।

मानस-ब्रह्मा : ४

भेद ही समस्त संघर्षों की नीव है

बाप! 'मानस-ब्रह्मा' विषय पर हम संवादी चर्चा कर रहे हैं। ब्रह्माजी की मूलत: भेदबुद्धि है। सूत्र पर ध्यान देना, बिना भेदबुद्धि सर्जन नहीं हो सकता। सर्जन के लिए भेदबुद्धि जरूरी है, क्योंकि कोई भी सर्जन करने से पहले भेद बुद्धि यह कहेगी कि यह करे कि यह करे, पसंदगी के लिए भी भेद करना पड़ता है। इसलिए ब्रह्मा ने जो सृष्टि का निर्माण किया, पूरी भेदसृष्टि है। यह अभेद नहीं है। इनमें से अभेद हमें होना पड़ता है। या तो दोनों का स्वीकार या तो दोनों से पर। मैंने यदि ठीक से समझा है, सुना है तो जलालुद्दीन रूमी साहब ने यह कहा, हे साधो, मैं तुम्हें वहीं ले चलूं, जहां न संस्कार है, न असंस्कार है। हे साधक, हे प्रेमी, मैं तुम्हें वहां ले चलूं, जहां न कोई पाप है, न पुण्य है; जहां न कोई कर्तव्य है, न अकर्तव्य है; जहां न कोई विधि है, न निषेध है। रूमी साहब ने तो थोड़े साल पहले कहा लेकिन हमारा वेदांत, हमारी पूरी चिंतनधारा उसीको दोहराते हैं। न कोई गुण है, न कोई अवगुण है।

तो जो सृष्टि में हम रहते हैं वो भेदसृष्टि है। वहां हिन्दुस्तान है, पाकिस्तान है, चाईना है, अमरिका है, पूरा युरोपियन है। सब भेद, भेद, भेद! टुकड़े, टुकड़े, टुकड़े! अभेद कहां है? हम भी व्यक्तिगत रूप में भेद से ही तो जीते हैं। व्यवहार के लिए भेज जरूरी भी है कि यह बेटा है, बाप है, बहू है, सास है, भाई है, माँ है, पडोशी है, आत्मीय है, मित्र है, आदि-आदि। लेकिन यह भेदसृष्टि में रहते हुए जिसकी चेतना दोनों से पर है, अभेद में ऊतर आती है उसीको एक अर्थ में मुक्ति कहा जाता है।

ब्रह्मा का भी 'बालकांड' है, वहां सब भेद-भेद है। वो ब्रह्मा 'अरण्यकांड' में जाते हैं, उत्तरावस्था में जाते हैं। 'मति मोरी विभेद करी हरिए।' हे हरि! मेरी मति भेद कर रही है इसमें से मुझे मुक्त कर। कब तक यह भेद? बूढ़ा हो गया। उम्र हो जाए तब भेद छोड़ देना। 'बालकांड' तक ठीक है चलो, माना। 'अयोध्याकांड' तक भी ठीक है, माना। 'अरण्यकांड' में तो भेद छूटना ही चाहिए। भगवान राम लंका में विजयी हुए और सभी देवताओं ने स्तुति की। 'लंकाकांड' है लेकिन सभी उत्तरावस्था की ओर जाते हैं। काल निकट आए तभी अभेद की ओर जाए; 'उत्तरकांड' की ओर जाए। मेरी समझ में यह नहीं आ रहा था कि एक बार देवताओं नें स्तुति की फिर ब्रह्मा दुबारा स्तुति क्यों करते हैं?

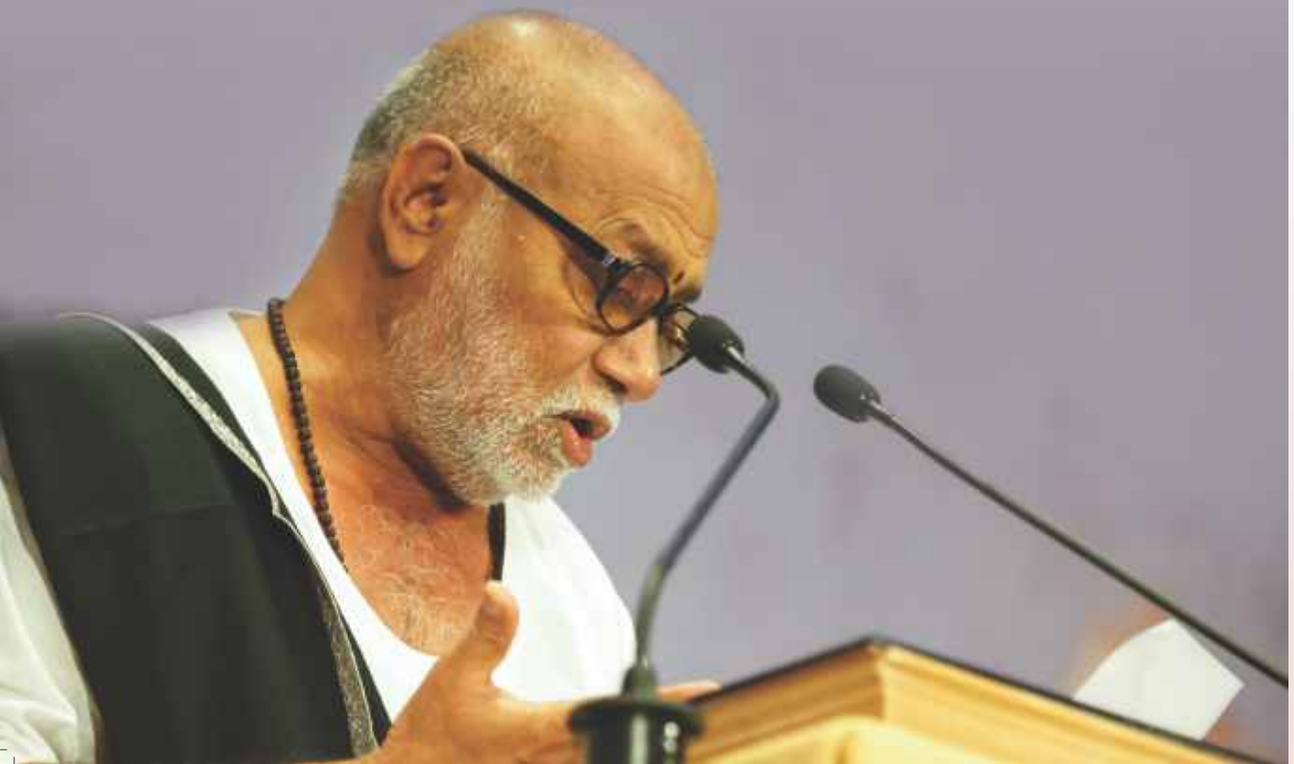

करि बिनती सुर सिद्ध सब रहे जहँ तहँ कर जोरि।
अति सप्रेम तन पुलकि बिधि अस्तुति करत बहोरि।।

रावण खत्म हो गया। लंका से प्रभु उत्तरगमन करेंगे ऐसे प्रसंग पर ब्रह्माजी भगवान की स्तुति करते हैं।

जय राम सदा सुख धाम हरे ।
रघुनायक सायक चाप धरे ।।
भव बारन दारन सिंह प्रभो ।
गुन सागर नागर नाथ बिभो ।।

बूढ़े ब्रह्मा अभेद मांगते हैं। इस पर विशेष ध्यान दे। ब्रह्मा भिन्नता से मुक्त होना चाहते हैं।

अनवद्य अखंड न गोचर गो ।
सबरूप सदा सब होइ न गो ।।

बहुत कठिन स्तुति है। गुरु बिना गुंच नहीं निकलती है।

इति बेद बदंति न दंतकथा ।
रबि आतप भिन्नमभिन्न जथा ।।

'बालकांड' तक भेद ठीक है लेकिन जब हमारी चेतना, हमारी प्रज्ञा, हमारी समझ 'लंकाकांड' लड़ चुकी है; संघर्ष पूरा हो चुका है। अब तो ऐसे पुकार हो जहां अभेद हो। जगतभर के युद्ध की नीव भेद है। या तो धर्मभेद या जातिभेद या वर्णभेद या भाषाभेद या वर्गभेद। भेद ही तो नीव है समस्त संघर्षों की। प्रेम की बात 'मानस' इसीलिए करता है, मैं भी इसलिए कहता हूं। प्रेम ही एक है अभेद। भक्ति का लक्ष्य अभेद है। ज्ञान में पतंगा अग्नि में जल जाता है। भक्ति में सरिता सागर में समा जाती है। लेकिन दोनों धारा में फ़र्क है। एक में जलना है, एक में मिलना है। ज्ञान कहता है, 'ज्ञानाग्नि:।' प्रेम कहता है, मिल जाए; गले लग जाए। आत्मा आत्मा की प्रतीति करे। ब्रह्मा चतुर्मुख की यहां चार वस्तु पकड़ते हैं।

अंत तक मैं दादा के चरणों में बैठ भी नहीं पाया। इससे पहले तो वो चले गये क्योंकि मेरा 'लंकाकांड' पूरा नहीं हुआ था। तो अब उसकी चेतना सिखाती है। जब भी कोई 'मानस' की उलझनें, उलझनें तो क्या? मैं अपने आनंद के लिए सोचता हूं कि इसका अर्थ क्या? तभी मैं दर्शन के बहाने वो ही ओसरी में चला जाता है। पुराने झुले पर बैठ जाता हूं। दादा, मुझे दुनिया को नहीं बताना है; जगत की वाह-वाह नहीं चाहिए। मेरी ग्रंथि छूटे इसलिए इसका क्या अर्थ? करुणा काम करती है, मेरा अनुभव है।

एक भाई ने पूछा है, बापू, 'रामचरितमानस' में चार घाट है ज्ञान, कर्म, उपासना, शरणागति। आपने जहां से 'रामचरितमानस' पाया, दादा से वो घाट का नाम क्या? मैं कोई घाट का नाम नहीं देना चाहता हूं। क्योंकि कोई पीठ या घाट का नाम दे दूं तो मुझे डर है कि परंपरा शुरू हो जाए। मैं नहीं चाहता। इतिहास में परंपरा होती है; अध्यात्म में परंपरा नहीं होती। सब अपना दीप लेकर जाये। कल भी प्रश्न आया है कि राम और भरत में फ़र्क क्या है? भरत कुछ पूछना चाहते हैं और हनुमानजी कहते हैं, भरत कुछ पूछना चाहते हैं तब रामजी ने कह दिया, मुझ में और भरत में फ़र्क क्या है? यह भगवान ने क्यों कह दिया? भगवान चाहते हैं कि मेरे बाद लव-कुश गादी पर न आये। जिस भाई ने बाप के वचन पर मेरे लिए राजगादी छोड़ी। पूरी परंपरा अयोध्या की देखो! कोई मथुरा का राजा हुआ। कोई लवणासुर से लड़ा। कोई अयोध्या आया। संघर्ष के सिवा कुछ मिला नहीं। तुलसी ने भी लव-कुश की बात करके बात खत्म कर दी। हनुमानजी हवा डालते हैं। सेवा का पुलकित भाव है लेकिन समझ गये हैं कि प्रभु लीला समाप्त कर रहे हैं इसलिए लोचन में जल है।

यह सच है कि तुने मुझे चाहा भी बहुत है।
लेकिन मेरी आंखों नें रुलाया भी बहुत है।

कई प्रकार का संदर्भ है। हम दोनों एक ही है; कोई अंतर नहीं है। इसका मतलब भगवान का संकेत है कि मेरे जाने के बाद लव-कुश न हो। भरत ही गादी पर आए। क्योंकि उन्होंने कहा था, चौदह साल बाद आप जो कहोगे वो मैं कर लूंगा। आप तो राम राजा बने ऐसा चाहते हैं लेकिन मेरे और भरत में अंतर कहां है? वो राज करेगा तो समझो राम ही राज कर रहा है। अध्यात्मधारा ऐसा सिखाती है, सब की निजता में सब चलो। सबकी स्वतंत्र चाल। यह भेद हमें अभेद की ओर ले चले। मैं ज्ञानी, यह अज्ञानी; यह भेद है। व्यवहार के लिए भेद जरूरी है। जब अंदर से बुद्धि थक जाए, बुद्धि परिपक्व होने लगे तब अभेद की ओर यात्रा होनी ही चाहिए।

तो आपने पूछा, आपका घाट क्या है? मैं कोई घाट नहीं कहना चाहता हूं? पहले तो मैं तलगाजरडी घाट, प्रेमघाट कह देता हूं। यह तो बोलने का है। फिर भी कहना चाहूं तो कहूं कि मेरा घाट त्रिभुवन घाट है। मैंने उसी घाट

का पानी पीया। वो ही कोना आज भी मुझे जवाब देता है। कहने का मेरा मतलब मेरा 'लंकाकांड' कहां पूरा हुआ? रावण भी नहीं मरा था। ये जो बातें मैं आपसे कहे जा रहा हूं वो केवल करुणा है। अभ्यास नहीं है। स्वाध्याय भी नहीं है, केवल प्रसाद। अनराधार वर्षा। डर लगता है, निकल जाऊं यह कोने से! कहीं यह वर्षा मुझे परेशान न कर दे!

तो ब्रह्माजी परिपक्वता का निर्देशन करे और चार वस्तु भगवान से मांगे। उन्नीस-उन्नीस बातें भेद की हमने ओलरेडी की है। अब अभेद।

अनवद्य अखंड न गोचर गो।

'अनवद्य' बड़ा प्यारा शब्द है। हे हरि, तू वो है जिनकी निंदा की ही नहीं जाती। क्योंकि तू निर्दोष है, तू अनिंदनीय है, अखंड है, तू इन्द्रियों का विषय नहीं है। इन्द्रियों से तेरा कुछ रस लिया जाता है। आंखों से कुछ दर्शन करो, रस मिलेगा। हाथों से छुओ, रस मिलेगा। जीभ से उनको गाओ, रस मिलेगा। नासिका से उनकी खुश्बू लो, रस मिलेगा। जुबां से उसको गाओ, चखो, रस मिलेगा। चैतन्य महाप्रभु ने रूप प्रभुजी को कहा, बेटा, चार लोग चार जगह बिलंब नहीं करते। जो सही अर्थ में धर्मी है वो धर्मकार्य में विलंब नहीं करते। दंभी हो बात अलग है। दान धर्म है, जिसको दान रूपी धर्म में समझ आए वो दान टालेगा नहीं, तुरंत कर देगा। जप धर्म है, यज्ञ धर्म है तो नहीं टालेगा। दशरथजी राम को राज देना था लेकिन टाल गये। कल देंगे। थोड़ा विलंब कर दिया। चौदह साल की सजा मिली। एक छोटी-सी खता अवधपति की।

धर्मी के लिए धर्म में विलंब करना बिलकुल असंभव है। नितांत इम्पोसिबल है। जिसको दूसरे को खिलाने की इच्छा है वो देखेगा नहीं कि यह पात्र है, यह कुपात्र है; यह चोर है, अच्छा है, बुरा है। वो देखेगा नहीं, खिलाई देगा। धर्म में विलंब मत करना। अर्थ में विलंब न करना। अर्थ के दो भाग। एक आध्यात्मिक, एक भौतिक। भौतिक में हम विलंब करते ही नहीं। अर्थवाद में सामान्य आदमी विलंब नहीं करता। इसमें कोई आलोचना नहीं है। स्वाभाविक है। एक है जीवन का अर्थ। साधक को चाहिए जीवन का अर्थ, और वो कोई बुद्धपुरुष के चरणों में चले जाए। विलंब किया तो जो आज न हुई वो कल क्या होगा?

वानप्रस्थ के दस धर्म है। ब्रह्मचारी के दस धर्म है। गृहस्थ के दस धर्म है और संन्यासी के दस धर्म। ब्रह्मचारी के दस धर्म। एक संयम। दूसरा स्वाध्याय। तीसरा अध्ययन। चौथा गुरुसेवा। पांचवां स्वाश्रय। छठ्ठा तप। सातवां यज्ञ की तैयारी। आठवां संयम। सम्यक् आहार, सम्यक् निद्रा। और गुरु का दिया हुआ मंत्र का जप।

वानप्रस्थ के दस धर्म। प्रामाणिक डिस्टन्स; पचास के बाद वानप्रस्थ। सेवा की प्रवृत्तियों से भी निवृत्ति ले लो। ट्रस्टों से भी बाहर। कब तक संस्थाओं में बैठे रहोगे? अल्पाहार; अल्पाहार वानप्रस्थ के लिए जरूरी है। मौन। नियमित और संयमित जीवन। वानप्रस्थ 'रामचरितमानस' के मनु और शतरूपा से सीखो।

दस धर्म है संन्यासी के। शिखा, सूत्र का त्याग। भिक्षा का अन्न खाना। पांच घर की भिक्षा लेनी। पांच घर में भी गाय दोहने में जितना समय लगे इतने समय तक ही रुकना। इतने समय में भिक्षा न मिले तो निकल जाना। तीसरा, अग्नि को नहीं रखना। संन्यासी रसोई नहीं पका सकते। विषयों का संग न हो जाए। संन्यासी को अकेले चलना है। यह मूल है। इसको दंडी स्वामी कहते हैं। मुझे एक बार 'मानस-संन्यास' करना है। संन्यासी को कभी मठ, पीठ, आश्रम में नहीं रहना है। 'चरैवेति चरैवेति।'

वो जहां भी रहेगा रोशनी फैलाएगा।

चरागों को अपना कोई मकां नहीं होता।

अब परंपरा में आश्रम आये। मैं कोई विरोध नहीं करता। अच्छी बात है लेकिन मूल बात तो यह है। यह परिव्राजक रहता है। एक प्रकार के रंग के ही वस्त्र पहनना। अग्नि में रहना। ज्यादातर मौन रहना। व्यक्तिगत साधना में तुम अकेले रहो। क्रिया कर्म पहले कर लिया बाद में संन्यासी की दीक्षा लेते हैं। ऐसे ताजे-तरोजे संन्यासी को गुरु दंडवत् करता है। कहीं बातचीत करने का सवाल आये तो केवल ब्रह्म की चर्चा; ओर कोई चर्चा नहीं। संन्यासी का चिंतन के बारे में धर्म है वो है केवल तत्त्वचिंतन।

गृहस्थ के दस धर्म। जो युवान मेरे भाई-बहन है; जिसकी शादी हो गई है या होनेवाली है वो यह दस धर्म सीख ले उसके जीवन में रोशनी ही रोशनी है। चाणक्य ने दस वस्तु लिखी है। हम कर सकते हैं। जिसके घर में होता हो उसके घर की मिट्टी भी चंदन बन जाती है। कोई भेदरेखा नहीं है। पहला, 'सानन्दं सदनं।' आपका घर जैसा भी हो तुम्हारे घर में आनंद हो। आनंद के बलिदान में कोई भी

प्रवृत्ति न हो। घर आनंद में रहे उनके लिए दो ही वस्तु मैं आपसे कहना चाहूं। जिस घर में संप होगा और जिस घर में संतोष होगा वो 'सानन्दं सदनं।' आनंद क्यों नहीं रहता घर में? संप नहीं है। और संतोष नहीं है। हम बिलग-बिलग थाली में खाते नहीं थे। व्यवस्था का मैं विरोध नहीं करता। बिलग-बिलग डीश में खाओ वो अच्छी बात है लेकिन संतोष। 'सुताश्च सुधियः'; अपने संतान बुद्धिमान हो। पढ़े-लिखे हो। चाणक्य कहते हैं, यह गृहस्थाश्रम का दूसरा धर्म है। संतान स्मार्ट हो। और आज-कल के संतान भी तेजस्वी होते जा रहे हैं।

'कान्ता प्रियभाषिणी'; तीसरा महत्त्व का सूत्र, धर्मपत्नी मुस्कुराती हो और प्रिय वचन बोलती हो। चौथा, 'इच्छापूर्ति धनम्।' क्या सटिक सूत्र है! मैं चाणक्यनीति, भर्तृहरि नीति पढ़ता हूं तो मुझे कभी-कभी सूत्र ऐसे लगते हैं तो मैं नहीं कुबूल करता। भर्तृहरि हो तो क्या? उसके जमाने में अनुकूल है। शायद आज के समय में अनुकूल न भी हो। स्मृतिकार के सभी सूत्र आज के समय में हम प्रासंगिक नहीं मान सकते हैं। हमारी समझ की कमजौरी या तो अभी वो प्रेक्टिकल नहीं है। यह गृहस्थाश्रम के सूत्र तो कायम प्रेक्टिकल है। कान्ता, धर्मपत्नी सबके सामने मुस्कुराएगी। समझ में आ जाए तो जीवन आनंद है। मैं अपने युवान भाई-बहन को कहूं, हमें जितनी जरूरत हो, अल्लाह उतना धन दे। घर में आप पानी मांगो तो दूध मिल जाए। पांच मिनट में कोई भी वस्तु मिल जाए लेकिन घर में न संप है, न आनंद है, न संतोष है, न बुद्धिमत्ता है, न विवेक है तो?

'स्वयोषिति रतिः।' पत्नी को अपने पुरुष में, पुरुष को अपनी पत्नी में पूर्ण संतोष हो। जो अपने हैं उसमें पूर्ण तुष्टि। पुरुष को अपनी नारी में संतोष हो। मैं कथा में कहता रहता हूं, पहले जब शादी होती थी उसमें लड़का लड़की को साधन नहीं समझता था, साध्य समझता था। और लड़की पुरुष को साधन नहीं समझती थी, साध्य समझती थी। अब क्या है? सब एक-दूसरे को साधन समझते हैं! और साधन तो कमज़ोर होगा ही। उसमें रुचि कम हो जाएगी। एक-दूसरे की बोली से, एक-दूसरे के रहन-सहन से संतुष्ट हो जाना, गृहस्थाश्रम का यह पांचवां धर्म है। घर में नौकर-चाकर ऐसे हो जो आपकी आज्ञा हंसते मुंह स्वीकार कर ले। नौकर-चाकर आपके घर में ऐसे हो जो आपकी आज्ञा अनुसार काम करे लेकिन मुस्कुराता हुआ। सातवां धर्म; घर के आंगन में आतिथ्य होना चाहिए। जो आए उसको आवकार। वो भी हम लोक निभाते हैं, कर सकते हैं, करते हैं। लेकिन इससे भी बड़ी बात मेरे लिए 'आतिथ्य शिवपूजनं प्रतिदिनम्।' जिनके घर हर रोज शिव का अभिषेक होता हो। इसका मतलब मैं शिव ही न रखूं, हरि-हर जो भी हो। अल्लाह की बंदगी हो, मुझे कोई आपत्ति नहीं। बाईबल की प्रार्थना करो, कोई आपत्ति नहीं। शिव तो सार्वभौम है। लेकिन चाणक्य यहां खास 'शिव' शब्द का प्रयोग करते हैं। 'मिष्टान्नम्।' रोज घर में मिष्टान्न होना चाहिए। मिष्ट यानी सात्त्विक भोजन। ठाकोरजी को भोग लगाकर जो भी खाओ वो मिष्ट ही हो जाता है। गृहस्थाश्रम में हररोज थोड़ा सत्संग होता हो। चाणक्य कहते हैं, ऐसे गृहस्थाश्रम को लाख-लाख प्रणाम।

तो हम कर सकते हैं। मैं बहुत प्यार से कहना चाहता हूं, घर में सब प्रेम और संतोष से जीओ। तेजस्वी बालकों का आदर करो। प्रिय बोली बोलो। परमात्मा ने हमारे पुरुषार्थ और प्रारब्ध से जितना दिया है, आनंद करो। परस्पर एक-दूसरे में संतुष्ट रहो। नौकर-चाकर परिवार के सदस्य की तरह रहे और नौकर-चाकर का धर्म है, मुस्कुराते हुए आज्ञा का पालन करे। दूसरों का आतिथ्य हो और जो तुम्हारे-मेरे इष्टदेव हो उसका पूजन हो। रोज इष्ट भोजन हो, मिष्ट भोजन हो। साधु का संग हो, सत्संग हो। कोई साधु रोज आए और सत्संग करवाए ऐसी बात नहीं, समय मिले 'मानस' का पाठ करो, 'गीता' का पाठ करो। कोई महापुरुष की किताब पढ़ो ये साधुसंग। समय मिले जो पूर्ण पवित्र हो ऐसे साधु को याद करो ये सत्संग है।

चैतन्य प्रभु गोस्वामीजी महाराज को कहते हैं, चार जगह पर विलंब न किया जाए। सच्चा धर्मी धर्म में विलंब नहीं कर सकता। तो धर्म में विलंब न हो। अर्थ में हम विलंब नहीं करते। जहां अर्थ का लाभ हो, हम दौड़े जाते हैं! स्वाभाविक है, करना चाहिए। चैतन्य महाप्रभु कहते हैं, काम में भी विलंब न करो। 'काम' में याने सांसारिक भोगों में, विषयों में, आदमी कहां विलंब कर सकता है? या तो कोई भी काम जिसमें जीवन का रस पड़े उसमें विलंब न हो। और मुमुक्षु मोक्ष में भी विलंब नहीं करते।

तो बूढ़ापा आए, 'उत्तरकांड' की ओर हमारी गति हो तब भेदसृष्टि से हम अभेद की ओर गति करे। और

ब्रह्मा चार वस्तु यहां करना चाहते हैं, जो हमें सिखाना चाहते हैं। इन्द्रिय द्वारा हमारी जो गति होती है, लेकिन ब्रह्म एक ऐसा तत्त्व जहां इन्द्रियां जा नहीं सकती। दुनिया का परम बुद्धिमान, सर्जक, कर्ता, चतुरानन, बिधि, बिरंचि परमपिता कहता है, हमसे धन्य है ये बंदर। प्रभु ने कहा, आप ब्रह्मा और ये बंदर! कहां आप, कहां ये सब? आप उनको धन्यवाद क्यों देते हो? तब ब्रह्मा कहते हैं, ये कृतकृत्य हो गए हैं। अब कुछ करने को बचा ही नहीं है। ब्रह्मा कहते हैं, जामवंत के रूप में भी मैंने देखा कि ये बंदर कुछ नहीं करते हैं, तुम्हारा चेहरा देखते हैं। ब्रह्मा की पहली इच्छा है कि बूढ़ापे में कृतकृत्य होना है तो तुम्हारा चेहरा देखता रहूं। ब्रह्मा से बेहतर है ये बंदर जो तुम्हारे मुख को देखते हैं।

मुखडांनी माया लागी रे मोहन प्यारा,
मुखडुं में जोयुं तारुं, सारुं जग लाग्युं खारुं.

बुद्धपुरुष के चेहरे का दर्शन गज़ब की बात है!

पहले नज़र मिलाते हैं फिर मुस्कुराते हैं,
ये एक ही बार में दो-दो प्रहार करते हैं।

- अमितोष

ऐसा कोई तथागत बुद्ध, महावीर, शंकराचार्य, जिसस, महंमद, कबीर, तुलसी कोई मिल जाए। चेहरे के दर्शन की महिमा है। आज बूढ़े बाबा चाहते हैं, तुम्हारा चेहरा मुझे रोज दिखाई दे। बंदरों की कृतकृत्यता की तुलना में अब ब्रह्मा कहते हैं, हम देवताओं के जीवन को धिक्कार है! बंदरों के जीवन को धन्य है। क्योंकि मैं दुनिया को बनानेवाला हूं, आज उसी भव में भुलावे में पड़ गया हूं, मेरी ही माया आज मुझे फंसा रही है। आपकी भक्ति के बिना भवाटवी में भुलावे में है। ब्रह्मा चाहते हैं अब दूसरी वस्तु, मुझे आपकी भक्ति मिले। मैंने काम बहुत किया, सृष्टि का निर्माण किया, ये किया, वो किया। अब मैं भजन करना चाहता हूं। जो चेहरे के दर्शन की मांग कर रहा है वो कहता है, मैं भजन भी करूं। कभी-कभी लोग कहते हैं कि हम तो देखते रहते हैं। उसकी भी महिमा है, अवश्य। लेकिन कुछ करो भी।

गढपण मां गोविंद भजाशे नहीं।

ये नकारात्मक सोच है। मैं तो कहूंगा कि ब्रह्मा से सीखो, बूढ़ापे में भी भजन करे तो भी बेड़ा पार!

अब दीनदयाल दया करिऐ।
मति मोरी बिभेदकरी हरिऐ।।

महाराज, अब मुझ पर कृपा करो और मेरी बुद्धि को भेदबुद्धि से मुक्त कर दो। भगवान ने पूछा, आपकी भेदबुद्धि है तो क्या हो रहा है? ब्रह्मा ने कहा, महाराज, भेदबुद्धि के कारण जो दु:ख है उसको मैं सुख मानता हूं और सुख है उसको दु:ख मानता हूं। इससे मुझे बाहर निकालो।

खल खंडन मंडन रम्य छमा।
पद पंकज सेवित संभु उमा।।

अब चौथी बस्तु मांग रहे हैं, आप खलों का खंडन करनेवाले हो लेकिन धरती का नाश नहीं करते आप। धरती की शोभा बढ़ाते हो। मैं भी यही कहता हूं, ये धरती बहुत सुंदर है, कचरा निकाल दो और मूल एन्जोय करो। सुंदर सृष्टि है ये। मरने की तो बात ही मत करना! भगवान को कहे, ज्यादा जीए हम और ज्यादा इस सृष्टि को एन्जोय करे। जिस चरण-कमल का शंभु और उमा सेवन करते हैं वो तुम्हारे चरण में मेरा सदा प्यार हो। चार वस्तु, तेरा दर्शन हो, तेरा भजन करूं, बुद्धि की विपरीतता से मुक्त हो जाऊं और तेरे चरणों में प्यार करूं।

तो ब्रह्मा की सृष्टि भेदवाली सृष्टि है और ब्रह्मा भी थककर कहते हैं, अब मेरी मति बिभेद कर दो, भेदमुक्त कर दो। ऐसे ब्रह्मा एक बार ब्रह्मलोक में बैठे है। ब्रह्मा का एक संबोधन है, प्रजापिता। लेकिन पिता जिसे नियुक्त करते हैं वो है प्रजापति। जैसे दक्ष है। प्रजापति भी सर्जक है, उसे हम कुम्हार कहते हैं। एक पिंड से घडे बनाता है। और ब्रह्मा भी पिंड से ब्रह्मांड की रचना करता है। प्रजापति की हमारे यहां बहुत महिमा है। मैं केवल जाति के रूप में नहीं कह रहा हूं, द्रौपदी के स्वयंवर के समय कुंती और पांडव प्रजापति के घर ठहरे हैं। एक बार प्रजापति प्रजापिता के चरणों में बैठे हैं और पूछा, मुझे इतना समझाईए कि इस जगत में किसका आश्रय छोड़ दिया जाए? चार आश्रय छोड़ना, ऐसा ब्रह्मा कहते हैं। छोड़ना यानी उपेक्षा नहीं; हम उससे दूर चले जाएं।

पहला, जब समझ में आ जाए तब धर्माश्रय छोड़ो। आखिर में आदमी को मज़हबवाली बातों से बाहर निकलना होगा क्योंकि धर्म से भेद हो तो संघर्ष होता है।

इसी अर्थ में पितामह कहते हैं, धर्माश्रय छोड़ो। 'मानस' भी कहता है-

नर बिबिध कर्म अधर्म बहु मत सोकप्रद सब त्यागहू।
बिस्वास करि कह दास तुलसी राम पद अनुरागहू।।

धर्माश्रय छोड़े ये परिपक्वता की बात है। इसका अर्थ ये नहीं कि हमारा धर्म छोड़ दे लेकिन धर्मभेद छोड़ दे, धर्म नहीं। दूसरे का धर्म कितना ही प्यारा क्यों न हो? 'स्वधर्मे निधनं श्रेय:।' योगेश्वर कृष्ण ने कहा, अपने धर्म में तू समाप्त हो जा तो भी बहेतर है। आदमी का स्वभाव ही धर्म है। संघर्ष और हिंसा करानेवाले धर्मभेदों से युक्त धर्माश्रय को तू छोड़। सामान्य अर्थ करके पूजा, पाठ, पारायण, जप-तप छोड़ना नहीं। धर्माश्रय छोड़ दे।

दूसरा, धनाश्रय छोड़े। धन का आश्रय छोड़ दो, इसका अर्थ ये नहीं कि पैसे छोड़ दे। सब कुछ धन से होता है। हमें वास्तविक होना चाहिए। धनाश्रय याने जीवन का एकमात्र लक्ष्य धन न हो जाए। धन की आसक्ति छूटे। मीरां तो धन की व्याख्या ही बदल देती है। वो कहती है, तुम जिसे धन कहते हो वो मेरे लिए धन है ही नहीं। 'राम रतन धन पायो।' तुलसी भी कहते हैं, 'मुनि जन धन राम' मुनियों का धन राम है। अर्थ एक पुरुषार्थ है, एक फल है। चतुर्विध बातों में हमारे ऋषिमुनियों ने अर्थ को एक स्थान दिया है लेकिन केवल धनाश्रय हो तो छोड़ो। जब हमारे जीवन का केन्द्र केवल धन हो तो छोड़ो। धन का आश्रय इतना न हो जाए कि भगवद् स्मरण छूट जाए। तीसरा आगे कहा, ध्यानाश्रय छूटे।

साधो सो गुरु सत्य कहावै।
कोई नैनन में अलख दिखावै।
जप तप जोग क्रिया ते न्यारा।
सहज समाधि सिखावै।

उसमें महत्त्व की पंक्ति है, 'काया कष्ट कभी नहीं और नहीं संसार छुड़ावै।' ऐसा बुद्धपुरुष चाहिए जो काया को कष्ट न दे और संसार भी न छुड़ाए। जहां है वहीं रखकर आवागमन हमारी अंदर की हिलचाल मिटा दे। किसी भी प्रकार का आश्रय करके किया हुआ ध्यान टिकाऊ नहीं है। अंडाकार पर, ऊंकार पर ध्यान करवाते हैं। ये सब उपकारक है। लेकिन कोई ये प्रचार करे कि ध्यान ही सबकुछ, बाकी सब बेकार, ऐसा ध्यानाश्रय छूटना चाहिए। सबकी रुचि के अनुसार हरिभजन करने दो। मेरे पास ऐसे बिलग-बिलग विचारधारा के लोग आते हैं कि आओ, हम आपको क्रियायोग करवाएं, सुदर्शन प्रयोग करवाएं। सबको मेरा प्रणाम है। आप अपने-अपने क्षेत्र में कितना काम कर रहे हैं! सब वंदनीय है। लेकिन दूसरे पर दबाव न डालो। सलाम सबको करो लेकिन कोई आपका बैरखा छुड़वा दे ऐसा मत करो। आपके मुख पे ये प्रसन्नता देख रहा हूं वो बेरखे के कारण है। आप नमाज पढ़ो, पढ़ो। जप करना चाहे, यज्ञ करना चाहे तो करो। कथा में ही आपको प्रसन्नता मिलती है तो खूब कथा सुनो, न आती हो तो न सुनो। मैं कहूं कि कथा से ही सब हो जाएगा तो मैं भी ठीक नहीं हूं। अपनी जो पद्धति है उसका दूसरों पर जड़तापूर्वक का आग्रह छूटना चाहिए। मैंने आपको पूरी स्वतंत्रता दी है लेकिन आपका भी कोई दायित्व है, ये तुम्हें समझना है। जिसे महाप्रभुजी दृढ़ाश्रय कहते हैं।

चौथा, धन्याश्रय छोड़ दो। याने तुम्हें तुम्हारे कर्म के बदले में धन्यवाद मिलता रहे ये अपेक्षा छोड़ दो। तुम किए जाओ। तुम्हें कोई धन्यवाद दे, न दे, प्रतीक्षा मत करो। और करे तो भी सावधान रहो। धन्याश्रय छूटे। तुलसीदासजी को क्या अवोर्ड दोगे? कबीर को क्या दोगे? उनका धन्य होने का भाव ही छूट गया है। सब कृतकृत्य हो गए हैं, फिर कोई भाव नहीं बचता। प्रजापिता ब्रह्मा प्रजापति को कहते हैं, चार प्रकार के आश्रय छोड़ो तो भगवद्रस, भगवद्प्रेम, भगवद्भक्ति की प्राप्ति होगी।

जगतभर के युद्ध की नीव भेद है। या तो धर्मभेद या जातिभेद या वर्णभेद या भाषाभेद या वर्गभेद। भेद ही तो नीव है समस्त संघर्षों की। प्रेम की बात 'मानस' इसीलिए करता है, मैं भी इसलिए कहता हूं। प्रेम ही एक है अभेद। भक्ति का लक्ष्य अभेद है। ज्ञान में पतंगा अग्नि में जल जाता है। भक्ति में सरिता सागर में समा जाती है। लेकिन दोनों धारा में फ़र्क है। एक में जलना है, एक में मिलना है। ज्ञान कहता है, 'ज्ञानाग्नि:।' प्रेम कहता है, मिल जाए; गले लग जाए।

आइए, कथा का दोर आगे बढ़ाएं। कल भगवान शिव ने कामदेव को भस्म कर दिया और ब्रह्मा की अगवानी में सब देव आए और शिव को समझाया कि आपकी शादी हो, आपके घर पुत्र हो तो ये असुर का नाश हो और देवगणों को त्रास से मुक्ति मिले। भगवान शिव ने हां बोल दी और शिव के गणों ने उनका शृंगार किया। भस्म का लेपन हुआ। हाथ में त्रिशूल और डमरू पकड़वाया और सब भूतप्रेत इकठ्ठे हुए। भगवान शिव की बारात निकली। जैसा दुल्हा वैसी बारात निकली। हिमाचलप्रदेश पहुंचते हैं। शिव के इस बेश और मंडली को देखकर सब बेहोश होते हैं। पार्वती की माँ दुल्हे महाराज की आरती ऊतारने गई और शिवजी का जटिल बेश देखकर सास बेहोश हो गई! ये खबर हिमाचल को, नारदजी को और सप्तऋषियों को मिली। सब निजमंदिर में आए। नारद ने कहा, तू जिसे अपनी बेटी मानती है वो जगत की माता है। नारद की बात सुनकर सब पार्वती के चरणों में वंदन करने लगे। फिर दुल्हे की सवारी निकली। लोक और वेदरीति से भगवान महादेव ने पार्वती का पाणिग्रहण किया। बेटी की बिदाई की। महादेव और पार्वती कैलास पहुंचे। शिवपार्वती का विहार चला और समय बितने पर कार्तिकेय का जन्म हुआ। उन्होंने तारकासुर को मारा और देवताओं को सुख दिया।

एक बार महादेव प्रसन्नचित्त से कैलास की वेदविदित बट की छाया में बैठे हैं, सहजासन में बैठे हैं तब पार्वती शिव के पास आती है। शिवजी ने वामभाग में पार्वती को बिठाया। भवानी पूछती है कि गतजन्म में रामचरित्र पर मैंने शंका की। लेकिन अभी मेरे मन में समाधान नहीं है कि रामतत्त्व है क्या? आप मुझे रामकथा सुनाओ। शिवजी ने कहा, आपने ऐसी कथा पूछी जो सकल लोक को पावन करनेवाली गंगा है। आप उपकारी है। रामतत्त्व वो है जो बिना नेत्र देखे, बिना पैर चले, बिना कान सुने, बिना हाथ स्पर्श करे वो ब्रह्म है। राम के अवतार के कई कारण है, कुछ कारण मैं बताऊं। पांच कारण बताएं। पहला, जय-विजय को शाप मिला। दूसरा, सतीवृंदा ने शाप दिया। तीसरा, नारद ने शाप दिया। चौथा, मनु-शतरूपा की तपस्या का फल। पांचवां, राजा प्रतापभानु को ब्राह्मणों ने शाप दिया। प्रतापभानु दूसरे जन्म में रावण हुआ। उसका भाई अरिमर्दन कुंभकर्ण हुआ और मंत्री था वो विभीषण हुआ। राक्षसों ने तप किया। रावणादि ने वरदान प्राप्त करके दुनिया को त्रस्त कर दिया। दुनिया में भ्रष्टाचार बढ़ा तब धरती अकुला उठी। गाय का रूप धारण करके ऋषिमुनियों के पास गई। ऋषिमुनियों ने कहा, हम लाचार है। देवताओं के पास गई तो उन्होंने कहा, रावण आता है तब हम भी मेरु पर्वत की कंदरा में रक्षण खोजते हैं। सब ब्रह्मा के पास गए तब उन्होंने कहा, अब एकमात्र परमतत्त्व का हमें आश्रय है। ब्रह्मा की अगवानी में भगवान की स्तुति करते हैं। सभी ने परमात्मा को पुकारा। आकाशवाणी हुई, देवगण, मुनिगण, डरो ना। मेरे प्रगट होने के कई कारण है भी और नहीं भी। लेकिन मैं मेरे अंशों के साथ धरती पर अवतार लूंगा।

तुलसी हमें श्रीधाम अयोध्या ले चलते हैं। अयोध्या का सार्वभौम साम्राज्य। राजा दशरथजी गुणनिधि धर्मधुरंधर है। कौशल्यादि रानियां राजाओं को प्रिय है और रानियां राजा के अनुकूल है। पति-पत्नी को प्रभु के चरणकमल में प्रीत है। राजा को एक ही बात की ग्लानि है कि मुझे पुत्र नहीं है। सम्राट गुरुद्वार गए। अपने दु:ख-सुख का निवेदन किया। वशिष्ठजी ने कहा, धैर्य धारण करो। एक पुत्र कामेष्टि यज्ञ करना होगा। महर्षि शृंगी को बुलाया गया। पुत्रकाम यज्ञ का आरंभ हुआ। भक्ति सहित आहुतियां डाली गई। यज्ञपुरुष ने प्रसाद का चरु लेकर वशिष्ठजी को दिया। रानियों को बुलाकर दशरथजी खीर बांटते हैं। प्रसाद पाते ही रानियां सगर्भा स्थिति का अनुभव करती है। समय मर्यादा पूरी होने लगी और परमात्मा को प्रगट होने का समय आया। पंचांग अनुकूल हुआ है। चैत्र मास, शुक्ल पक्ष, नवमी तिथि, भौमवासर, मध्याह्न का समय है। मंद सुगंधित शीतल वायु बहने लगा। पूरे संसार में प्रसन्नता फैलने लगी है। मध्याह्न का समय है। माँ के महल में प्रकाश अवतरित हुआ। चतुर्भुज रूप देखकर माँ स्तुति करने में असमर्थ हुई। माँ कहती है, आप नर अवतार लो। दो हाथ कर लो। प्रभु बिलकुल छोटे बनकर माँ की गोद में शिशु बनकर रोने लगे। प्रभु का रुदन सुनकर अन्य रानियां भ्रमसहित चली आई। कौशल्या माँ की गोद में अलौकिक बालक देखा। दास-दासियों ने आवाज़ सुनी और आवाज़ दशरथ के कानों तक गई। दशरथजी को ब्रह्मानंद की अनुभूति हुई। वशिष्ठादि विप्रवृंद आते हैं। बाजे बजने लगे। बधाई शुरू हुई। म्यानमार की इस व्यासपीठ से आप सभी को रामजन्म की बधाई हो।

बुद्धपुरुष वो है जो सत्यमूर्ति है, प्रेममूर्ति है, करुणामूर्ति है

बाप! आज की कथा के प्रारंभ में सभी को मेरा प्रणाम। 'रामचरितमानस' में जिस रूप में रामकथा अंकित है उसमें पितामह ब्रह्मा का जो दर्शन है उसी दर्शन को हम प्रधान रूप में मिलकर के चारों ओर से दर्शन का प्रयास कर रहे हैं। 'शिवसूत्र' के कुछ मंत्र है, सूत्र है। आप सबको स्मरण है कि जब केदार में कथा हुई थी तब गुरुकृपा से यथामति 'शिवसूत्र' पर कुछ बातें हुई थी। उनमें से छोटे-छोटे सूत्र है 'शिवसूत्र' के। सो मैं पहले बोलूं और आप भी बोले।

चितं मंत्रः
प्रयत्नः साधकः।
गुरुः उपायः।
शरीरं हविः।
ज्ञानं अन्नम्।
विद्या संहारे तदुत्थ स्वप्नदर्शनम्।

पूरे 'शिवसूत्र' में जितने सूत्र हैं इनमें से कुछ सूत्र यद्यपि ये क्रमशः है। उसके आधार पर हम 'मानस-ब्रह्मा' पर आगे बढ़ें। उसके सीधे-सादे सूत्र बहुत सरल हैं। ये जितने सूत्र यहां लिए गये हैं उनमें पहला सूत्र है, 'चितं मंत्रः', भगवान शिव कहते हैं कि तेरा चित्त ही मंत्र है। बड़ा अद्‌भुत सूत्र है मेरी दृष्टि में! राममंत्र, कृष्णमंत्र, शिवमंत्र, गायत्रीमंत्र कई मंत्र है। जैन धर्म के 'नमो अरिहंताणं' आदि-आदि मंत्र; बौद्ध मंत्र; ईस्लाम मंत्र, कोई भी। लाख आप उदारता से; विशालता से समझाये तो भी कृष्णमंत्र की बात आयेगी तो ओर लोग समझेंगे कि ये हिन्दुमंत्र है। 'बिस्मिल्लाह हिर रहमान रहीम।' कहकर कोई बोलेगा तो लाख ये उदार और आकाश जैसा विशाल अर्थसभर रेहमत करनेवाले की बात है उसमें लेकिन फिर हमारी सोच में तो यही आयेगा कि ये ईस्लाम धर्म का मंत्र है। 'बुद्धं शरणं गच्छामि।' का मतलब ये नहीं कि भगवान बुद्ध जो हो गये हैं उसकी ही शरण में मैं जा रहा हूं। जगत में जितने भी बुद्ध हुए हैं उन्हीं की शरण में मैं जा रहा हूं। 'गौतम बुद्धं

शरणं गच्छामि।' होता तो माना जाता कि मैं गौतम बुद्ध की शरण में जा रहा हूं। यहां बुद्ध मानी सभी बुद्धपुरुष। वैसे ओशो कहा करते थे कि 'ॐ नमो अरिहंताणं, ॐ नमो सिद्धाणं।' ये जैन लोगों ने कह दिया कि ये हमारा मंत्र है! तो लोग इसे बहुत संकीर्ण कर रहे हैं ये वैश्विक मंत्र को! यहां केवल जैनों के तीर्थंकर की ही वंदना नहीं है। जगत में जिन्होंने अपने अंदर के कषाय को, अंदर के विकारों को नष्ट कर दिया किसी न किसी साधना पद्धति से ये सभी अरिहंत है। ऐसा कोई भी हो, किसी भी धर्म का हो मैं उसे नमन करता हूं। 'नमो अरिहंताणं' दुनिया में जो भी सिद्ध हो, किसी भी क्षेत्र में सिद्ध हो। संगीतक्षेत्र में सिद्ध हो, शब्दक्षेत्र में सिद्ध हो, शिल्पक्षेत्र में सिद्ध हो। तलगाजरडा को ये लगता है कि केवल अध्यात्म में ही सिद्ध नहीं, धर्म में ही सिद्ध नहीं, जगत के किसी भी कला, विद्या में आप सिद्ध है तो ऐसे सिद्धों को मेरा प्रणाम है। फिर भी लाख ऐसा विशाल दृष्टिकोण से कहे तो भी लोगों के दिल में तो थोड़ा ये हो ही जाता है; जैन कहेंगे कि ये हमारा मंत्र है। और दूसरे लोग भी कहेंगे कि ये हमारा मंत्र कहां है? इसलिए भगवान महादेव ठीक कहते हैं कि 'चितं मंत्रः', हे साधो, तेरा चित्त ही मंत्र है। और जिसने चित्त को मंत्र बनाया उसे पतंजलि बहुत सरल लगते हैं। 'योगश्चित्तवृत्ति निरोधः।'कोई भी मंत्र को निरंतर रटने से एक ध्वनि पैदा होता है; एक संगीत पैदा होता है; एक नाद पैदा होता है। भगवान शिव बहुत विशालता से कहते हैं कि तेरा चित्त ही मंत्र है। ये चित्त हमारे कहने में आ जाये तो ये चित्त मंत्र है। मुश्किल क्या है कि चित्त हमारे कहने में नहीं है! इसलिए खबर नहीं, कितनी प्रकार की मंत्रणा में हमें उलझा देता है! हमारे बस में चित्त हो जाये तो 'चित्त वृत्ति निरोधः।' हो जाये। इसलिए सौराष्ट्र का सवाबापा कहता है कि-

चौदशे चितडुं कह्युं करे नहीं मारुं।
ओचिंतानुं थई गयुं मारे अजवाळुं।
मारा सद्गुरुए तोड्युं वज्रनुं ताळुं।

मुक्त किया मुझे। अब संकीर्णता नहीं है कि बाउन्ड्री में खेलना नहीं है। मैंने एक दिन कहा था कि साधु वो है कि जो स्वर्ग में नहीं समाता लेकिन शून्य में समा जाता है। ये साधु है। और ध्यान रखना मेरे भाई-बहन, आध्यात्मिक साधना जल्दी नहीं होती, धीरे-धीरे होती है। प्रतिपदा, दूज, तृतीया, चतुर्थी, पंचमी ऐसे करते-करते फिर चौदश तक जब गये तब लगा कि मेरा ये चित्त मेरे काबू में नहीं है। गुरु ने मुझे चित्त मंत्र सिखा दिया। मेरा बंधन, मेरी जड़ता तोड़ दी। गुलशन साहब का एक शे'र है -

मेरे मुकद्दर में है फूल खिलाना।
मेरी किस्मत में खुश्बू नहीं है।

बुद्धपुरुषों का काम फूल खिलाना होता है, लेकिन उनकी पीड़ा कुछ अलग ही होती है। तो ये जो साधना की ऊंचाई है वो क्रमशः धीरे-धीरे बढ़ती है। तो चित्त को मंत्र बनाया। लेकिन कौन साधक चित्त को मंत्र बना पायेगा? 'प्रयत्नः साधकः।' जो निरंतर प्रयत्न करता है। प्रमादी का काम नहीं है ये, आलसी का काम नहीं है। ये निरंतर तैलधारावत् ये प्रयत्न ही साधक है। 'शरीरं हविः', 'शिवसूत्र' कहता है, साधो! यज्ञकुंड में समिध डालना, घी डालना, जव-तल डालना, फल डालना, नारीयल डालना मंत्र के साथ। ये कर्मकांड है, करते रहो। उसका भी कुछ फायदा है। पर्यावरण पर असर होती है निःशंक लेकिन जब तक तेरा शरीर ही हवि न हो जाये; तेरे हाथ से तू घी डाले तो ये तो हवि है, लेकिन तेरा हाथ ही हवि हो जाये; हाथ हवि हो जाये मीन्स तेरा कर्तृत्व हवि हो जाय; तेरे कतृत्व का स्वाहा हो जाये। शरीर ही देना पड़ता है। शरीर को होमना पड़ता है मानी देहाभिमान। स्थूल शरीर की यहां बात नहीं।

'ज्ञानं अन्नम्।' हम शरीर को रोज भोजन देते हैं। शरीर तंदुरस्त रहता है, पुष्ट रहता है लेकिन हमारी आत्मा भूखी रह जाती है। और हम पूरी ज़िंदगी शरीर को खाना देते हैं। आत्मा को खाना देते ही नहीं। शरीर पुष्ट होता गया और आत्मा कमजोर होती गई। हमारी आत्मा भूखी न रह जाये इसलिए ज्ञान ही आत्मा की खोराक है। ज्ञान, विद्या आत्मा की खोराक है। कोई भी कला आत्मा की खोराक है। आत्मा इसीसे प्रसन्न रहती है; इसी से नर्तन करती है। लेकिन कब? जिसकी आत्मा ज्ञान का खोराक लेती है। मीरां की तरह, नारद की तरह नाचती है। ये आत्मा शिव की तरह नाचती है। ये आत्मा हनुमानजी की तरह नाचती है। तो ज्ञान है आत्मा का खोराक। और 'विद्या संहारे'; साधना करके किसी शिक्षक के चरणों में बैठकर हमने विद्या प्राप्त की लेकिन कोई ऐसी कमजोरी आ जाये और जैसे साप-सीढ़ी की रमत की तरह हम सर्प के मुंह पर आते ही सीधे पूंछ पर आ जाते हैं, वैसे विद्या कभी-कभी

कमजोरियों के कारण निकल जाती है। और जब आदमी की विद्या खतम हो जाती है, 'विद्यासंहारे तदुत्थस्वप्नदर्शनम्।' जब आदमी की विद्या खत्म हो जाती है तब आदमी को वास्तविक दर्शन नहीं होता, स्वप्नदर्शन होता है। इस पर खोज करनी चाहिए कि स्वप्न क्यों आता है? जब बहुत स्वप्न आये और स्वप्न भी कभी न सोचा हो ऐसा उटपटांग, विचित्र से आये तब समझना कि विद्या का संहार होने लगा है।

ये तो शिवसूत्र है। लेकिन मुझे कहना है, इसमें तीन सूत्र है, 'गुरुः उपायः'; गुरु के बिना कोई उपाय नहीं। लाख प्रयत्न कर लिए फिर भी गुरु बिना उपाय नहीं। ये बहुत महत्त्व का सूत्र है। तो मन को रीपेर करना, बुद्धि को शुद्ध करना, चित्त की धारा को ठीक करना, अहंकार को मुक्त करना, इसका उपाय केवल गुरु है, ओर कोई है ही नहीं। और दुनिया में कुछ लोग कहते हैं कि गुरु की जरूरत नहीं है। मैं मेरी जात को देखूं तो मुझे तो लगता है कि मेरे लिए तो गुरु ही उपाय है। इसके अलावा क्या उपाय है हम जैसों के लिए? तो गुरु है उपाय हम सबका।

अब मुझे आप से ये कहना है कि एक होता है शिक्षक। और शिक्षक भी पिरियड शिक्षक, क्लास टीचर नहीं। दूसरा होता है क्लास टीचर, जो क्लास का मुखिया होता है। तीसरा होता है आचार्य, जो पूरी स्कूल का आचार्य जो अपने दफ्तर में बैठता है। और उसके बाद होता है गुरु, जो स्कूलों में नहीं होता है। वो ही हमारा उपाय है। शिक्षक हमारा उपाय नहीं है। वर्गशिक्षक नहीं और आचार्य भी उपाय नहीं। केवल गुरु ही हमारा उपाय है। अब 'रामचरितमानस' में एक शिक्षक है, जो पिरियड टीचर है, एक क्लास टीचर है, आचार्य भी है और बुद्धपुरुष भी है। 'उत्तरकांड' में है। रामकथा पूरी हुई है। नारद स्तुति करने आये और उसके बाद भगवान शिव पार्वती को कहते हैं 'उत्तरकांड' में कि मैंने आपको रामकथा सुनाई है। पार्वती कहती है कि मैं धन्य हो गई, मुझे बहुत आनंद मिला। लेकिन मेरे मन में ये बात नहीं आई कि आप कागभुशुंडिजी के पास कथा सुनने कब गये थे? अब कहा कि देवी, आप दक्षकन्या थी। दक्षयज्ञ में आप जल गई। तुम्हारे वियोग में मैं बहुत दुःखी हुआ। भटकता रहा। मेरा मन कहीं नहीं लग रहा था। तो फिर मैं चल पड़ा उत्तर की ओर और उत्तर दिशा में एक सुंदर नीलगिरि पर्वत वहां कागभुशुंडि नामक पहुंचा हुआ बुद्धपुरुष कौए के रूप में निवास करता है। मुझे लगा कि मैं वहां जाकर पूछुं कि प्रिय व्यक्ति के वियोग में मुझे कहीं चैन नहीं पड़ रहा! प्रेम है मेरे भाई-बहन, उच्चतम शिखर; उससे आगे कुछ भी नहीं है। दुनिया के सभी रिश्ते-नाते सब नीचे रह जाते हैं प्रेमदेवता के पास। आखिरी उपलब्धि प्रेम है। मोह का क्षय होने के बाद जो अवस्था आती है उसीको मेरे गोस्वामीजी ने दृढ़ प्रेम कहा है। प्रेम से ऊंचा इस दुनिया में कुछ नहीं है।

बुद्धपुरुष की बिलकुल छोटी-सी व्याख्या यदि लेनी है तो इतनी ही लेना। बुद्धपुरुष वो है जो सत्यमूर्ति है, प्रेममूर्ति है, करुणामूर्ति है। ये त्रिमूर्ति है बुद्धपुरुष। उसको देखकर, उसकी महसूसी में हमारी आत्मा ही बोलेगी कि ये आदमी कभी असत्य नहीं बोल पायेगा। गांधी के पास बड़ों-बड़ों ने विरोध किया। लेकिन उसके सत्य के सामने किसी ने ऊंगली नहीं उठाया। सत्यमूर्ति होता है बुद्धपुरुष। दूसरा है प्रेममूर्ति। उसके पास जितना प्रेम होता है, विश्व में किसी के पास नहीं होता। और बुद्धपुरुष के समान कोई करुणामूर्ति नहीं होता। त्रिमूर्ति एक विग्रह धारण करती है उसीका नाम है बुद्धपुरुष। हम कबीर को देखें, मीरां को, नानक को देखें। अरे, नरसिंह मेहता को देखो, बुद्ध को, महावीर को, जिसस को, किसी को भी देखो। हम सब एक खिलौने जैसे हो गए हैं! ये रोबोट तो अब बने है, हम तो कबके बन चुके हैं! हैं मानव लेकिन हम यंत्र बन चुके हैं, यंत्र में जी रहे हैं। अब यंत्र मानव होने लगा है और मानव ओलरेडी यंत्र हो चुका है! सब यंत्रों की तरह जी रहे हैं। मशीन की तरह जीये जा रहे हैं। हमारे गुजराती में एक कविता है -

जगतना काचना यंत्रे खरी वस्तु नहीं भासे,
न सारा के नठारानी जराये संगते रहेजे।
गुजारे जे शिरे तारे जगतनो नाथ ते स्हेजे।
गण्युं जे प्यारुं प्याराए अति प्यारुं गणी लेजे।

- बालाशंकर कंथारिया

तो 'उत्तरकांड' में ये जो बात आती है वहां प्रेम की बात करते हैं महादेव और कहते हैं कि हे प्रिये, हे पार्वती, आप सती के रूप में जल गई उसके बाद मैं आपके वियोग में बहुत भटकता रहा। 'वियोग प्रिय तोरे।' हे प्रिया, तेरे वियोग में, ये शब्द शंकर बोल रहे हैं, कोई गैर नहीं बोल रहा। विश्वास के शिखर पर जिसका आसन है वो

शिव बोल रहे हैं। तो मैं उत्तर दिशा में आगे बढ़ा और एक ही काम, निरंतर रामकथा गाना। और वृद्ध-वृद्ध विहंग श्रेष्ठ वहां कथा सुनने के लिए आते थे। हे भवानी, जो इस सरोवर में निवास करते थे। मैं वहां गया और कुछ काल मैंने हंस का रूप ले लिया और मैं आखिरी पंक्ति में बैठकर बुद्धपुरुष के मुख से रामकथा सुनता था। तो हे भवानी, मैं कब गया वो बात तो मैंने आपको सुना दी, लेकिन गरुड कब गया भुशुंडि के पास जो अब सुनिये।

जब रघुनाथ किन्ह रणक्रीडा।
समुजत मोहि होत अति पीड़ा।।

भगवान राम ने लंका के रणमैदान में जब रणलीला की और मेघनाद के हाथ से भगवान नागपाश में बंध गये। नारदजी ने गरुड को भेजा और गरुड ने आकर नाग के पाश को खत्म करके भगवान को मुक्त किया और गरुड वहां से लौटा तो उसके मन में संदेह पैदा हुआ कि जिसका नाम जपने से संसार बंधन से मुक्त होता है उसको एक सामान्य तुच्छ राक्षस ने बांध दिया? और ये भगवान भगवान है? क्योंकि जो मेरे द्वारा मुक्ति प्राप्त करे। मैं गया तब तो बंधन से मुक्त हुआ। ये काहे का ब्रह्म है? गरुड के मन में संशय पैदा हुआ जैसे आपको भी हुआ था।

मैं आपसे हर वक्त निवेदन करता हूं कि संशय आये उससे पहले बहुत सावधानी रखना। तुम्हारे दिल के दरवाजे सबके लिए खुले रखना। लेकिन संदेह को मेहमान मत बनाना। और फिर 'गीता' के सूत्र को अनुभव में लेना ही पड़ेगा। 'संशयात्मा विनश्यति।' हमारा नाश किये बिना संदेह हमको छोड़ेगा नहीं। बड़ों-बड़ों के जीवन को खत्म कर देता है ये संदेह। गुरु शिष्य से द्वेष न करे। शिष्य गुरु से न करे। गिने-चुने लोग जो मेरी व्यासपीठ के आसपास है वो भी अगर गांठ बांध ले कि संदेह को हम आने नहीं देंगे तो तुम्हारा जीवन चित्रकूटी जीवन हो जाएगा; वरना पंचवटी हो जाएगा। पंचवटी संशय की बात है। चित्रकूट विश्वास का प्रदेश है। आज लोगों के संसार क्यों बिगड़ते हैं? मूल उसमें खोजो तो संशय है। बात-बात पर वहम करते है! और जब संशय पैदा होता है आदमी के मन में तब वो कहता है कि मैं जो कहता हूं वो ही सच है। और याद रखना, भक्तिमार्ग में जो दिखाई दे वो सत्य नहीं है, सुनाई दिया वो ही सत्य है। साहब! भवानी ने जो देखा राम को लीला करते हुए कि ये राम है, वो सत्य सिद्ध नहीं हुआ। सत्य तो वो ही सिद्ध हुआ जो शंकर के मुख से सुना। बाप! जिसके दिल में संशय प्रवेश हो जाता है फिर गुरु-शिष्य, भाई-भाई, पति-पत्नी, तब आदमी ऐसा सोचता है कि मैं कहता हूं वो ही सत्य। लेकिन भक्तिमार्ग में देखा हुआ प्रतीत नहीं होता, सुना हुआ प्रतीत होता है।

तो पैर दबा रहे थे लक्ष्मण जनकपुर में। बोले, महाराज, एक बात पूछुं? महाराज, अखंड पवित्रता का प्रतीक जानकी। और जनक जैसा विदेही पुरुष। अब मुझे खबर है कि धनुष टूटेगा और आपका और जानकीजी का ब्याह होगा और पुष्पवाटिका में आपका मिलन होगा। तो अखंड पवित्रता की मूर्ति है जानकी। अखंड ज्ञान और विवेक के प्रतीक मिथिलेश जनक है। उसको आपके चरण बाद में मिले। जानकी को भी ये चरण बाद में मिले। लेकिन मेरी समझ में नहीं आता कि एक स्त्री ने भूल की। एक अहल्या जो शिला हो गई उनको तुमने पहले चरणदान दे दिया! तुम्हें खरे-खोटे का तो भान ही नहीं है! जो अहल्या कि जिसको सबने छोड़ दिया और विश्वामित्रजी ने जरा-सा संकेत जो कर दिया तो उसे आपने सामने से जाकर चरण दे दिये! और वो खुद बोली; चलो, ये उसका आत्मनिवेदन है लेकिन जो भी हो।

मैं नारि अपावन प्रभु जग पावन रावन रिपु जन सुखदाई।
राजीव बिलोचन भव भव मोचन पाहि-पाहि सरनहिं आई।।

तो जो अपने आप को अपवित्र कहती है उसको आपने अपने चरण दे दिये! माफ़ करियेगा। आप ईश्वर है, मेरे सबकुछ है लेकिन ये एक कमजोरी तो आपमें है कि आप को खरे-खोटे का भान नहीं है! आप सबको अपने समान मानते हो लेकिन तुम्हारे स्वभाव जैसा कोई नहीं है। तुम छले जा रहे हो! तुम्हें धोखा मिल रहा है दुनिया में लेकिन आप सबको बस अपनाये जा रहे हो! अभी एकांत है। मैं चरण सेवा कर रहा हूं तो आप मेरी जिज्ञासा शांत कीजिए कि ये आपने कैसे किया? बोले कि अहल्या को छूने दिया और मैंने उसको छूआ इसमें मुझे खरे-खोटे का भान नहीं, ऐसा आरोप क्यों करता है? ये तो मेरा कर्तव्य था। ये अहल्या पर ऊंगली उठानेवाले जरा मुझे भी तो देखिये। उसने भूल की, शाप मिला। थोड़ी छली गई। मैंने भी तो विष्णु के रूप में छल किया था वृंदा के साथ! तो जैसे यहां

अहल्या को शाप मिला, शिला हो जा। वहां मैंने छल किया तो वृंदा ने शाप दिया कि तुम शालिग्राम की शिला हो जाओ। मुझे भी शाप मिला। मैं भी तो शिला हूं। और ये भी तो शिला है। मेरा कर्तव्य था। एक शापित, दूसरे शापित को आश्वासन दे। ये राम है। राम को कभी कोई पातक छू नहीं सकता, लेकिन अपने आप को वो ऊतार रहे हैं कि अहल्या, तूने कुछ किया, ऐसा मैंने भी किया। और तू शिला, मैं शालिग्राम। और मैं पूजा जाऊं और लोग तुझे धुत्कारे ये सह्य नहीं है। खरे-खोटे का भान मुझे है, दुनिया को नहीं। इसलिए मैं तुझे स्थापित करना चाहता हूं। राम दु:खहरण है; राम संशयहरण है। इसलिए तुलसी राम की शरण में है।

राम समान प्रभु नाही कहुं।

छोटी-छोटी भूलें होती है उसे पाप का नाम मत दो। मैं आपको मजबूत बनाना चाहता हूं। आप ढ़ीले मत हो। आप पाप भी क्या खाक कर सकते हो? पाप करने की भी हममें क्षमता क्या है? पाप तो किया हिरण्यकशिपु ने। पाप तो किया कंस ने। तो मैं आपसे बातें कर रहा हूं कि संशय को आने न दो। संशय आया तो फिर बहुत गड़बड़ होगी। संशय आता है तब आदमी का आग्रह रहता है कि मैं कहूं ऐसा हो। मैंने देखा है। लेकिन भक्तिमार्ग में देखी हुई बात नहीं, सुनी हुई बात मानी जाती है। विभीषण आया और देखा सब विपरीत। यहां तो सब रामवाले रोक रहे हैं। और मैं तो आया था, 'श्रवण सुयश सुनि आयहु।'जब ये (संशयवाला) सत्य कोई स्वीकारता नहीं तब उसमें आक्रोश आता है। और जब आक्रोश हद के बाहर निकल जाता है तो कभी-कभी हिंसा तक पहुंच जाता है। सावधान! तुम समर्थ हो तो तुम तुम्हारे सामर्थ्य का गौरव करो, लेकिन दूसरे बिलकुल न के बराबर है ऐसा दावा न करो। आपकी ऊंचाई को सलाम! लेकिन दूसरों को निम्न न समझो।

तो खगराज गरुड के मन में संदेह पैदा हुआ। जिसका नाम लेने से मुक्ति मिले उस राम में तो मैंने ऐसा कुछ देखा ही नहीं! भवानी, ये गरुड संदेह ग्रस्त हो गया है। फिर ये एक पिरीयड़ टीचर के पास पहुंचा। जो क्लासटीचर नहीं था। वो नारद के पास गया। और नारद को मैं यहां टीचर कहूंगा। सब विषय जानता है; त्रिकालज्ञ है, सर्वज्ञ है, सब क्लास रूम की उसे जानकारी है। क्योंकि 'गति सर्वत्र तुम्हारी।' नारद क्लासटीचर नहीं है, ये विज़िटिंग टीचर है। कभी मर्त्यलोक, कभी पाताललोक, कभी स्वर्गलोक, कभी कैलास, कभी वैकुंठ; ये आदमी घूमता रहता है। पहले संशयग्रस्त गया एक घूमते हुए टीचर के पास। और नारद ने कहा कि तुझे जो माया लगी है न उस माया ने मुझे भी बहुत नाच नचाया है। तेरा इलाज मैं नहीं कर पाऊंगा। तू एक काम कर, क्लास टीचर के पास जा। यहां चतुरानन क्लास टीचर है। नारद ने गरुड को भेजा ब्रह्माजी के पास वो तेरा इलाज करेगा। क्योंकि वो सर्जक है। वो तेरा इलाज करेगा। वो सर्जक है और उसकी सृष्टि में ये सब घटना घटती है। तू जा उसके पास। तो फिर ब्रह्मा के पास गरुड आते हैं और ब्रह्मा ने जब सुना तो कहे कि पूरा जगत मैंने बनाया है गरुड लेकिन परमात्मा की माया में इस पूरा जगत बनानेवाला ही कैसा है! मैं मुख्यशिक्षक हूं, लेकिन मैं नहीं कर पाऊंगा। तू आचार्य शंकर के पास जा। शंकराचार्य आचार्य है। तीसरी जगह भेजा। शंकर कहते हैं, हे भवानी, वो जब आया तब उस समय मैं कुबेर के घर जा रहा था। और तुम कैलास में थी। तो मैंने बहाना बनाया कि कुबेर के पास मैं एक खास काम के लिए जा रहा हूं। और आप मार्ग में मिले। तुम ये सब टीचर, क्लासटीचर, आचार्य सबको छोड़ो। मैं तुम्हें एक बुद्धपुरुष के पास लिए चलता हूं। जहां मैं भी आखिरी पंक्ति में बैठकर पूरी रामकथा सुन चुका हूं। तो तू वहीं जा; वो ही तेरे संदेह का निवारण करेगा। और उसके बाद गरुड उत्तर दिशा की ओर गये। और यहां ऐसे समय गरुड भुशुंडि के पास पहुंचता है। वृद्ध-वृद्ध हंस बैठ गये हैं। और भुशुंडि गुफा से बाहर आये और एक चट्टान पर भुशुंडिजी सबको नमन करके बैठ गये। कथा का आरंभ होना ही था, उसी समय खगराज आये। और जैसे खगराज आये, सब खड़े हो गये। केवल श्रोता ही नहीं, मेरा भुशुंडि भी खड़ा हो गया। और स्वागत प्रवचन करते हुए कहा-

नाथ कृतारथ भयउं मैं तव दरसन खगराज।

आप आसन ग्रहण करे। आपके दर्शन से मैं कृतार्थ हो गया। मुझे आज्ञा करो, हे प्रभु, आपका आना किस लिए हुआ।

अब गरुड की पांखें भी ढ़ीली हुई और शरीर का गुरूर भी ढ़ीला हुआ। आंखें थोड़ी नम हुई। और गरुड बोले-

सदा कृतारथ रूप तुम्ह कह मृदु बचन खगेस।
जेहि के अस्तुति सादर निज मुख कीन्हि महेस।।

आप तो तातरूप है। गरुड में थोड़ा अहंकार भी है। लेकिन तुलसी कहते हैं, बुद्धपुरुष के पास जाते ही 'कह मृदु बचन खगेस।' मैं आपके बारे में क्या कहूं? आपकी स्तुति तो महादेव ने अपने मुख से कही है। आपके बारे में उसने मुझे बताया इसलिए मैं यहां आया।

देखि परम पावन तब आश्रम।
गयउ मोह संशय नाना भ्रम।।

मैं जिस लिए आया। आपका दर्शन करने से बात पूरी हो गई। किसी का दर्शन अपने आप काम करता है। तेरे आश्रम का दर्शन। मात्र पैर रखा। 'गयउ मोर संशय नाना भ्रम।' जो चतुरानन नहीं मिटा पाये। पहले तो संशय ही था, अब तो मोह भी गया और नाना प्रकार के छोटे-बड़े भ्रम भी गये। गरुडजी कहते हैं कि 'आज्ञा करो' ये आपकी भाषा बंद करो। अब तो बार-बार 'बिनवऊं प्रभु तोही।' अब तो मैं तुम्हें विनय करूं।

आपके आश्रम में पैर रखते ही मेरे हृदय का कचरा सब दूर हो गया। मेरे में अपने आप विशुद्धि आने लगी है। अब तो भगवन्, मैं विनय करता हूं कि आप हमें रामकथा सुनाओ। मैं खगपति हूं, पक्षियों का राजा, मेरी पांखों से वेद निकलता है। ये वेद मेरी पंखों से निकले वो वेदवाला मैं तुम्हारे पास रामकथा की भीख मांग रहा हूं। मैं बार-बार बिनती करता हूं। गरुड की विनीत बानी सुनकर बिलकुल सरल-सप्रेम बुद्धपुरुष का मन प्रसन्न हो गया।

प्रथमहिं अति अनुराग भवानी।
रामचरित सर कहेसि बखानी।।

शंकर भगवान ने गरुड को तो भेज दिया था और वो अब पार्वती को कहते हैं कि वहां ऐसा-ऐसा हुआ था। ये कैसे कहा होगा? मनुष्य के मगज के अंदर सात कोष है। और उनके अंदर भी अनेक सूक्ष्म कण है। ये मनुष्य के मगज में सात करोड बातें एक साथ संग्रह हो सकती है। यदि मनुष्य का मस्तिष्क इतना कार्यरत है तो शिव का मगज तो कैसा होगा? और वो तो प्रकाशित है। क्योंकि चन्द्रमाँ और गंगा दोनों शिवजी के मस्तक पर रहते हैं। चन्द्रमाँ प्रकाशित करता है और गंगा उसको पवित्र रखती है, वो तो सब पकड़ लेगी कि कहां कौन बात हुई, कौन कथा हुई?

तो मुझे कुल मिलाकर कहना था कि यहां ब्रह्मा की भूमिका है क्लास टीचर की और उसने गरुड को आचार्य के पास पहुंचाया। और आचार्य का कर्तव्य ये है कि बांध न दे; उसको किसी बुद्धपुरुष तक पहुंचा दे। मैं अपने जीवन की बात कहूं तो मेरा टीचर था मोहनबापा पंड्या। वो मुझे जगन्नाथ साहब शिक्षक तक ले गये। वहीं से मैं गया एक आचार्य के पास- न.ना. महेता। और घूम-घूम कर के आया त्रिभुवन चरणों में, जो मेरा बुद्धपुरुष है। ये ही तो जीवन की यात्रा है। जहां समस्त संशयों का निवारण हो। लेकिन इनमें ये चार पड़ाव से गुज़रना होता है। इसमें ब्रह्मा की भूमिका है मुख्य शिक्षक की। इसीलिए मैं ब्रह्मा को इसी रूप में याद करने लगा।

तेरी मुहब्बत से लेकर तेरी अलविदा कहने तक।
मैंने सिर्फ़ तुझे चाहा है, तुझसे कुछ नहीं चाहा।
- कतिलसाहब

कल हम भगवान राम के प्राकट्य का गायन कर चुके हैं। 'मानस'कार कहते हैं कि जैसे माँ कौशल्या के प्रासाद में राम प्रगटे वैसे सुमित्रा ने दो पुत्रों को जन्म दिया और कैकेई ने एक पुत्र को जन्म दिया। पूरी अयोध्या चार पुत्रों को प्राप्त कर आनंद में डूब गई और एक महीने तक उत्सव चला। किसीको पता नहीं लगा कि एक महीना कैसे बीत गया। मानो सबको लगा कि हर पल रामप्राकट्य की क्षण है। चार लालन को प्राप्त करके अयोध्या धन्य हुई है। फिर वशिष्ठजी को बुलाया गया। और दशरथ के चारों पुत्रों का नामकरण संस्कार हुआ। वशिष्ठजी नामकरण करते हुए बोले कि हे दशरथजी, जो आनंद का समुद्र है, सुख का राशि है, जिसका नाम दुनिया को आराम, विराम देगा, उसका नाम राम रखता हूं। राम के समान वर्ण, स्वभाव, चेहरा सब कुछ कैकेयी के पुत्र में दिखता है, ये कैकेयीनंदन जो है वो सब को भर देगा। इसलिए उसका नाम भरत रखता हूं। सुमित्रा के दोनों पुत्रों का नामकरण करते बोले कि जिसके नाम से शत्रु नहीं, शत्रुता का नाश होगा; वैरी नहीं, वैरवृत्ति का नाश होगा ऐसे बालक का नाम मैं शत्रुघ्न रखता हूं। और फिर जिसमें सब लक्षण है और जो राम का प्रिय पात्र बनेगा, पूरे जगत का जो शेष नारायण के रूप में आधार बनेगा उसका नाम लक्ष्मण रखा। जो आराम दे वो राम। सबका शोषण नहीं, पोषण करे वो भरत। दुश्मन वृत्ति का नाश करे वो शत्रुघ्न। और जो सबका आधार बने वो लक्ष्मण। राजन्, ये आपके पुत्र तो है लेकिन ये वेदों के सूत्र भी है। बड़ा उत्सव हुआ। फिर चुड़ाकरण, कर्णवेध संस्कार हुआ। फिर यज्ञोपवित संस्कार हुआ। और उसके बाद चारों भाई विद्या पाने के लिए गुरुगृह गये। अल्पकाल में तमाम विद्या प्राप्त की।

तुलसी कहते हैं कि अब आगे की कथा सुनो। अयोध्या से दूर बिहार के पास बक्सर है, वहां विश्वामित्र मुनि का आश्रम है। जप, तप, यज्ञ आदि करते हैं। लेकिन ताड़का के संतान सुबाहु और मारीच उनके सत्कर्म के बाधक है। विश्वामित्र अयोध्या आते हैं। दशरथ उसका स्वागत करके पूछते हैं कि मैं आपकी क्या सेवा करूं? विश्वामित्र कहते हैं कि मैं आपके पास याचना करने आया हूं। संपत्ति नहीं, संतति चाहिए आपकी। ये तुम्हारे चार पुत्र यज्ञ की प्रसादी है। और वहां मेरा यज्ञ रुका हुआ है। यज्ञ की प्रसादी यज्ञरक्षा के लिए दो पुत्रो को दो। शुरू में तो दशरथ मना करते हैं, लेकिन फिर वशिष्ठजी के कहने पर राजा ने अपने दोनों पुत्रों को विश्वामित्रजी को सोंप दिये। माताओं का आशीर्वाद लेकर राम-लक्ष्मण विश्वामित्रजी के संग गए। विश्वामित्रजी को आज महानिधि प्राप्त हुई। ताड़का दौड़ी। विश्वामित्र के संकेत पर प्रभु ने एक ही बाण से ताड़का को निर्वाणपद दे दिया। दूसरे दिन यज्ञ का आरंभ होता है और राम बिना फने का बाण मारकर मारीच को समुद्र के तट पर लंका में भेज देते हैं। और सुबाहु को अग्नि के बाण से जलाकर निर्वाण देते हैं। यज्ञ पूरा हुआ। कुछ दिन भगवान रहे।

विश्वामित्रजी के संकेत पर जनकपुर की यात्रा का आरंभ हुआ। रास्ते में गौतमऋषि का आश्रम आया। और अहल्या पत्थर देह है। भगवान अपनी चरणधूली से अहल्या का उद्धार करते हैं। परमात्मा ने अहल्या का उद्धार करके समाज में पुन: स्थापित कर दिया। भगवान ने गंगा अवतरण की कथा विश्वामित्रजी से सुनी। गंगास्नान किया। तीर्थों के देवताओं को दान देकर प्रभु विदेहनगर जनकपुर पहुंचे। सबको लेकर जनकजी आम्रकुंज में विश्वामित्रजी के दर्शन-स्वागत के लिए आये। बाग देखने गए राम-लक्ष्मण आये और उसे देखकर महाराज जनकजी स्तंभित हो गये! विश्वामित्र से पूछने लगे, ये कौन दो सुंदर बालक है? जनक कहते हैं, महाराज, मेरा मन सहज वैराग्ययुक्त है। लेकिन खबर नहीं, ये दो भाईयों को देखकर मेरा वैराग्य छूटा जा रहा है! और इन बालकों के प्रति उतना अनुराग क्यों फूटता है? विश्वामित्र महाराज मुस्कुरा रहे हैं और कह रहे हैं कि महाराज, ये सबको प्रिय है। परमतत्त्व की एक व्याख्या है कि वो सबको प्रिय होता है। परिचय दिया कि ये दशरथ के पुत्र है; कौशल्यानंदन राम, सुमित्रानंदन लक्ष्मण मेरे कार्य के लिए आये, मेरा यज्ञ सफल हुआ। रास्ते में अहल्या का उद्धार किया। और मेरे कहने पर आपके यहां धनुषयज्ञ देखने आये हैं। जनकजी बहुत प्रसन्न हुए। और विश्वामित्रजी से कहते हैं कि मेरे महल में एक 'सुंदरसदन' है, आप वहीं ठहरो। विश्वामित्र के साथ राम-लखन 'सुंदरसदन' में विश्राम के लिए आये। यहां तुलसी ने लिखा है कि दोपहर का सब ने भोजन किया और फिर सबने थोड़ा विश्राम किया। कथा को भी मैं भोजन के लिए यहां विराम देता हूं।

बुद्धपुरुष की बिलकुल छोटी-सी व्याख्या यदि लेनी है तो इतनी ही लेना। बुद्धपुरुष वो है जो सत्यमूर्ति है, प्रेममूर्ति है, करुणामूर्ति है। ये त्रिमूर्ति है बुद्धपुरुष। उसको देखकर, उसकी महसूसी में हमारी आत्मा ही बोलेगी कि ये आदमी कभी असत्य नहीं बोल पायेगा। सत्यमूर्ति होता है बुद्धपुरुष। दूसरा है प्रेममूर्ति। उसके पास जितना प्रेम होता है, विश्व में किसी के पास नहीं होता। और बुद्धपुरुष के समान कोई करुणामूर्ति नहीं होता। त्रिमूर्ति एक विग्रह धारण करती है उसीका नाम है बुद्धपुरुष।

कथा-दर्शन

- कथा ही हमारी समस्या का जवाब दे पाएगी।
- भक्तिमार्ग में देखा हुआ प्रतीत नहीं होता, सुना हुआ प्रतीत होता है।
- हरिस्मरण से आस्था की नीव परिपक्व होती है।
- ब्रह्म को पहचानना बड़ा आसान है, बुद्धपुरुष को पहचानना कठिन है।
- बुद्धपुरुष वो है जो सत्यमूर्ति है, प्रेममूर्ति है, करुणामूर्ति है।
- बुद्धपुरुष कभी विषम-असम हो ही नहीं सकता।
- साधु मिले तो समझना, सुधा का प्याला मिला।
- साधु का संग स्वर्ग है, दुर्जन का संग नर्क है।
- साधुसंग का स्वर्ग परम शाश्वत है, अखंड है।
- एकमात्र सद्गुरु का आश्रय जीव को मुक्त रखता है।
- पादुका को जड़ मत समझना; वो स्वयं गुरुचरण है।
- जहां वैराग होगा वहां अनुराग होगा ही। सच्चा वैरागी अनुरागी होगा ही।
- हृदय में भरोसे के देवता की स्थापना होनी चाहिए।
- पूर्ण भरोसा बड़ी उपलब्धि है।
- बंदगी को ज़िंदगी से बिलग मत करो। ज़िंदगी ही बंदगी है।
- जब व्यक्ति समझ के साथ चुप हो जाए तब अस्तित्व बोलता है।
- प्रत्येक व्यक्ति को समय होने पर निवृत्ति की ओर जाना चाहिए।
- किसी की सहजता को छीन लेना अक्षम्य है।
- महोब्बत कभी सांप्रदायिक नहीं होती।
- प्रेम से ऊंचा इस दुनिया में कुछ नहीं है।
- परमात्मा के प्रेम में पात्र की नहीं, पात्रता की जरूरत है।

ब्रह्मा निर्माण करता है, विष्णु निर्वाह करता है और शिव निर्वाण करता है

'मानस-ब्रह्माजी' किस-किस रूप में दर्शन देते हैं? 'रामचरितमानस' में उसका क्या-क्या रोल है, उसकी गुरुकृपा से कुछ चर्चा कर रहे हैं आंतरिक विकास और विश्राम के लिए। कभी-कभी ऐसा दिखता है, जो कर्मयोगी होता है, निरंतर कर्म करता है वो कहने लगता है, कर्म ही पूजा है। उच्छी बात है। लेकिन केवल कर्म की चर्चा करनेवाले कभी-कभी भावशून्य हो जाते हैं। अथवा तो उसकी भजन में रुचि नहीं रहती। हम तो कर्म करे, माला क्या करे? कथा क्या सुने? कर्म अच्छी बात है। स्वागत योग्य है। कभी-कभी निरंतर कर्म करनेवाला कहता है, ज्ञान की क्या जरूरत है? कर्म करो।

कर्मवादी बधां कर्म करता रहे,
एहने उंघवुं केम फावे?

और योगेश्वर 'गीता' में कहते हैं, तेरा अधिकार मात्र कर्म में है, 'मा फलेषु।' तू कर्म कर, कर्म कर, कर्म कर। लेकिन ब्रह्मा का दर्शन हम 'मानस' में कर रहे हैं तो हमें लगता है, ब्रह्मा कर्म करता है इस में तीनों का समन्वय है। ब्रह्मा वैसे तो कर्म करनेवाला आदमी है; निरंतर सर्जन करता है। सृष्टि का सर्जन करना; ये करना, ये करना, निरंतर चलता है ब्रह्मा का। लेकिन 'उत्तरकांड' में तुलसीजी बुद्धि की संज्ञा देते हैं। इसका मतलब ये हुआ कि ब्रह्मा बौद्धिक है। और बुद्धिमान ज्ञानी होता है। तो बुद्धि के देवता होने के कारण ब्रह्मा ज्ञानी है। लेकिन बहुधा लोग मानते हैं कि ब्रह्मा भक्त नहीं है, तो ये गलत है। हम 'उत्तरकांड' की ओर गति करें। 'लंकाकांड' में जहां ब्रह्मा ने स्तुति की वहां-

खल खंडन मंडन रम्य छमा।
पद पंकज सेवित संभु उमा।।

ब्रह्मा कहते हैं, हे प्रभु, खल को नर करते हो; पृथ्वी की रमणीयता को मंड़न करते हो। तो वहां ब्रह्माजी वरदान मांगते हैं और कहते हैं कि मुझे आपके चरणों में प्रेम दो। उसका अंतःकरण का कोई एक्स-रे लिया जाए तो ये आदमी भक्त है। क्योंकि प्रेम की याचना भक्त के सिवा कोई नहीं कर सकता। प्रेम के बिना ज्ञान शोभा नहीं देता। ये 'मानस' का सूत्र है। फिर भी ज्ञानी लोग प्रेम नहीं करते। ये तो अपने आपको असंग बनाए रखते हैं। और ब्रह्मज्ञानी होते हुए कहते हैं-

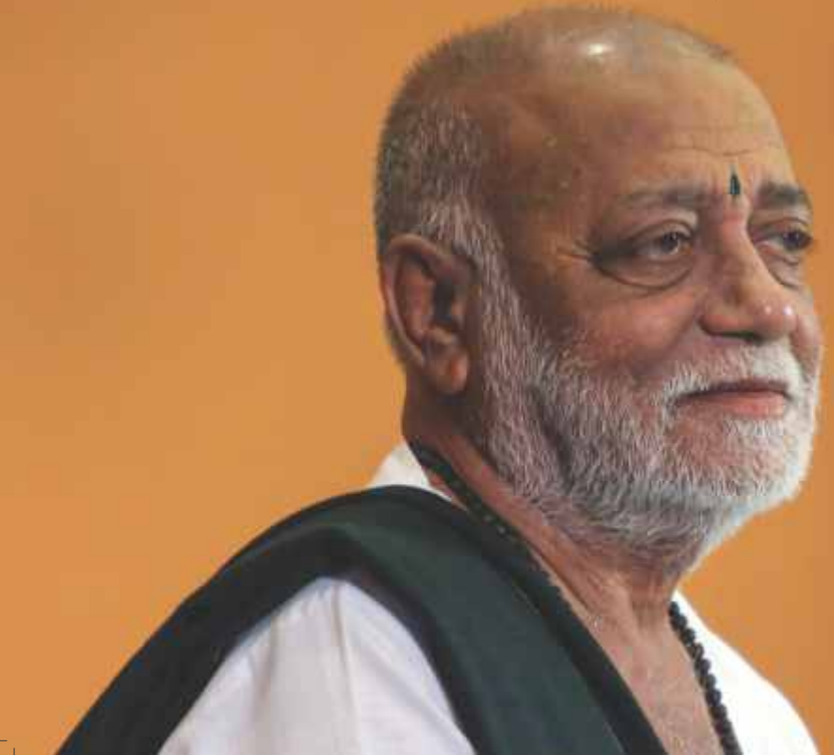

चरनांबुज प्रेम सदा सुभदं।

लेकिन ब्रह्मा में भाव है, भजन है। ब्रह्मा प्रेमी है। और मैं ब्रह्मा को पेश तो कर रहा हूं लेकिन एक बुद्ध पुरुष के लिए भी मैं बोल रहा हूं। ब्रह्मा का सब से बड़ा भावजगत तब दिखता है जब वाली के यज्ञ में नारायण आए और तीन कदम पृथ्वी मांगी एक ब्रह्मचारी के रूप में। और वाली ने कह दिया, उम्र भी छोटी है, समझ भी छोटी है। मेरे पास जो मांगता, मैं देता। तीन कदम पृथ्वी ही मांगी मेरे से! लेकिन तीन कदमों में वो समग्र त्रिलोक को नाप लेते हैं। उसमें एक चरण ब्रह्मलोक में गया। ब्रह्मलोक मानी ब्रह्मा का लोक। वहां जब इस विराट को नाप लेता है तब एक चरण अचानक ब्रह्मलोक में। भगवद्चरण को देखकर ब्रह्मा की भक्ति फूट पड़ी! जल लाओ, पात्र लाओ। ये चरण मिल गये हैं, जल्दी प्रक्षालन कर लूं। प्रेमी लम्हा नहीं चुकता। याद रखना, मैं कथा को ही प्रेमयज्ञ कहता हूं। इसलिए आज की दुनियादारी में जो 'प्रेम' शब्द का उपयोग करते हैं, मेरा प्रेम उस प्रेम का परिचय नहीं देता।

'रामचरितमानस' का एक शब्दब्रह्म है 'परम प्रेम।' जब व्यक्ति में परम प्रेम की अवस्था आती है तब दो नहीं रहते, एक हो जाते हैं। 'परम प्रेम पूरन होउ भाई।' वहां कुछ नहीं रहता। मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार कुछ नहीं। 'भरत हि मोहि कछु अंतर काहू।' ये दोनों परम प्रेम में अवस्थित है। इसलिए भरत राम है; राम भरत है। ज्ञानी प्रदेश के जनकपुरवाले लोग भी पहचान नहीं पाते, इसमें भरत कौन? राम कौन? व्यासपीठ से आपने कई बार सुना। चौदह साल के बाद राम और भरत मिले तब तलगाजरडा बोला है, कौन राम? कौन भरत? कोई पहचान नहीं पाए कि किसका वनवास हुआ? परम प्रेम में यही स्थिति होती है। यहां वो परम प्रेम की चर्चा है। दुनिया जब भी समझ सके। न समझे तो मैं दूसरा जनम लूंगा। ये मेरा वादा है। एक स्त्री परम प्रेम में चली जाती है तब ये स्त्री कान्ताबेन, शान्ताबेन नहीं होती; ऐर-गैर नहीं होती; राधा ही होती है। और एक पुरुष जब परम प्रेम में डूब जाता है तब कांतिलाल, मगनलाल नहीं होता; ये स्वयं कृष्ण होता है। और दोनों 'ब्रह्म लटकां करे ब्रह्म पासे।' जिसको कभी तुलसी चिद्विलास कहते हैं। नरसिंह मेहता ने कहा, 'ब्रह्म लटकां करे।' परमप्रेम में भरत राम का भाई नहीं होता; भरत राम होता है। परम प्रेम में राम भरत के केवल ज्येष्ठ बंधु ही नहीं होते, परमात्मा होते हैं। चैतन्य महाप्रभु कृष्ण प्रेम में डूब जाए। परम प्रेम किसे कहते हैं? परम प्रेम उसको कहते हैं-

अन्याभिलाषिता शून्यम् ज्ञानकर्मादि अनावृतम्।

जीवन में जब कोई अभिलाषा न रहे तब जो होता है। जब सब शून्य हो गई अभिलाषा तब किसी की मौजूदगी उसको कहते हैं परम प्रेम। कोई अन्यकी अभिलाषा न रहे।

प्रेम में मांग नहीं होती। एक बात सुन लो, प्रेम में कभी न्याय नहीं होता। सीता ने राम को प्रेम किया तो सीता न्याय नहीं मांगती। सीता न्याय मांगती तो प्रेम विकलांग हो जाता। जानकी ने न्याय नहीं मांगा क्योंकि सीता समझती थी, प्रेम में अपने को ही सजा दी जाती है, औरों को थोड़ी दी जाती है? प्रेम में दंड़ अपने को। प्रेम न्याय नहीं मांगता। प्रेमी चाहता है, दंड़ मुझे मिले, मेरे प्रेमी को न मिले। प्रेम को ज्ञान-कर्म की जरूरत नहीं है। उसे वो बेपर्दा करता है। 'आनुकुलेन'; कुल का अर्थ होता है किनारा, नदी का किनारा। आनुकुल का अर्थ होता है जिस किनारे पर मेरा ठाकुर, मेरा कुल भी वो। मैं सामने तट पर न रहूं। मैं विरोध में न जाउं। मीरां कहती है, जब हम कृष्ण को प्रेम करते हैं तो हमारा कुल यदुकुल हो जाता है। कृष्ण को प्रेम करो तो हमारा गोत्र अच्यूत गोत्र हो जाता है। कृष्ण की भक्ति करो तो हमारा वेद सामवेद हो जाता है। कृष्ण की भक्ति करो तो परिकम्मा केवल गिरिराज की ही हो जाती है। रुकमणि ही देवी हो जाती है। जहां मेरा ठाकुर, वहां मैं। राधा प्रेम करेगी तो? जिस कुल पर मेरा श्याम, वहां मैं। तो जब प्रेम की चर्चा चले तो निम्न स्तर पर मत सोचना। परम प्रेम में बात कुछ ओर हो जाती है। एक बालक परम प्रेम में होता है तो वो बालकृष्ण होता है। नर कृष्ण होता है, नारी राधा होती है।

तो ये प्रेम मांग रहे हैं ब्रह्माजी। इसलिए कहते हैं, जल लाओ, पात्र लाओ, ब्रह्मचरण ब्रह्म लोक में आया है। बूढ़े बाबा मांग रहे हैं, जल्दी चरण प्रक्षालन कर लूं। ज्ञानी किसी का चरण नहिं पखारेगा। तो पितामह ब्रह्मा परम प्रेमी है और जब देर होने लगी तो ब्रह्मा ने अपने कमंडल में अपने द्गबिंदु से अपने ठाकुर के चरण धोयें। एक तो आंसू से धोया ये भक्ति का संकेत है। जो उपलब्ध था पात्र। क्योंकि मेरी व्यासपीठ ने कई बार कहा कि परमात्मा के प्रेम में पात्र की नहीं, पात्रता की जरूरत है। तो कथा तो मिलती है, ब्रह्मा ने द्गबिंदु से कमंडल में चरण धोया वो ही तो गंगा बनी। तो बाप! ब्रह्मा परम प्रेमी है, जो ठाकुर के चरण का प्रक्षालन करते हैं। कर्मयोगी तो है ही। कितने चेहरे बनाये ब्रह्मा ने! एक के जैसा दूसरा मिलता ही नहीं है। तो ब्रह्मा कर्मयोगी भी है, प्रेमयोगी भी है, भक्तियोगी

है। और ब्रह्मा ज्ञानयोगी भी है बुद्धिमान होने के नाते।

ब्रह्मा निर्माण करता है, विष्णु निर्वाह करता है और शिव निर्वाण करता है। ये तीन धाराएं है। तो जो सर्जन करता है उसको गालियां भी खानी पड़ती है। और 'मानस' में ब्रह्मा को बहुत गालियां दी गई। आप 'अयोध्याकांड' का पाठ करे तो आप के सामने दृश्य आयेगा, जहां ब्रह्मा को गालियां दी गई। यद्यपि 'बालकांड' में महारानी मैना ने गालियां दी है। हे पार्वती, जिस आदमी ने तुम्हें सुन्दरता दी, उस आदमी ने तेरे पति को ऐसा बौरहा क्यों बनाया? नारद को भी गालियां दी। लेकिन बहुत विस्तार से आप को गालियां देनेवाला प्रसंग पढ़ना है तो 'अयोध्याकांड' में जाइए। गालियां मीन्स ब्रह्मा को खोटी-खरी सुनाई। भगवान की वनयात्रा चल रही है। भगवान रास्ते के लोगों को मिलकर आगे बढ़ते हैं तब मेरे तुलसी ये दृश्य पेश करते हैं। गांव के गंवार लोग राम, लखन, जानकी की वनयात्रा में दर्शन के लिए आते हैं और फिर भगवान लखन-जानकी सहित आगे गमन करते हैं तब क्या होता है? भगवान सब को प्रिय वचन कह कर लौटाते हैं, आप अपने गांव जाओ। हमें तो चौदह साल रहना है। बेचारे ग्रामलोग जिस का मन राम ने ले लिया है, वो लौट रहे हैं तो बहुत पछताते हैं। देव को दोष देते हैं। प्रभु के दर्शन का प्रसाद पाने के बाद ये सब बिषाद लेकर लौट रहे हैं, अब कब दर्शन होगें? और परस्पर कहते हैं, ये विधाता है, जो ब्रह्मा है, उसके सब करतूत उलटे हैं! यहां से सर्जक की आलोचना शुरू हुई। यहां ब्रह्मा को फटकारा गया! 'बिधि करतब उलटे सब अहहि।' राम का दुःख सहा नहीं जा रहा। ब्रह्मा से कोई दुश्मनी नहीं है लेकिन अपनी प्रिय व्यक्ति जो पीड़ित हो रही है, इसलिए ब्रह्मा के सब उलटे करम दिखाइ दिये और कहते हैं-

निपट निरंकुस निठुर निसंकू।
जेहिं ससि कीन्ह सरुज सकलंकू।।

निर्माता की चूकें निकाली जाती है। कैसा है ब्रह्मा? निपट, निरंकुश, नितांत स्वतंत्र-स्वछंद बन गया है! किसी का अंकुश नहीं है उसके उपर! निपट मानी नितांत बिलकुल निरंकुश हो गया है। मन में आये सो कर रहा है। ब्रह्मा के समान कोई निष्ठुर नहीं। भयंकर निष्ठुर आदमी है ये ब्रह्मा! ग्रामजन कहते हैं। और निशंकु मानी किसी का डर नहीं, कोई शक नहीं। बिलकुल निःशंक हो चुका है। जिस ब्रह्मा ने चंद्रमाँ को रोगी बनाया। सरुज मानी रोगी। क्षय का रोगी बनाया। रोज क्षीण होता है। शरीर गिलता जाता है। और कलंकित कर दिया! ये आदमी कैसा है, जो पूरी दुनिया को शीतलता देता है, उजाला देता है, इस चांद को उसने रोगी बना दिया! कलंकित बना दिया! क्या है ये ब्रह्मा?

रूख कलपतरु सागरु खारा।
तेहिं पठए बन राजकुमारा।।

ये ग्रामीण लोग कहते हैं, ब्रह्मा ने कल्पतरु को रूखड़ा बना दिया! कहां कल्पतरु! इसकी जो महिमा है, उसको एक रूखडा बना दिया! हे निरंकुश, हे निष्ठुर ब्रह्मा, तुमने इतने बड़े सागर को खारा बना दिया! मीठा बनाते तो क्या बिगड़ जाता? वो ही ब्रह्मा ने इन राजकुमारों को वन में भेज दिया है।

जौं पे इन्हहि दीन्ह बनबासू।
कीन्ह बादि बिधि भोग बिलासू।।

ये ब्रह्मा ने इन तीनों को वनवास दिया तो दुनिया में इतने भोग-विलास झूठे बनाये! ये क्यों भोग विलास? यदि ये हमारे प्रेमी जंगल में मारे-मारे फिरते हैं तो ये भोग-विलास, सुख-साधन बिलकुल ठीक नहीं, गलत बनायें! जरूरत नहीं थी। ये लोग उसी में जीये तो उसकी सार्थकता है। आगे-

ए बिचरहिं मग बिनु पदत्राना।
रचे बादि बिधि बाहन नाना।।

ये तीनों बिना जूते पहने पैर में कंटकीर्ण रास्ते पर चलते हैं तो ब्रह्मा ने नाना प्रकार के वाहन बिलकुल निरर्थक बनाया! इसकी कोई जरूरत नहीं।

ए महि परहिं डासि कुस पाता।
सुभग सेज कत सृजत बिधाता।।

ये राम-लखन-जानकी पृथ्वी पर घास-कुश-पत्तें बिछाकर सोते हैं तो जगत में सुन्दर-सुन्दर शैया ये ब्रह्मा ने क्यों बनाये? कोई जरूर नहीं।

तरुबर बास इन्हहि बिधि दीन्हा।
धवल धाम रचि रचि श्रमु कीन्हा।।

ब्रह्मा ने इनको वृक्ष के नीचे बास करते कर दिया तो जगत में व्हाइट हाउस क्यों बनाया? धवल धाम मीन्स व्हाइट हाउस। 'रामचरितमानस' में धवल धाम की बड़ी महिमा है। राम-लखन-जानकी वृक्ष के नीचे सोते हैं, तो ऐसे श्वेत मकान बनाकर ब्रह्मा ने श्रम किया है, परिश्रम किया है! आगे-

जौं ए मुनिपट धर जटिल सुंदर सुठि सुकुमार।
बिबिध भांति भूषन बसन बादि किए करतार।।

ये तीनों मुनिपट धारण करते हैं, जटा बांधते हैं, तो ब्रह्मा ने बिलग-बिलग वस्त्राभूषण क्यों बनाये? ब्रह्मा बड़ा निरंकुश है।

जौं ए कंद मूल फल खाहीं।

ये लोग यदि कंदमूल फल खाते हैं तो-

बादि सुधादि असन जग माहीं।।

ये कंदमूल फल खाये तो दुनिया में अमृत भोजन की क्या जरूरत थी? बिलकुल निकम्मी वस्तु है! ऐसी ब्रह्मा की आलोचना बूंद-बूंद में हो रही थी। उसमें एक आदमी ने अपनी राय दी-

एक कहहिं ए सहज सुहाए।
आपु प्रगट भए बिधि न बनाए।।

अब देखो, पोज़िटिव थिंकिंग शुरू होता है। रुको, सुनो, आपने कहा, ये ब्रह्मा ने क्यों बनाये? लेकिन ये जो है ना उसे विधाता ने नहीं बनाये। ये राम विधाता की कृति नहीं है। राम से कई विधाता प्रगट होते हैं। राम विष्णु की कृति नहीं है। राम से कई विष्णु प्रगट होते हैं। मनु के प्रसंग में तुलसीदासजी ने साफ़ लिख दिया है कि जिस के अंश से अगणित शिव, अगणित विष्णु प्रगट होते हैं, अगणित ब्रह्मा प्रगट होते हैं उसी तत्त्व का मुझे दर्शन करना है। मनु कहते हैं, वो राम, वो ब्रह्म चाहिए मुझे जिससे अंश से अगणित ब्रह्मा, विष्णु प्रगट होते हैं। ये तो अपने आप प्रगट हुए हैं। पितामह ब्रह्मा सृष्टि सर्जन के बाद देखने लगे, उसके उपर मेइड-इन क्या लिखा है? 'मेइड बाय ब्रह्मा', सब पर लिखा था। लेकिन राम- लक्ष्मण- जानकी को देखा तो ये तो मेरी बनावट है ही नहीं! इसको तो मैंने बनाया ही नहीं! ये तो कोई विशिष्ट अपने आप प्रगट हो गये! तो लगा कि मैंने तो पूरी दुनिया बनाई लेकिन ये तो तीन है ऐसे! इर्ष्या के कारण ब्रह्मा ने उनको वन में भेजकर छिपा दिया ताकि मेरी स्पर्धा में कही न आ जाय! तुलसी लिखतें हैं, एक आदमी का एक मनोभाव किया इसी पंक्ति में-

जहं लगि बेद कही बिधि करनी।
श्रवन नयन मन गोचर बरनी।।

वेद ने जहां तक ब्रह्मा की करणी का वर्णन किया और आंख, कान और इन्द्रियों के द्वारा जहां-जहां देखो सब ब्रह्मा की सृष्टि है, लेकिन-

देखहु खोजि भुअन दस चारी।

हाय! हाय! क्या पंक्ति है साहब! चौदह भुवन देख लो! वो आदमी कह रहा है-

कहँ अस पुरुष कहाँ असि नारी।।

चौदह भुवन देख लो। है कोई पुरुष राम समान? कोई है जानकी के समान नारी? तो ब्रह्मा को इर्ष्या होने लगी, उसको तकलीफ़ शुरू हो गई! और गोस्वामीजी लिखते हैं-

इन्हहि देखि बिधि मनु अनुरागा।

इनको देखकर विधाता के मन में अनुराग प्रगट हुआ? न को! राम-लक्ष्मण-जानकी को देखकर वो आदमी कह रहा है कि ब्रह्मा के मन में अनुराग; अनुराग का अर्थ प्रेम नहीं। प्रेम होता तो इर्ष्या क्यों आती? जहां प्रेम है वहां इर्ष्या नहीं होती। याद रखना, जहां इर्ष्या आ जाय, द्वेष आ जाय; समझना, प्रेम नहीं है। ब्रह्मा प्रेमी बन गये ऐसा नहीं। किसने बनाया! ओह! मुग्ध हो गये। यहां अनुराग का अर्थ है मुग्ध होना। स्तंभित! अरे! अपने से कोई अच्छा गा ले, अरे! अपने से कोई अच्छी कृति बना दे, ओह! ब्रह्मा की दशा ये है। यहां प्रेम नहीं है। तो यहां अनुराग का अर्थ है मुग्ध, स्तंभित, चौकन्ना रह गए। तो वो कह रहा है, ऐसा पुरूष, ऐसी स्त्री जगत में है? ब्रह्मा उसे देखकर स्तंभित हो गए, मुग्ध हो गए! फिर सोचा, मैं भी ऐसा बनाउं। किसने बनाया? तो-

पटतर जोग बनावै लागा।

मैं उसके साथ स्पर्धा करके ऐसा बनाउं स्त्री और पुरूष। कहते हैं-

कीन्ह बहुत श्रम ऐक न आए।

राम जैसा दूसरा बनाने के लिए ब्रह्मा ने बहुत मेहनत की लेकिन कोई उनके समान हुआ ही नहीं।

निरुपम न उपमा आन राम समान राम निगम भने।

बूढ़े बाबा ने बहुत मेहनत की, ऐसी ही चीज बनाकर दुनिया की मार्केट में रख दूं।

कीन्ह बहुत श्रम ऐक न आए।
तेहिं इरिषा बन आनि दुराए।।

इसी इर्ष्या के कारण इन तीन को लेकर बन में छिपा देना चाहते हैं। दूसरा बना नहीं पाया। इसको मिटा नहीं पाया। ये मार्केट में न आ जाय इसलिए उसे छीपा दिया जाय। बैंड़ किया जाय। बहुजन लोग थे वो निर्माता की आलोचना कर रहे हैं। एक आदमी ने अपना विचार प्रस्तुत किया कि भाई,

मुझे ऐसा लगता है कि ब्रह्मा को इर्ष्या आई तो राम जैसा बनाने गये तो बना नहीं तो सोचा, इसे जंगल में छिपा दें ताकि मेरी दुनिया में कई आगे न निकल जाय। इस में एक ने कहा, हम ज्यादा नहीं जानते, आप ये जानते हैं। हम बहुत आप की तरह जानते नहीं। हम तो इतना ही जानते हैं कि हमारे समान परम भाग्यवान कोई नहीं। वरना हमारे लिए दर्शन कहां? जो हुआ, अल्लाह जाने! बाकी हम परम धन्य है! गोस्वामीजी लिखते हैं, ये आदमी कितना सद्भाव व्यकत कर रहा है!

ते पुनि पुन्यपुंज हम लेखे।
जे देखहिं देखहहिं जिन्ह देखे।।

हम उसको भी पुन्यपुंज मानेगें, देखेगें, समझेगें। जिन्हों ने राम को देखा है, जो देख रहे हैं और जो आगे देखेगें, सब पुन्य पुंज मानते हैं। हमारे समान कोई परम धन्य नहीं। ऐसी मधुर-मधुर बात बोलते-बोलते गांववाले बेचारे आंख में आंसू टपक रहे हैं। अरर! मारग में ये सुन्दर, सुकोमल, मासूम शरीरवाले कैसे चलेगें? ये पीड़ा सब को होने लगी। आखिर में तो ये लोग कहते हैं-

जौं मागा पाइअ बिधि पाहीं।

हे विधाता, तू बहुत अच्छा है, बुरा है, अल्लाह जाने! हमने तुम्हें खरी-खोटी सुना दी! लेकिन जो ब्रह्मा से मांगे ये यदि ब्रह्मा हमें दे दे तो हे सखी, हम तो चाहते हैं, इन तीनों को हम हमारी आंखों में रख लें। और हमारे आंखों के किवाड बंद कर दे ताकि ये कहीं जाने न पाये। हमारी आंख में बसा ले। कितना प्यार भरा ये मधुर भाव! मेरे कहने का मूल तात्पर्य ये था कि निर्माता की आलोचना होती है। निर्वाह करने के मंदिर बहुत होते हैं; आरतियां उतरती है। और जो निर्वाण देता है वो तो सदाशिव सर्व वरदाता; ये तो सब से आगे हैं शिवदाता; उसकी महिमा तो गांव-गांव, घर-घर, घट-घट है। तो विधाता एक निर्माता के रूप में यहां आलोचना के भोग भी बने हैं। अत्यंत तीव्रता के प्रेम में ये लोग ब्रह्मा को इर्ष्यावाला भी कह देते हैं। और पोज़िटिव थिंकिंग करनेवाला आदमी कहता है कि हम तो इतना ही जानते हैं कि हमारे जैसा परम बड़भागी कोई नहीं है। देखे वो भी धन्य है; वो भी धन्य है जो दर्शन कर रहे हैं; और आगे इसकी यात्रा देखेगें वो भी परम धन्य है। हे सखी, ब्रह्मा यदि हमारी मांग के अनुसार देता है तो हम उनको अपनी आंखों में रख सकते हैं। लेकिन वो क्यों नहीं मिलता जो हमने मांगा था खुदा से! दुनिया में सुना है कि सब कुछ खुदा से मिलता है लेकिन जिसको हम आंखों में रखना चाहते हैं वो क्यों नहीं मिलता, जो हमने मांगा था।

दुनिया भी मिली है गमे दुनिया भी मिला है।
वो क्यों नहीं मिलता जो हमें मांगा खुदा से।

भक्त अपने इश्वर को अपनी आंखों में ही बसाना चाहता हैं क्योंकि भक्त चाहता है कि इश्वर के रूप में तो हृदय में वो है ही लेकिन हमें तो आंखों में चाहिए। निरंतर दर्शन की अनुभूति चाहिए।

तो 'मानस-ब्रह्मा', जो इस कथा का केन्द्रबिंदु है, उसका कुछ दर्शन कर रहे थे। कथा का दौर आगे बढ़ाउं उससे पहले हरि नाम का आश्रय करें। उससे पहले सुदर्शन फ़ाकिर के कुछ शे'र कोई श्रोता ने भेजे हैं-

अगर हम कहें ओर वो मुस्कुरा दे।
हम उनके लिए ज़िंदगानी लूटा दे।
इश्क का ज़हर पी लिया फ़ाकिर
अब मसीहा भी क्या दवा देगा?

एक जिज्ञासा, 'बापू, कथा में आया, प्रेम की परीक्षा होती है, प्रभु की प्रतीक्षा होती है, कृपा की समीक्षा होती है और कथा की मुमुक्षा होती है।' ठीक है। कहा है कई बार, प्रेम यदि करो तो परीक्षा होगी। प्रेम की कसौटी होगी ही। शूली पर चढ़ना होगा ही। हिजरत करनी ही पड़ेगी। प्रभु की प्रतीक्षा करनी ही होती है। हमारे प्रयासों से होता नहीं। उसकी परीक्षा हम नहीं कर पाते। उसकी राह देखें। कृपा की समीक्षा होती है। बिलकुल इस रूप में भगवान की कृपा। उसकी समीक्षा ही होगी कि भगवान कृपामय है। 'विनयपत्रिका' में लिखा है, प्रभु कृपा से बनी हुई मूर्ति है। करुणामय मूर्ति है। 'मानस' में लिखा है, भगवान चिदानंदमय है, चैतन्य की ये मूर्ति है; हमारे जैसे हाड़मांस नहीं होते। दिखते हैं लेकिन है नहीं। तो भगवान कृपा ही कर रहे हैं। दुःख देकर कृपा करते हैं; सुख देकर कृपा करते हैं। ये दिल में बात बैठ जाय तो कभी दुःख परेशान नहीं करेगा। भगवान की कृपा ही समझो। क्योंकि उसकी समीक्षा ही करनी होती है। हम छोटी नजरवाले हैं! दूर का दर्शन करे तो ये हमारे परम हित में ही निकलेगा। लेकिन हम छोटी आंखें रखते हैं! बाकी परम कल्याण ही उस में है। तो भगवान की कृपा की समीक्षा होनी चाहिए। और कथा की मुमुक्षा। कथा सुनने की जिज्ञासा होनी चाहिए। रस होना चाहिए। ये भाव होना चाहिए।

तो बाप! कथा के क्रम में हम कल जनकपुर पहुंचे थे। महाराज जनक ने महामुनि विश्वामित्र और उनके साथ आयें मुनिगण और राम-लक्ष्मण उसको जनकपुर के 'सुन्दरसदन' में राज्य के योग्य निवास पर ठहराया। दोपहर का भोजन, विश्राम हुआ। सायंकाल के समय लक्ष्मण के मन की गति पहचान कर विश्वामित्र से राम ने प्रस्ताव रखा। विश्वामित्र से ठाकुर कहते हैं कि लक्ष्मण जनकपुर देखना चाहता हैं। संतों ने अर्थ बताया, लक्ष्मण जीव है, राम ईश्वर है, परमात्मा है, गुरु है, जो कहो। ये जीव जगतरूपी जनकपुर को ईश्वर की आंखों से देखने जाए तो समय पर लौट सकता है। गुरुदेव ने हां कही। तो दोनों भाई बाहर आये और जनकपुर के उनके उम्र के कुमार उनको घीर लेते हैं। प्रभु से बात करते हैं। जनकपुर के बड़े बुज़ूर्ग लोग जो ज्ञानी माने गए हैं वो राम को देख रहे हैं। कुछ बोलते नहीं। ज्ञानी ज्यादातर चुप रहते हैं, बोलते नहीं। और मिथिला की महिलाएं रामदर्शन के लिए मर्यादा से अपनी-अपनी अटारियों में जुड़-जुड़ दर्शन कर रही है। और इस तरफ भगवान राम-लक्ष्मण पूरे नगर का दर्शन करते हैं। संध्या का समय था। लक्ष्मण को लेकर प्रभु लौट जाते हैं। गुरुदेव के पास आकर अपना संध्यापूजन आदि किया। रात्रि का भोजन हुआ। कुछ सत्संग हुआ।

दूसरे दिन सुबह विश्वामित्र की आज्ञा पाकर गुरुपूजा के लिए बाग में पुष्प और पत्ते लेने के लिए जाते हैं। कोई साधक अपने बुद्धपुरुष के साथ यात्रा करता है तब उसका एक ही कर्तव्य होना चाहिए; उस बुद्धपुरुष की, गुरु की सेवा करनी चाहिए। बाग में प्रवेश किया। फूल चुनने लगे। और जानकीजी उसी समय बाग में आती है। गुरुपूजा के पुष्प के लिए राम आए और जानकी गौरीपूजा के लिए बिलकुल उसी समय बाग में आई। सखियों के संग जानकी ने सरोवर में स्नान किया। फिर सखियों के साथ गौरी की पूजा करने गई। एक सखी जरा बाग देखने के लिए पीछे रह गई। ये राम-लखन को देख लेती है। राम को देखकर सखी भाव में डूब गई और दौड़कर भवानी के मंदिर में सीता को कहती है, पूजा बाद में भी होगी लेकिन चल, वो राजकुमार जो कल शाम को पूरी नगरी को रूप माधुरी में डूबो दिया, वोही राजकुमार बाग में आए हैं। चल दर्शन कर ले। उसको आगे करके जानकी रामदर्शन को बाग के भीतर जाती है। सियाजु आती है। वो सखी आगे। जानकी चारों ओर देख रही है। इतने में दूर से सियाजु ने दर्शन किया। अपने नेत्रों के रास्ते से भगवान की छबी को लिया और हृदय में जानकी ने ऊतार लिया। और अंदर आये राघव कहीं बाहर न निकल जाय इसलिए सयानी जानकी ने अपनी आंख की पलकों को बंद कर दिया। यहां भगवान राम परम प्रेममय मृदु स्याही से अपनी चित्त की दीवार पर जानकी का चित्र अंकित करते हैं। जानकी ने दर्शन किये मर्यादा से और सीताजी राम की ओर परवश होने लगी। जब वो सखी को लगा, सीताजी ज्यादा एकदम राम में डूब चुकी है, सावधान करके कह दिया, जानकी अब चलें, देर हो रही है। बुद्धपुरुष साधक की हर स्थिति को पकड़ रखता है कि ओवर न हो जाय। जानकीजी मंदिर में गई और-

जय जय गिरिबरराज किसोरी।
जय महेस मुख चंद चकोरी।।

पार्वती बोली, हे जानकी, तुम्हारे मन में जो सांवरा बस गया है वो तुम्हें मिलेगा। वरदान प्राप्त करके जानकीजी सखियों के संग भवन आई। यहां परमात्मा के चित्त में जानकी ही रम रही है। जानकी की सुन्दरता घूंटी जा रही है। अपने चित्त में भक्ति की स्मृति घूमाते-घूमाते गुरु के पास जो जाता है ना उसके मनोरथ सुफल हो जाते हैं। इसीलिए भक्तिमय मस्तिष्क से राघव आज चले। फूल से पूजा की। 'जाओ बेटे, तुम्हारे मनोरथ सुफल होंगे।' प्रभु जानकीमय है। भोजन, सत्संग, विश्राम। उसके बाद सुबह निमंत्रण आता है, आज धनुषयज्ञ है। फिर धनुष्ययज्ञ में विश्वामित्र के साथ राम-लखन आते हैं। वो कथा कल करेंगे।

ब्रह्मा निर्माण करता है, विष्णु निर्वाह करता है और शिव निर्वाण करता है। ये तीन धाराएं है। तो जो सर्जन करता है उसको गालियां भी खानी पड़ती है। और 'मानस' में ब्रह्मा को बहुत गालियां दी गई। आप 'अयोध्याकांड' का पाठ करे तो आप के सामने दृश्य आयेगा, जहां ब्रह्मा को गालियां दी गई। यद्यपि 'बालकांड' में महारानी मैना ने गालियां दी है। हे पार्वती, जिस आदमी ने तुम्हें सुन्दरता दी, उस आदमी ने तेरे पति को ऐसा बौरहा क्यों बनाया? नारद को भी गालियां दी। लेकिन बहुत विस्तार से आप को गालियां देनेवाला प्रसंग पढ़ना है तो 'अयोध्याकांड' में जाइए। गालियां मीन्स ब्रह्मा को खोटी-खरी सुनाई।

ब्रह्मा बलवान है, बुद्धिमान है, आयुवान है और भक्तिवान है

'रामचरितमानस' में कथित यानी वर्णित पितामह ब्रह्मा का यथामति हम दर्शन कर रहे हैं। लोक की जो हमारे यहां धारणा है। सात लोक नीचे है; सात उपर। जो चौदह लोक हमारी धारणा है। हमारे डिस्टन्स के रूप में सबसे उपर ब्रह्म। आखिरी कोई लोक तो ब्रह्मलोक माना गया। इसीलिए संसार में पातालवालों को यानी चौदह लोक में तेरह लोकवासियों को जब-जब कोई समस्या आई तो अक्सर हमारे पुराणों में बातें आती है कि सब मिलकर आखिरी लोक में, ब्रह्मलोक में जाते हैं। और वहां जाकर पितामह ब्रह्मा के चरण में अपनी बात प्रस्तुत करते हैं, अब हम क्या करें? ये देवता लोग जो है वो बहुत फंसते रहते हैं। क्योंकि अपने स्वार्थ के कारण, अपनी होशियारी के कारण, अपनी भोगवादी प्रवृत्ति के कारण ये फंसते रहते हैं! और जब फंस जाते हैं तब वो ब्रह्मा के पास ब्रह्मलोक में जाते हैं। एक बार वो पितामह ब्रह्मा के पास गए और उसने चार प्रश्न पूछे। हे ब्रह्मदेवता, हमें आप बताओ कि बलवान कैसे हुआ जाय? दूसरा प्रश्न इन लोगों ने पूछा कि बुद्धिमान कैसे हुआ जाय? तीसरा प्रश्न पूछा है, आयुष्यवान कैसे हुआ जाय? और चौथा प्रश्न पूछा है, भक्तिवान कैसे हुआ जाय? ये कथायें जो आती है ग्रंथों में; ये घटी ही है। अथवा तो रूपक भी है। जो हो, लेकिन हम जैसे लोगों के लिए बहुत मार्गदर्शक है। तो देवताओं बलवान तो है, लेकिन अधिक बलवान होना है। देवता चतुर है। और उसको बुद्धिमान होना है। देवताओं की लंबी आयु मानी जाती है। देवताओं को अमर कहा जाता है, लेकिन उनके पुण्य क्षीण हो जाते हैं तो उसका पतन फिर मृत्युलोक में होता है। तो वे भी मरते हैं। उसको बलवान होना है और दीर्घायु होना है। अधिक बुद्धिमान होना है। और आखिर में तो आदमी को भाव के प्रति, भक्ति के प्रति जाना ही पड़ता है।

तो ये बहुत महत्त्व के चार प्रश्न सबके लिए मानो पूछे गये। रूपक हो तो भी ठीक है। आज पितामह उसको समझाते हैं। और कोई भी प्रश्न का समाधान वो ही व्यक्ति दे सकता है जिसको इन चारों वस्तु का परिपूर्ण ज्ञान भी हो और अनुभव भी हो। ब्रह्मा एक ऐसी व्यक्ति है जो उन चारों का जवाब देने में सक्षम है और उनका अनुभव भी है। और फिर मैं ध्यान आकर्षित करूं कि ब्रह्मा यानी एक बुद्धपुरुष भी है। बलवान कैसे होना है? आयुवान, बुद्धिवान, भक्तिवान कैसे होना है? तो ऐसा प्रश्न ऐसी जगह पूछना चाहिए कि जिसके पास ये है। और ब्रह्मा के पास ये चारों है। 'रामचरितमानस' में ब्रह्मा इन चारों का प्रयोग करते हैं। ब्रह्मा आयुवान है उसका जिक्र भी तुलसीदास कर देते हैं। ब्रह्मा बलवान भी है; उसका भी वर्णन 'मानस' में मिलता है। ब्रह्मा बहुत बुद्धिमान है; ये भी तो मिलता है। और ब्रह्मा परम भक्त है इसकी तो चर्चा दो दिन से हम करते हैं। 'सुन्दरकांड' के पाठ में आप पढ़ते हैं।

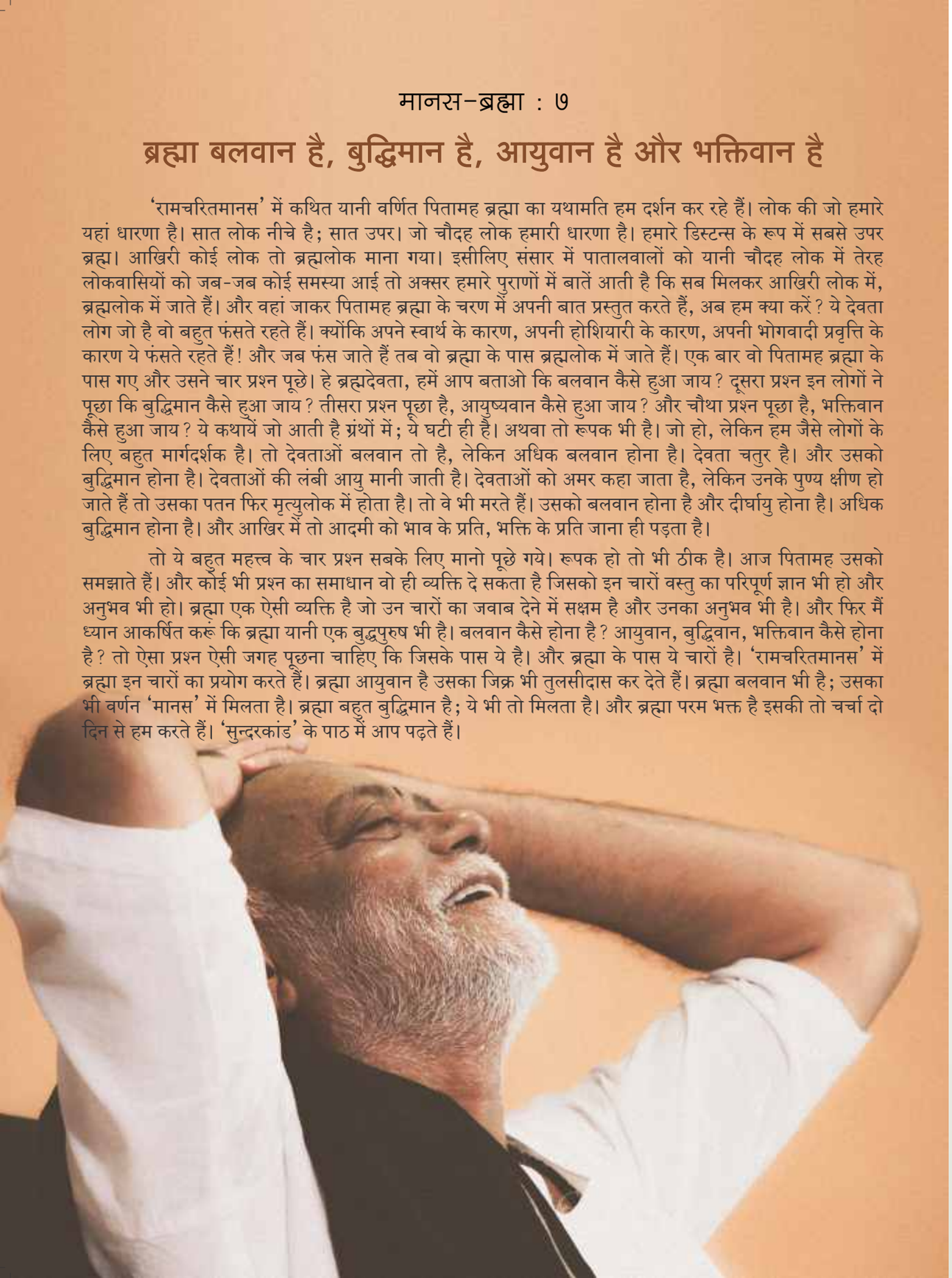

शान्तं शाश्वतमप्रमेयमनघं निर्वाणशान्तिप्रदं
ब्रह्माशम्भुफणीन्द्रसेव्यमनिशं वेदान्तवेद्यं विभुम्।
रामाख्यं जगदीश्वरं सुरगुरुं मायामनुष्यं हरिं वन्देऽहं
करुणाकरं रघुवरं भूपालचूडामणिम्।।

तो वहां लिखा है, 'ब्रह्माशम्भुफणीन्द्रसेव्यमनिशं', ये कोई परमतत्त्व है जिसको तुलसी राम कहते हैं। वो ब्रह्मा का भी सेव्य है। और कोई हमारा सेव्य है, वहां भक्ति आ गई। कोई हमारा ज्ञेय है, वहां ज्ञान आ गया। कोई हमारा श्रद्धेय है, वहां आस्था का प्रश्न उठ जाता है।

तो ब्रह्मा भक्त है; भक्तिवान है; भाववान है। और कोई भी सर्जक उसमें भाव होता ही है। एक चित्रकार चित्र बनाता है तो वो भावशून्य नहीं हो सकता वर्ना वो चित्र में भाव प्रगट नहीं कर सकते। बिलग-बिलग भाव वो चित्र में प्रगट करता है तो उनमें भी भाव होना चाहिए। तो ब्रह्मा भक्तिवान है। ईश्वर के बारे में ब्रह्मा बहुत कुछ जानते हैं। लेकिन फिर भी 'मानस' के ब्रह्मा जो है वो ईश्वर की निराकार भक्ति के पक्ष में नहीं है, ईश्वर की सगुण भक्ति के पक्ष में है। तो ब्रह्माजी भक्तिवान है। सगुण उपासक लगते हैं वर्ना वो 'सेव्य' शब्द ब्रह्मा के लिए नहीं आता।

किसकी सेवा करे? अब परमात्मा का जगत है तो कोई वृक्ष की सेवा करता है। तो वृक्ष सगुण है, आकार है। कोई आदमी की सेवा करता है; माता-पिता की सेवा करता है; गरीबों की सेवा करता है। तो ये सगुण भक्ति है, जो आकार की पूजा करता है। तो ब्रह्मा भक्तिवान है। और देवतालोग उसे भक्तिवान कैसे हुआ जाय, उसका प्रश्न पूछते हैं तो ये सही जगह प्रश्न पूछते हैं कि ब्रह्मा उसका जवाब दे सकते हैं उसका प्रमाण 'किष्किन्धाकांड' के अंत में जब स्वयंप्रभा के पास ये बंदर की टोली जलपान करती है। फिर स्वयंप्रभा कहती है, आप आंखें मुंद करके बैठ जाओ, आप जानकी के पास पहुंच जाओगे। लेकिन बंदर है तो आंखें बंद नहीं कर पाये तो बीच-बीच में आंख खोल लेते हैं, पहुंचे कि नहीं? और तुलसी का दर्शन है, आंखें बंद करना विश्वास का प्रतीक है। आंखे बार-बार खोलना ये विचार का प्रतीक है। आप आंख खोलकर बहुत सोचते हैं। विश्वास में सोचना मना है। आंखें बंद कर बैठो। आंखें खोल के हम अपनी बुद्धि लड़ाते हैं। हमारी ये जो जीवन की साध्यप्राप्ति की यात्रा है। हमारे पास एक वस्तु है तो उसको रखने के लिए पात्र चाहिए। कोई भी वस्तु रखने के लिए आधार तो चाहिए। 'मानस' ने दोनों बात कही। आपके पास आधार भी होना चाहिए और वस्तु भी होनी चाहिए। वस्तु है बुद्धि, आधार है विश्वास।

कोई ऐसी बात नहीं है कि जो 'मानस' उसका समाधान न देता हो। तो आप समझिये मेरे भाई-बहन, बुद्धि है वस्तु। वैसे बुद्धि कोई खराब वस्तु नहीं है। लेकिन बुद्धि रखने के लिए विश्वास का पात्र होना चाहिए। जिसकी बुद्धि विश्वास के पात्र में नहीं है वो बुद्धि परेशान करेगी। तो वस्तु है, पात्र नहीं, तो गड़बड़। और पात्र है तो उसमें कुछ होना भी जरूरी है। तो व्यवहारजगत में जब तक हम है तब विश्वास के साथ थोड़ा विचार की जरूरत है; समझ की जरूरत है। लेकिन हमारी तकलीफ़ क्या है कि हम केवल विचार ही लिये फिरते हैं! आंखें बंद नहीं। तो संसार में है तो थोड़ा विचार भी करना पड़ता है। आंखें खोलनी पड़ती है। लेकिन ये बुद्धिरूपी वस्तु विश्वास के पात्र में रहे ये मत भुलना। ये दो-तीन दिन पहले एक शे'र दिया था राजेशरेड्डी का था। उसमें ऐसा लिखा था कि आजकल मेरी बुद्धि मुझ पर जरा खफ़ा है। क्योंकि आजकल मैं दिल की बहुत सुनता हूं।

आजकल मेरी अक्ल बहुत खफ़ा रहती है,
क्योंकि आजकल मैं दिल से बातें करता हूं।

कोई विश्वासु व्यक्ति आपको कहे कि आप ये करो तब हम सोचने लगते हैं। स्वयंप्रभा एक स्वयं अनुभवी ज्योति है, आत्मज्योति। विचार जरूरी है बाप! आपको ऐसा नहीं लगता कि आप विश्वास के बलिदान पर ज्यादा सोचते हो? मेरे पास मेरे कई श्रोता आते हैं, कहते हैं, बापू, हमारे दिमाग में बहुत थोट्स आते हैं, उसका कुछ करो। उसका एक ही उपाय है कि जिस सद्गुरु में तुम्हारी पूरी निष्ठा हो वो कहे वो करो। लेकिन उस समय तुम आंखें खोलते हो! तुम सोचते हो! 'मानस' की एक पंक्ति है ये बहुत ऊंची पंक्ति है। व्यवहारधर्म में उसको जरा ये करना भी मुश्किल है। लेकिन है बहुत ऊंची।

मातु पिता गुरु प्रभु के बानी।
जिनही विचार करिये सुभ जानी।।

माता-पिता, गुरु और परमात्मा, ईष्ट, उसकी बानी को बिना सोचे, उसके उपर तर्क-वितर्क किये बिना वो जो कहे सो करो। और मैं बार-बार स्पष्टता करूं कि वो माता-पिता होना चाहिए। हां, गुरु की बानी वो कहे लेकिन गुरु होना चाहिए। तथाकथित गुरु नहीं चले। वो सही में बुद्धपुरुष होना चाहिए। बुद्धपुरुष के लक्षण के दो-चार ओर लक्षण

भी आप समझ ले ताकि भ्रान्ति न हो। एक बुद्धपुरुष का लक्षण है, जिसको आबाल-वृद्ध सब प्यार करते हो। आबाल-वृद्ध सब इनके प्रति खींचे जाय। आबाल-वृद्ध जिसके प्रति केवल प्रेम, करुणा और सत्य के कारण आकृष्ट होने लगे उसका नाम बुद्धपुरुष है। बुद्धपुरुष के पास बुद्धि नहीं होती ऐसा कभी मत सोचना। लेकिन उसकी बुद्धि विश्वास के पात्र में रहती है। ये बुद्धपुरुष का लक्षण है। वो पात्र के भोग पर बुद्धि नहीं कुबूल करते। बुद्धि अच्छी वस्तु है लेकिन विश्वास के पात्र में। क्या कबीर बुद्धिमान नहीं है? क्या तुलसी बुद्धिमान नहीं? क्या मीरां बुद्धिमान नहीं? बुद्धि मीरां में रही होगी। विवेक बुद्धि के कारण उसने अच्छा संग किया होगा। अच्छा संग किया होगा तो विवेक भी प्राप्त हुआ होगा और तभी तो ये निर्णय करती होगी कि क्या ग्राह्य है, क्या अग्राह्य है। आबाल-वृद्ध सब जिसके पीछे खींचे जाय, बुद्धपुरुष का ये लक्षण है। परिचय के लिए, पहचान के लिए उसका कुछ विशिष्ट वेश हो जाता है, बाकी बुद्धपुरुष का कोई एक वेश नहीं, कोई एक देश नहीं। बुद्धपुरुष एक मुल्क का नहीं होता। जिस मुल्क का वो हो उस मुल्क उसका गौरव ले ये मुल्क का सद्भाग्य। बाकी वो एक देश का नहीं, एक वेश का नहीं। वो एक भाषा, किसी विशेष धर्म या किसी ग्रंथ का आग्रही भी नहीं होता। हां, कहेगा कि इस ग्रंथ से मेरा अनुभव है तो बात रखेगा। वो आग्रह नहीं करेगा कि तुम भी यही पकड़ो। बुद्धपुरुषों की अपनी विशिष्ट पहचान है।

तो 'मानस' में विचार और विश्वास की ये दो बात तुलसी ने स्पष्ट कर दी। तो ये विश्वास जो भक्ति है, भरोसा है, चर्चा है मेरे भाई-बहन, ये बंदर लोग स्वयंप्रभा से कहने आंखें मुंदे तो थी लेकिन खोल दी थी। कोई विश्वास से भरा बुद्धपुरुष एक पात्र बनकर हमारे सामने हो तब बुद्धिमान तर्क-वितर्क छोड़ो। और फिर क्या हुआ? आंखें खोली तो सब सागर के तट पर! ज्यादा बंद रखी होती तो सब अशोकवाटिका में होते। ये विश्वास का प्रयोग इसीलिए करवाया कि तुम विश्वास से बैठ जाओ, तुम माँ के पास पहुंच जाओगे जानकी के पास। जो समंदर तक पहुंचे तो वहां भी पहुंच सकते थे ना! लेकिन आंख खोल दी, विचार शुरू किया और विश्वास के आधार पर जब हम तर्क करते हैं कि सोचते हैं कि ये करे, ये न करे और बार-बार ये डांवांडोल स्थिति में साधक और सब पछताये! ये तो अच्छा था कि कम से कम सरोवर के किनारे बैठे थे। जल तो मीठा था। अब तो आये खारे जल के तट पर! सागर है बड़ा लेकिन खारा जल है। केवल बुद्धि, तर्क-वितर्क, विश्वास के भोग पर हमें खारे जल तक पहुंचाता है और छोटा-सा विश्वास हमें निर्मल, शीतल, शांत और मीठे सरोवर के तट पर रखता है। और दोनों जगह गुफा है। वहां स्वयंप्रभा गुफा में बैठी है। और यहां संपाति भी गुफा में। संपातिवाली कथा आप 'किष्किंधाकांड' में पढ़ते हैं। एकदम बाहर आता है, आज विधाता ने मुझे खोराक दिया है! मैं बंदरों को खा जाउंगा। सब घबरा गये, मर गये! अब करे क्या? तब जिसमें सगुण रूप के प्रतिभाव है ऐसा जामवंत जो ब्रह्मा का अवतार है वो भाववाला आदमी अंगद का दुःख देखकर कहने लगे, डरने की जरूरत नहीं है। हम सब परम बड़भागी है, हम निरंतर सगुण रूप के अनुरागी है।

तात राम कहुँ नर जनि मानहु।
निरगुन ब्रह्म अजित अज जानहु।।

हे बाप! हे अंगद युवराज, राम को ब्रह्म न मानो, मनुष्य न मानो। ये निर्गुण ब्रह्म है; अजित है, अजन्मा है। आगे जामवंतजी के रूप में ब्रह्मा बोले-

हम सब सेवक अति बड़भागी।
संतत सगुन ब्रह्म अनुरागी।।

जामवंत के रूप में, हम सब सेवक है। और बहुत बड़भागी है क्योंकि हम निरंतर सगुण ब्रह्म के प्रति प्रेम कर रहे हैं। ये भाववान आदमी है। निर्गुण को जानते हुए उसने भावपक्ष कुबूल कर लिया। आगे बोले-

निज इच्छाँ प्रभु अवतरइ सूर महि गो द्विज लागि।
सगुन उपासक संग तहँ रहहिं मोच्छ सब त्यागि।।

भगवान अवतार लेते हैं, हम सब बड़भागी है और हम इस सगुण लीला के सहयोगी बनते और चारों प्रकार के मोक्ष को एक ओर हटा दे। इतना जो भाव है उसमें तलगाजरडा को ब्रह्मा के भाववानपना का दर्शन होता है। निर्गुण को जानते हुए भी वो सगुण के अनुरागी है। तो कोई ऐसी व्यक्ति को भाववानवाली बात पूछी जाय। बलवान कैसे हुआ जाय, पूछा जाय, आयुवान कैसे हुआ जाय, पूछा जाय। और बुद्धिवान कैसे हुआ जाय? क्योंकि जिसके पास हो उसको पूछे और उसका अनुभव भी हो वो पूछे। और फिर संपाति आया। फिर बात हुई। संपाति ने मार्गदर्शन दिया कि जानकी वहां है। मैं आंख से आपको मदद कर सकता हूं। पांख मेरी ढीली है। जो कोई जाएगा, सागर को नांघेगा वो जानकी तक पहुंच जाएगा। लेकिन अब जाये कौन? ये प्रश्न उठा, सतजोजन सागर है। जामवंत ने क्या

कहा? गोस्वामीजी कहते हैं-

बलि बाँधत प्रभु वाढेउ सो तनु बरनि न जाइ।
उभय धरी महँ दीन्ही सात प्रदच्छिन धाइ।।

यहां फलित होता है तलगाजरडी आंखों में कि ब्रह्मा के अवतार जामवंत बहुत बलवान है। भगवान त्रिविक्रम की कथा के समय बलिराज को बांधने के लिए भगवान जब विराट बने तब जामवंतबाबा कहते हैं, मैंने सात प्रदक्षिणा की। कितना बलवान रहा होगा? कितना स्फूर्त रहा होगा? दो घडी में सात परिकम्मा कर ली विराट की! कितना बल रहा होगा? तो बल तो होना चाहिए। और दीर्घायु। उम्र भी लम्बी है। रामकाल का ये ब्रह्मा। ये आदिकाल का ये ब्रह्मा आज त्रेतायुग में जटायु बना है। और वही कृष्णकाल में भी दिखता है। तो इसका मतलब है कि आयुवान भी है ये आदमी। बहुत आयु है उसकी। उम्रवाला है ये आदमी। बलवान है; आयुवान है; भाववान है। और मेरी समझ में बुद्धिवान तो है ही।

तो जिसके पास ये चारों हो और जिसको ये चारों का अनुभव हो उसके पास जिज्ञासा करनी चाहिए कि बलवान कैसे हुआ जाय? बुद्धिवान कैसे हुआ जाय? आयुवान कैसे हुआ जाय? और भाववान कैसे हुआ जाय? तो ये देवताओं ने ब्रह्मलोक जाकर के जिज्ञासा की थी और ये चार वस्तु का जवाब पितामह ब्रह्मा देवगणों को देते है। हम सब को बलवान होना है लेकिन बलवान हुआ कैसे जाय? पहले ये पता लगना चाहिए कि बल किसको कहे? शारीरिक बल की जरूरत है। शरीर का बल कोई निंदनीय नहीं है। शारीरिक बल दूसरों को पराजित करने में जरूरी है। शारीरिक बल भोगों के लिए जरूरी है। शारीरिक बल कुछ दुर्लभ कार्य, कोई अत्यंत कठिन कार्य करने के लिए जरूरी है। शारीरिक बल दौड़ने के लिए, उठने के लिए, यात्रा करने के लिए, कुछ पाने के लिए भी जरूरी है। शरीर के बल की बहुत महिमा है। लेकिन अध्यात्मवादियों ने शरीर के बल को इतना महत्त्व नहीं दिया है।

दूसरा बल है, मनोबल। कई लोगों का शरीरबल बहुत मजबूत होता है। बल भी बहुत है लेकिन मनोबल बहुत कमजोर होता है। देहबल के साथ मनोबल भी चाहिए। तो चर्चा चल रही है, बलवान है ब्रह्मा। लेकिन बलवान हुआ कैसे जाय? शरीर का बल तो कैसे भी मजबूत हो। आप कुस्ती करो, कई तरीके से हो सकते हैं। लेकिन अब तो शरीर बड़ा न हो, मोटा न हो इसलिए प्रयत्न में है लोग! शरीर मोटा होना ही नहीं चाहिए। आजकल के जो युवान भाई-बहन हैं, लड़के-लड़कियां है वो तो कुछ खाते ही नहीं! बिलकुल बस, पतले ही रहना है सब को! कम खाते हैं क्योंकि मोटे हो जाय! सम्यक् आहार लेना चाहिए। न ज्यादा, न कम।

तो बलवान होना जरूरी है बाप! ब्रह्मा बलवान है। लेकिन देवताओं ने पूछा, बलवान कैसे हुआ जाय? शरीर से तो कई बलवान लेकिन अंदर से कौन बलवान? मनोबल, आत्मबल जो कहना चाहे। शरीरबल तो मैंने कहा, कसरत-व्यायाम से आप कर सकते हैं। लेकिन मनोबल और आत्मबल दो वस्तु से आता है। और वो है किसी बुद्धपुरुष के आश्रय, कोई परम सद्गुरु के आश्रय में हमारा मनोबल बढ़ जाता है। हम निर्बल होकर जाते हैं, सबल होकर लौटते हैं। हम चिंता लेकर जाते हैं; निश्चिंत होकर लौटते हैं। और उसका उपदेश, उसके सूत्र सुनकर हमारा आत्मबल बढ़ जाता है। तो ब्रह्मा ने यही उपदेश दिया है कि देवगण, ऐसे कोई श्रद्धेय की शरणागति से तुम्हारा आत्मबल, तुम्हारा मनोबल बढ़ेगा।

दूसरा प्रश्न देवताओं का है, महाराज, हमें बताओ, आयुबल कैसे बढ़े? आयुष्यमान कैसे हुआ जाय? दीर्घायु कैसे हुआ जाय? अब ये जरा विचित्र प्रश्न है। हमारी धारा तो ये कहती है कि आयुष्य निश्चित होती है। जन्मते ही हमें कितने साल जीना है, वो निश्चित होता है, ऐसा भी कहते हैं। और स्मृतिकार कहते हैं कि तुमसे जो श्रेष्ठ है ऐसे महापुरुषों के चरणों में श्रद्धा रखकर नमन करो तो 'आयुर्विद्या यशोबलं।' चार वस्तु होगी। आयुष्य बढ़ेगी। और यहां आयुबल जो ब्रह्माजी में तो है। और मेरे युवान भाई-बहन, हम से जो श्रेष्ठ दिखाई दे उसकी ईर्ष्या न करे, अभिवादन करे। आयुबल बढ़ेगा। आयुष्य अस्सी साल की हो, सौ साल की हो जाय ये कोई वादा करना मुश्किल है लेकिन बची हुई आयुष्य ज्यादा आनंद देगी; प्रसन्नता देगी; रस बढ़ेगा। आयुबल कैसे बढ़ें? ब्रह्मा ने कहा है, श्रेष्ठों की सेवा आयुबल बढ़ाती है। क्यों माँ-बाप की सेवा करना हमारी संस्कृति कहलाती है? आयुष्य बढ़ती है। गिनती में बढ़ें न बढ़ें, मुझे खबर नहीं। लेकिन इतने लम्हें बहुत अच्छे जाते हैं कि कोई अपनी माँ की सेवा करे, पिता की सेवा करे ये लम्हें कितने प्यारे हो जाय!

तीसरी बात बुद्धिबल। बुद्धिबल कैसे बढ़ें? हमारी अक्ल कैसे बढ़ें? अक्ल बढ़ती है अभ्यास से। अभ्यास करो। शास्त्रों का अध्ययन। शास्त्र मीन्स कोई भी तुम्हें जो क्षेत्र में जाना हो। ब्रह्मा के हाथ में किताब होती है, कमंडल होते हैं। ब्रह्मा के हाथ में जो किताब है वो वेद

है। और इसका मतलब है, आदमी शास्त्र अभ्यास करे, स्वाध्याय करे, शास्त्रचिंतन करे इससे उसका बुद्धिबल बढ़ता है। अथवा तो कुछ न पढ़ा हो तो भी कई लोगों की बुद्धि बहुत है। चौथी बात देवताओं ने पूछी थी कि भाव कैसे बढ़ें? भाव बढ़ता है विश्वास से, 'बिनु बिश्वास भगति नाही।' जितना विश्वास दृढ़ इतना भाव बढ़ेगा। इतना भाव सामने से भी मिलेगा। बालक का माँ में विश्वास है तो माँ बालक में कितना भाव प्रदान करती है! बालक शास्त्र नहीं जानता। विश्वास से भाव की वृद्धि होती है।

तो जिसको ब्रह्मा का अवतार माना गया है ऐसे जामवंत को 'किष्किंधाकांड' के अंत में हम देखते हैं तो कुछ ऐसी प्रेरणा प्राप्त होती है। तो ब्रह्मा कहते हैं, मैंने दो घड़ी में प्रदक्षिणा की थी। अब मैं बूढ़ा हो गया, क्या करूं? अंगद ने कहा, मैं ये कर सकता हूं। फलां ने कहा, मैं ये कर सकता हूं। पार जाने का सब के मन में संशय रहा और हनुमानजी बिलकुल चुप है। उसने आंखें खोली ही नहीं! ये सब ने खोल दी थी। और हनुमान विश्वास में बैठे हैं। क्या-क्या हुआ? संपाति आया, क्या बातचीत हुई, कुछ हनुमानजी को पता नहीं। और सब लोग जब लंका जाने में असमर्थ है, ऐसा निवेदन कर चुके तब बूढ़े ब्रह्मा ने, जामवंत ने श्री हनुमानजी को आह्वान किया कि हे महाराज, आप चुप क्यों है? मौन क्यों धारण कर लिया? आप जागो। आपका बल पवन समान है। बुद्धि, बल, विवेक, विज्ञान के आप निधान है। और राम के लिए ही आपका अवतार है। ब्रह्मा के मुख से निकला कि आपने अवतार लिया है रामकार्य के लिए। आप चुप क्यों है? मानो दुनिया के सभी पर्वत के राजा खड़े हो गये हो ऐसे हनुमानजी वहां खड़े हुए! हे ब्रह्मा, हे जामवंत के रूप में ब्रह्माजी, मैं आपको पूछ रहा हूं, मुझे योग्य सिखावन दो। कई बार कहा गया कि युवानों को काम करना चाहिए। रामकाम करना चाहिए। लेकिन जो बूढ़े हो उसके उम्र के अनुभव का आदर कर के उससे सिखावन ले। फिर तो वानर की सेना को लेकर निशिचरों का निर्वाण कर के राम सीता को लेकर आयेंगे। और चार वस्तु हमारे लिए तुलसी ने बताई-

जो सुनत गावत कहत समुझत परम पद नर पावई।
रघुबीर पद पाथोज मधुकर दास तुलसी गावई।।

इस कथा को, त्रैलोक्यपावनी कीर्ति को जो सुनेगा, जो गाएगा, जो कथेगा और जो समझेगा वो परमपद को प्राप्त करता है। पहला नाम लिया है सुननेवालों का। परमात्मा की त्रिलोक को पवित्र करनेवाली ये कथा जो सुनेंगे वो परमपद पायेगा। गाना न आये तो गाओ नहीं, चिंता नहीं। कथन न आये तो कथो नहीं, चिंता नहीं। समझ में न आये, जरा भी ग्लानि मत करो, चिंता नहीं। केवल सुनो। सीधा परमपद। श्रुतिवचन। मेरे लिए तो यही ('मानस') श्रुति। यही वेद है। यही सब कुछ। जो आपको कोई कहे कि कथा सुनसुनकर क्या फायदा? उसको जवाब मत देना। मुस्कुरा देना। उसको कैसे समझाये? लेकिन यकीन करो, जिन्होंने हरिकथा सुनी है उसके परमपद के लिए कोई प्रश्न नहीं। कथा सुनी है, कोई सामान्य वस्तु नहीं सुनी है साहब! आप सुन रहे हैं वो आपकी बड़ी महिमा है। और सुनने के बाद ईर्ष्या छूट जाय, द्वेष छूट जाय, निंदा छूट जाय तो तो क्या कहे यार! बाकी सुनना बहुत बड़ी उपलब्धि है। तुम सुनते रहो। 'जो सुनत, गावत'; दूसरा सूत्र, जिसको गाना आता हो, गाय। क्योंकि गाने से भी हरिपद मिला। गाना आता हो वो गाय। सुर में गाय ये जरूरी है। गाने से हरि मिलता है। और कुछ भी गाओ, अंत:करण से गाओ। चौपाईयां गाओ, 'विनय' गाओ, अच्छा गीत हो जिससे आत्मा प्रसन्न होती हो तो फिल्मगीत भी गाओ। व्यासपीठ से कोई प्रतिबंध नहीं है। गाओ। और तीसरी बात, आप कथ सको, कह सको तो कहो। और इनमें से कुछ न हो, न हम सुन पाये, न हम गा पाये लेकिन गुरुकृपा से थोड़ा समझ गये तो भी परमपद रोकडुं। या तो गाते- गाते, सुनते-सुनते, कहते-कहते वो परम पद पाता है।

'किष्किंधाकांड' की फलश्रुति बहुत है, कांड भले छोटा है। फलश्रुति बड़ी है। कुछ करने की बात ही नहीं। तो इतना ही कहना है, सुनने को मिले तो सुनो; गाने का मन करे तो गाओ; कथन की इच्छा हो तो कथो; समझ में आ जाय तो तो कोई चिंता नहीं। आख़िर में तुलसीदासजी कहते हैं-

भव भेषज रघुनाथ जसु सुनहिं जे नर अरु नारि।
तिन्ह कर सकल मनोरथ सिद्ध करहिं त्रिसिरारि।।

फिर तुलसी कहते हैं, 'सुनहिं जे नर अरु नारि।' इस पक्ष को एक ओर रख दिया, सुनो बस। आगे-

नीलोत्पल तन स्याम काम कोटि सोभा अधिक।
सुनिअ तासु गुन ग्राम जासु नाम अघ खग बधिक।।

'सुनिअ तासु गुन ग्राम', सुनो, सुनो, सुनो। एक ही बात सुनो, जिसका नाम पापरूपी पक्षी को मारने में बंधक है, बधिक है, शिकारी है; पापरूपी पक्षी को मार देता है।

उसके गुणसमूहों को सुनो। और 'किष्किंधाकांड' पूरा हो जाता है। लेकिन यहां जामवंत केन्द्र में है इसीलिए कुछ ब्रह्मावतार जामवंत की 'मानस' के संदर्भ में थोड़ी चर्चा की।

कल कथा के क्रम में हम भगवान राम की पुष्पवाटिका की लीला का थोड़ा रस ले रहे थे। अब आज का जो दिन है वो धनुषयज्ञ का दिन है। सुबह से सभी राजे-महाराजे, नगरजन, परिजन, पुरजन सब जहां जानकी का धनुषयज्ञ आयोजित था वहां इकठ्ठे हो चुके। राम-लक्ष्मण को लेकर अपने मुनिगणों के संग विश्वामित्रजी रंगभूमि में आते हैं। महाराज मिथिलापति की प्रतिज्ञा उद्घोषित हुई, जो इस धनुष को अपनी विशाल भुजा से उठा लेगा वो त्रिभुवन में विजय प्राप्त करेगा। और उसको जानकीजी प्राप्त होगी। प्रत्येक देश, प्रत्येक काल के कुछ नियम बिलग-बिलग होते हैं। संविधान बिलग-बिलग होता है। कलियुग में प्रासंगिक है ये घटना कि बाप निर्णय करे? नहीं, प्रेक्टिकल नहीं लगता। होना भी नहीं चाहिए। कोई शर्त पूरी भी कर दे तो कन्या को वो व्यक्ति पसंद न हो तो भी बाप की जिद्द के कारण बेटी उसको जयमाला पहना दे? स्वतंत्रता पर हमला है। उस काल में बात ओर है। 'रामायण' की भी हो। उसमें भी संशोधन करना चाहिए। यद्यपि जनक तो परम विवेकी है और जानकी राम को ही पायेगी। दुर्गा का आशीर्वाद है लेकिन ये जरा मन में नहीं बैठता! ये प्रेक्टिकल नहीं है आज के युग में। ये उस काल का सत्य था, ठीक है। शर्त पर कन्या किसी को ब्याहे ये जरा रास नहीं आता है तलगाजरडी दृष्टि से। हां, स्वयंवर अच्छी बात है। ये आज के अनुकूल है कि लड़की स्वयं वर पसंद करे। आज अपने आप निर्णय कर ही लेते हैं ये अच्छी बात है। कम से कम लड़के का चुनाव है कि मुझे ये लड़की पसंद है, मुझे ये लड़की पसंद है। लड़की का चुनाव है। ये ठीक है, फिर माँ-बाप के पास पेश करे, फिर माँ-बाप हां करे। ये बात बराबर है। तो समय-समय पर हमारे यहां एक-दूसरे को चुनने की पद्धतियों के नियम बदलते रहे। ठीक है; अच्छी बात है। समय-समय पर सामाजिक नियम रहे, जो हो लेकिन आज के संदर्भ में बहुत संशोधन जरूरी है। ये तो ईश्वरीय लीला है। ये कोई सामान्य चरित्र नहीं, परमात्मा का चरित्र है। इसमें ये सब अपवाद है। उसको सर्वसामान्य न बनाया जाय।

तो यहां एक के बाद एक राजे-महाराजे खड़े होने लगे। कोई माई का लाल धनुष नहीं तोड सके! जनकराजा अकुला उठे। और वहां तक बोल गए कि धरती पर कोई वीर नहीं है! और लक्ष्मणजी एकदम जवाब देने के लिए खड़े हो जाते हैं! लक्ष्मणजी के बोल से धरती कांपने लगी तब विश्वामित्रजी ने राम को आदेश दे दिया, राघव, उठो, शिवधनुष को तोड़ दो और जनक के संताप को मिटाओ। भगवान राम गुरु को प्रणाम करके धनुष की परिकम्मा करके कैसे धनुष को पकड़ा, कैसे उठाया, कैसे चढ़ाया सब देखते रहे और क्षणार्ध में धनुषभंग हुआ! केवल आवाज़ सुनी गई। कैसे हुआ, किसी ने नहीं देखा! क्षणार्ध में राम ने धनुष के दो टुकड़े करके धरती पर गिरा दिये। जयजयकार हुआ। सियाजु ने राम के कंठ में जयमाला पहनाई। इतने में परशुराम आये। परशुराम और राम का संवाद। आख़िर में परशुराम महाराज भगवान की स्तुति कर के अवकाश प्राप्त कर गये। पत्र लेकर दूत गये अयोध्या। महाराज दशरथजी बारात लेकर पधारे हैं। मागशर शुक्ल पंचमी के दिन गोरज बेला राम का वरघोडा निकला। राम-जानकी, भरत-मांडवी, शत्रुघ्न-श्रुतकीर्ति और लक्ष्मण-उर्मिला चारों का एक साथ विवाह संपन्न होता है। कुछ दिन बारात रुकी। जनकपुर और जनक महाराज ने अपनी कन्या को विदा दी। रास्ते में निवास करते-करते अयोध्या पहुंचे। महेमानों को निवास दिया। जब से जानकीजी आई, समृद्धि बढ़ने लगी। धीरे-धीरे महेमानगण विदा हो गये। आख़िर में महाराज

> ये देवता लोग जो है वो अपने स्वार्थ के कारण, अपनी होशियारी के कारण, अपनी भोगवादी प्रवृत्ति के कारण फंसते रहते हैं! और जब फंस जाते हैं तब वो ब्रह्मा के पास ब्रह्मलोक में जाते हैं। एक बार वो पितामह ब्रह्मा के पास गए और उसने चार प्रश्न पूछे। हे ब्रह्मदेवता, हमें आप बताओ कि बलवान कैसे हुआ जाय? बुद्धिमान कैसे हुआ जाय? आयुष्यवान कैसे हुआ जाय? और भक्तिवान कैसे हुआ जाय? और कोई भी प्रश्न का समाधान वो ही व्यक्ति दे सकता है जिसको इन चारों वस्तु का परिपूर्ण ज्ञान भी हो और अनुभव भी हो। ब्रह्मा एक ऐसी व्यक्ति है, जो उन चारों का जवाब देने में सक्षम है और उनका अनुभव भी है।

मानस-ब्रह्मा : ८

कथा ही हमारी समस्या का जवाब दे पाएगी

'मानस-ब्रह्मा', जिसका हम गुरुकृपा से कुछ दर्शन कर रहे हैं। उसमें आगे बढ़ें इससे पूर्व गत संध्या यहां एक कार्यक्रम आयोजित हुआ। दिल्ही से आए हमारे दो युवा संगीत साधकों ने अपने अभ्यास के द्वारा हम सब को अच्छा रस प्रदान किया। तबलावादक ने भी अच्छी संगति की। मैं मेरी प्रसन्नता व्यक्त करता हूं। नई-नई चेतनाएं जो संगीत-वादन-गायन आदि किसी भी विद्या में आ रही है। मेरी व्यासपीठ उसका स्वागत करती है। और उसकी सात्त्विक तरक्की के लिए प्रभु प्रार्थना और दुआ करते हैं।

आइए, कुछ आगे बढें। एक प्रश्न था, 'Bapu, Jay Siyaram. I have fallen in love with 'Rudrashtak.' Every single word cheers my soul deeply.' 'रुद्राष्टक' का प्रत्येक शब्द मेरे हृदय को स्पर्श लेता है। 'Yet, I don't understand anything about 'Rudrashtak.' I love it so very much.' 'रुद्राष्टक' के प्रति आपकी ये प्रीत मेरी दृष्टि में बहुत महत्त्व की उपलब्धि है। 'रुद्राष्टक' का एक-एक शब्द यदि आपके हृदय को छू रहा है, ये आपके लिए अच्छे शगुन है। हर चीज़ समझ में आ जाए ऐसा आग्रह भी छोड़ो। वेदों ने भी ब्रह्मा की बनाई सृष्टि में बहुत जाना। 'वेद' का अर्थ ही होता है जानना। लेकिन इतना जानने के बाद भी वो कहते हैं, 'नहीं-नहीं।' तो सब समझ में आ जाए ये भी आग्रह छोड़ दो। एन्जोय करो उसी क्षण को। जैसे ये दो बंधु पेश कर रहे थे। कोई अच्छा शास्त्रीय गायन पेश करे; बिलग-बिलग राग वो गाए; तो सब राग हम कहां जानते हैं? कहां समझते हैं? लेकिन न जानते हुए भी हम उसको एन्जोय तो बहुत कर सकते हैं। प्रश्न 'रुद्राष्टक' के शब्द को जाना जाए; ज्यादा रस मिलेगा ये अच्छी बात है लेकिन बहुत जानने से भी फायदा नहीं है। अच्छा संगीतज्ञ कुछ पेश करे उसका राग आपको पता हो तो आप बीच-बीच में बोलना शुरू करेंगे! ये सब का रस भंग करता है। जानकारी हमें ठीक नहीं रहने देती। आपको 'मानस' की बहुत चौपाईयां याद हो जाए तो मेरे श्रोता मैं चौपाई उठाउं इससे पहले शुरू हो जाते थे और अगल-बगलवालों को कहते थे, अब ये बात आएगी! फ़र्क इतना ही रहता था वो नीचे बैठे और मैं इधर बैठूं। हमारी जानकारी प्रदर्शन करने के लिए मजबूर न कर दे इसका ध्यान रखे। रस पीओ। और कुछ प्रकार की तरक्की अध्यात्म मार्ग में घाटा है।

आज सुबह मेरे यज्ञकुंड के पास एक पत्र पड़ा था। बड़े प्यारे मुद्दे उठाये हैं इस पत्र में। उसमें लिखा कि एक बार राधा-कृष्ण मिले। जब से कृष्ण व्रज गए हैं उसके बाद मिले। उसमें तो लिखा है, स्वर्ग में मिले। शास्त्रों में तो ऐसा उल्लेख है

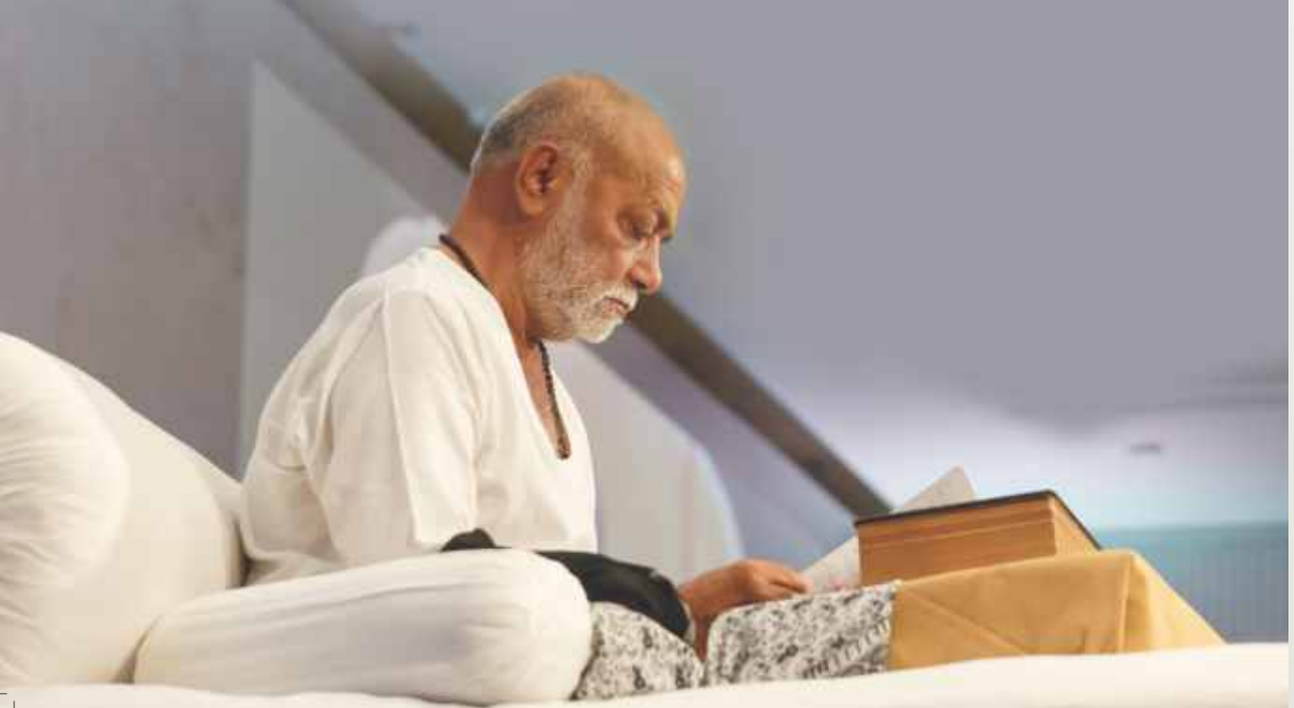

कि व्रज छोड़कर कृष्ण गए, उसके बाद वृंदावन वो गए नहीं। और एक बार सिर्फ़ मिलना हुआ है सूर्यग्रहण पर कुरुक्षेत्र में। वहां तमाम व्रजांगनाएं गई है; राधाजी भी गई है। वो ही कृष्ण, वो ही राधा, वो ही गोप-गोपियां इतने वियोग के बाद मिले लेकिन जो रस वृंदावन में मिलने का था वो रस वहीं नहीं था। कृष्ण या गोपीभाव बदले नहीं थे लेकिन रसवाले लोगों का एक स्वभाव है, जिसके कारण उनका आग्रह रहता है कि हम रस भी वहीं प्राप्त करेंगे हमारे स्थान में। इसीलिए व्रज के रसिक लोग तो कहते हैं, कृष्ण यदि हमें वृंदावन के बाहर कहीं मिल जाए तो हम उसको देखना नहीं चाहते। हमारा कृष्ण तो वृंदावन में ही हमें दर्शन दे। इसीलिए वो कहते हैं कि हमारा कृष्ण वृंदावन छोड़कर एक कदम भी नहीं गया। ये रसवाले लोगों का पक्ष है। इसीलिए गुजराती में गाते हैं, 'मारुं वनरावन छे रूडुं, हुं वैकुंठ नहीं रे आवुं।' व्रजवासी कहते हैं, वृंदावन इतना रमणीय है कि हम वैकुंठ में नहीं आएंगे। तो कुरुक्षेत्र में राधा-कृष्ण मिले और राधा लौटती है तो वृंदावन के बुज़ुर्गों ने पूछा कि मुलाकात कैसी रही? तो राधा ने कहा, वही कृष्ण, वही मैं लेकिन व्रज का मिलन तो व्रज का मिलन!

तो याद रखना भैया, आपको 'रुद्राष्टक' से प्रेम हुआ है तो अर्थ समझने की जरूरत नहीं है। लम्हें को पीओ। समझ-समझकर आगे बढ़ गए वो रस चुक गए! आपको सब शास्त्र याद हो जाए और कोई शास्त्र की बात करेंगे तो तुम बीच में बोलोगे। थोड़ी जानकारी बढ़ भी जाए तो वो क्षेत्रवाला आदमी थोड़ी-सी भी चूक करते हैं तो पकड़ में आता है। और हमें रस कम आता है, क्योंकि हम उस भूल में डूब जाते हैं! मेरा एक पुराना वक्तव्य है। मैं आपकी शुभकामना और गुरुकृपा से बहुत प्रयत्न करता हूं जीने का। व्यासपीठ के बारे में कोई गलत बात कहे तो मैं ये सुनूं ही ना। कोई कथा की निंदा करे तो मेरे मन में उनके प्रति कोई बुरा भाव न आ जाए। बुरा भाव आये तो मेरे भजन में भंग होगा। भजन यानी चौबीस घंटें अंत:करण पवित्र रखना।

शास्त्रों में आता है कि तीन का कभी अपराध न करें। जिनका अपराध करेंगे उसको तो हमारे प्रति कुछ नहीं होगा लेकिन-

जो अपराध भगत कर करही।
राम रोष पावक सो जरही।।

कभी भक्त का अपराध न करे। स्वयं भक्ति का अपराध न करे। यानी कथाश्रवण भक्ति है तो हम कहते हैं, कथा क्यों सुनते हो? बार-बार क्या है कथा में? आज ही एक चिठ्ठी है, जब हम कथा सुनने आते हैं, तब मेरा दोस्त ऐसा बोलते हैं कि 'यू आर रनिंग फ्रोम रियालिटी।' यानी तुम रियालिटी से भागे जा रहे हो! 'वाय डोन्ट यू फेस धेम?' मैं ये नहीं कहूंगा कि आप जो वास्तविकता है, जो मुश्किल है उसका सामना करने के बदले आप कथा में भागे जा रहे हैं। कोई आलोचना करे इस मुद्दे पर कथा मत छोड़ो। आलोचना करनेवाले दो कोडी के हैं! कथा जिसका मूल्य नहीं हो सकती इतनी अद्‌भुत है। देवराज इन्द्र अमृत लेकर आया था। परीक्षित शुकदेव को कहे, ये कथामृत हमें दो। परीक्षित ने लात मारी अमृत को!

कथा ही हमारी समस्या का जवाब दे पाएगी। इस कथा में सात-आठ भाई-बहन ने कहा कि 'बापू, हमें ऐसा लगता है कि जो प्रोब्लेम्स लेकर हम आए हैं इसके जवाब हमें कथा में मिले जा रहे हैं।' अब ये तो मुझे भी पता नहीं, मैं ब्रह्मा के लिए बैठा हूं। आपको क्या हो रहा है ये आप जाने! भगवद्‌कथा में ताकत है। जरूर तुम्हारी मुश्किल का सामना करो; तुम्हारा उत्तरदायित्व निभाओ। फिर भी उसमें से यदि समय मिल भी गया तो उर्जा लेकर तुम यहां से जाओगे। कथा एक उपाय है साहब! कथा श्रोता, आयोजक, सेवा करनेवाले सभी को रिपेर करती है। तुम्हारा मित्र ऐसा कहे तो उसके साथ संघर्ष भी न करो। वो क्लब में जाए, तुम कथा में जाओ। कथा से प्राप्त विवेक से अब अपनी ड्यूटी बजाओ। फिर भी आपको लगे कि मुझ में कुछ टूट रहा है तो भगवद्‌चर्चा सुनो। ये तुम्हें फायदा देगा।

आज किसी ने ये भी पूछा है, 'मेरे बापू, आपके प्रिय भक्तों में हमारा नाम कितने जीवन के बाद आएगा?' और लिखा है, 'मेरे बापू।' आपने मुझे 'मेरा' तो कह दिया। फिर अब दूसरों की इर्ष्या क्यों करते हो? आपको लगता है ये अगल-बगल में रहते हैं, उनको तो मैं कभी जवाब भी नहीं देता! मेरे अपने और पराये कैसे मैं कर सकता हूं? मेरे से कोई दूर नहीं, कोई निकट नहीं। कोई जबरदस्ती आपको दिखाने की कोशिश करे कि मैं बापू के निकट हूं, मेरे नाम से आपको कुछ कहे तो बात और है! कोई आ के कहे कि इनके घर पांच मिनट आओ ना और मैं जाउं तो ये आदमी मेरी पधरामणी का कुछ वसूल भी कर लेता है! वो उनको ऐसा भी कह देता है कि बापू सीधा नहीं लेते हैं, बापू तो हमारे हैं! मैं बापू को कह सकता हूं! मैं बापू तक पहुंचा दूंगा! मेरे श्रोताओं को मैं बहुत सावधान

करना चाहता हूं, आपका और मेरा संबंध केवल रामकथा है। कई लोगों को लगता है, इस आदमी को फोन करे तो बापू तक पहुंच जाए! मैं उनके फोन ही नहीं लेता! मैं कह देता हूं, बात करनी हो तो सीधा तलगाजरडा आए। तू क्यों बीच में आ रहा हैं? इससे आदमी को घमंड आ रहा है। फिर वो लोगों का लाभ लेता है! आप मुझे बीच में रखकर बेच तो न डालो! मैं सब को ममता कर रहा हूं। मेरे कौन भगत? भगत होना हो तो भगवान के होओ। अपने-पराये की बात व्यासपीठ को लागू नहीं होती। आप ऐसा कुछ मान ले तो उसके जिम्मेवार आप है, मैं नहीं। आप शोर्ट कट खोज रहे हैं! राजमार्ग पर आओ।

'बापू, आपने कहा, बिगड़ी हुई घड़ी ठीक करने जाए तो सब बिगड़ने की संभावना है, वैसे ही बिगड़ा हुआ मन ठीक करने के लिए बुद्धपुरुष को सौंप दो। ऐसा आपने कहा लेकिन बुद्धपुरुष को मन सौंप दिया, ये कैसे समझ में आए?' बुद्धपुरुष को मन सौंपा ये तभी मानना, जब तुम्हारे मन में उसकी बात के लिए कोई तर्क या विकल्प खड़ा न हो। पूरा उनको दे दिया। तो तुम मन के मालिक मत बनो। मन के मालिक बनने हम गए वो मन हमारे काबू में रहा नहीं है। पूरा का पूरा मन दे देना ये बहुत बड़ा समर्पण है। इसका मतलब है, आपके पास अब कुछ नहीं रहा।

अब सौंप दिया इस जीवन का सब भार तुम्हारे हाथों में।

परसों के आगे के दिन मैंने मिलने को नहीं कहा था फिर भी दस-पंद्रह लोग आए थे! पहले तो मुझे लगा, मैं मना कर दूं! फिर भी मैं मिला। मेरी भी अपनी कुछ फ्रिडम है। देश-विदेश में से कई भाई-बहन साल में एक बार आते हैं उनको मैं सामने से बुला लेता हूं। वो मांगते भी नहीं है कभी। मुझे लगता है कि मैं उनकी खबर पूछुं। बीस-चालीस साल से मेरे पढ़ाए हुए हैं ये लोग। जो मानते हैं, मैं कभी भी जा सकता हूं, उसको मैं मना करूं तो बुरा न लगाना। इससे ऐसा होता है, बापू हम लोगों को मिलना नहीं चाहते, कुछ लोगों को तो अधिकार है! ऐसे लोग स्वाभाविक सोचते हैं कि आपके भक्तों में हमारा नाम कब आएगा? मिलना तो कथा में ही होता है।

तो मैं और आप पूरा मन बुद्धपुरुष को देते कहां है? हम जब मन बुद्धपुरुष को दे देते हैं तो जिम्मेवारी उसकी। घडी, चश्मा, पैसे, शाल आपको दे सकता हूं लेकिन हम मन कैसे दें? मन देने का एक ही अभिप्राय है कि अब हमारी कोई सोच नहीं, पूर्ण शरणागति। इतनी शरणागति पे जो जाता है उसका काम कभी बिगड़ा नहीं। 'हित' और 'परमहित' जो तुलसी के शब्द है, उस पर ध्यान देना। कभी-कभी हमारे परमहित के कारण यदि कोई वस्तु हमें न मिले तो ये सोचना चाहिए कि ये मेरे परमहित में हो सकता है। लेकिन इतना भरोसा कहां से लाए? ये प्रश्न है। क्योंकि हमारा भरोसा मन में है, बुद्धि में है। 'अभय भई भरोस जिय आवा।' भरोसा तो हृदय में होता है।

अभिषेक ने पूछा है, 'बापू, पहले दिन आपने कहा कि 'अभय भई भरोस जिय आवा।' मन में नहीं?' भरोसा रखने जैसी ये सब जगह जरूर है। आप मन में भरोसे रखो ना बेटा! हृदय में भरोसा रखने का मेरा मतलब है जो कभी विफल न हो। उसने प्रश्न पूछा है, 'सुन्दरकांड' में सीताजी जब हनुमानजी को मिलती है तो मन में भरोसा आता है। आपने कहा हृदय में। 'सीता मन भरोस तब भयउ।' मेरे बच्चे ऐसा सोच रहे हैं, मुझे अच्छा लगता है। सीता के मन में भरोसा आया लेकिन बेटा, उस समय उसका संशय गया नहीं। वो ही जानकी कहती है कि मेरे मन में भरोसा आया, लेकिन जानकी जब रावण के सिर कटते जा रहे हैं और रावण मर नहीं रहा है तो फिर असमंजसता में है। तब त्रिजटा को कहना पड़ा, अब ऐसा होगा। तो मन में रखने से आपने अच्छी बेंक में डिपोझिट नहीं किया तो वो कभी भी आपको धोखा दे सकता है। भरोसा ये आखिरी बेंक है। हमारे भरोसे जैसी मूडी, संपदा रखनी है तो ऐरे-गैरे के पास रखें? इसीलिए कृष्ण कहते हैं, तू दूसरे की शरण में न जा, तू आख़िरी बेंक में आ जा। 'मामेकं शरणं व्रज।' साक्षर लोग हैं वो बुद्धि में ही भरोसा रखता है। बुद्धि कम दगा नहीं देती। बड़ें-बड़ें की बुद्धि बिगड़ जाती है। कभी हम भरोसा चित्त में रख देते हैं, वो भी पूरी सलामती नहीं। पूरी सलामती है हृदय में क्योंकि हृदय में ईश्वर बैठा है। 'ईश्वरः सर्वभूतानां हृद्देशेऽर्जुन तिष्ठति।' कभी-कभी कहते हैं, मेरे मन को संतोष हो गया। मन पर भरोसा मत करना। मन का संतोष भी टिकाउ नहीं है।

कभी-कभी 'मानस' में हृदय और मन पर्यायवाची है। जैसे धरती कहो, जमीन कहो। है तो दोनों एक ही। लेकिन दो शब्द आते हैं तो उसके अर्थ बदल जाते हैं। बिलकुल खाली हो उसे जमीन कहते हैं। जिसमें घास उगे, पानी के प्रवाह और घास को धारण करे उसे धरती कहते हैं। धारण करनेवाली को धरा, धरित्री कहते हैं। 'अयोध्याकांड' पढ़िएगा, वाल्मीकिजी राम को रहने की

जगह देते हैं, तो 'हृदय', 'उर', 'मन' समान अर्थ से चल रहे हैं। कुछ कविता को ठीक करने के लिए भी शब्द बदलने पड़ते हैं; छंदप्रबंध के लिए शब्द बदलते हैं। 'मानस' के अर्थ भी दो है। 'मानस' याने मन और 'मानस' मानी हृदय। 'रचि महेश निज मानस राखा।' शंकर ने मन में नहीं रखा। वहां 'मानस' मानी हृदय। शास्त्र में अवस्थाभेद से, स्थानभेद से, व्यक्तिभेद से, पूर्वापर संबंध से शब्द प्रयुक्त किए जाते हैं। अच्छी बात है कि कम से कम मन में तो भरोसा रहे।

आगे लिखा है चिठ्ठी में, 'मन सही में यदि बुद्धपुरुष को दिया जाए उसका प्रमाण क्या है?' प्रमाण है निर्भयता, अभयता। कायदेसर तुमने इन्कम टेक्स भरा है, तुम्हारे पैसे का पूरा हिसाब है, तो निर्भय होकर सो जाओ। शरणागत को काहे का भय? मैं बहुत भरोसावाला आदमी हूं। मुझे मेरे गुरु पर बहुत भरोसा है। मेरे हरिनाम, मेरी रामकथा पर भरोसा है। कुछ भी हो जाए, भरोसा हो। इसीलिए मैंने एक सूत्र दिया कि भरोसा ही भजन है। वैष्णव परंपरा का परमआश्रय का ये पद है-

दृढ़ इन चरनन केरो भरोसो, दृढ़ इन चरनन केरो,
श्री वल्लभ नख चन्द्र छटा बिन, सब जग मांहे अंधेरो ...

भरोसा वो है जो परमात्मा को कह दो, तू मेरे बारे में जो सोचना हो सोच, मैं तेरी भक्ति कर रहा हूं। तू वराह, मीन, कछुआ, नृसिंह, परशुराम, राम, कृष्ण, बुद्ध जो हो तुझे मुबारक, हम तुझे भज रहे हैं। चेलेन्ज करो। ज्यादा से ज्यादा मौत आएगी, जो सब को आने ही वाली है। वो फिल्म की पंक्ति याद करो-

तुम मुझे भूल भी जाओ तो ये हक है तुमको।

समर्पण तो ऐसी बात है कि तू भूल जा तो भूल जा, छूट दे दी लेकिन मैं प्रेम करूं तो तुझे कैसे रोकूं? व्यासपीठ का एकमात्र घराना है, भरोसा।

तो 'मानस' में ब्रह्मा का वर्णन, उसकी बातचीत हम करे हैं। जैसे हम ब्रह्मा को चतुर्मुख, चतुर्भुज कहते हैं-

बिष्नु चतुर्मुख बिधिचारी।
बिकट बेष मुख पंच पुरारी।।

तो भगवान ब्रह्मा के चार मुख है और 'गुरुर्ब्रह्मा', जब गुरु को हम ब्रह्मा के रूप में देखे अथवा ब्रह्मा को गुरु के रूप में देखे तो उसके चार मुख होते हैं। किसी ओर संदर्भ में चर्चा हुई भी है कि बुद्धपुरुष के चार मुख है। 'साधु साधु कहि ब्रह्म बखाना।' उसकी चर्चा चली थी तो साधुमुख शिव के पांच रूप कौन है ये कभी चर्चा हुई। बुद्धपुरुष के चतुर्मुख के बारे में यदि देखें तो पहला, बुद्धपुरुष का एक मुख है गुरुमुख। कोई भी बुद्धपुरुष होगा वो किसी ना किसी गुरुमुख से प्राप्त कर के बैठा होगा। यद्यपि बुद्ध कहे, 'मेरे कोई गुरु नहीं लेकिन मेरे पहले कई बुद्ध हो गये।' ये बुद्ध का निवेदन है। तो इसका अर्थ ये हुआ, बुद्धपुरुष के पहले भी कोई बुद्धपुरुष था। जैसे गालिब कहते हैं, मेरे पहले भी कोई मीर था। यदि ब्रह्मा के गुरुमुख को हम देखेंगे तो जैसे मैंने पहले आप से कहा, ग्रामवासीओं ने ब्रह्मा को लिए बहुत निरंकुश, निष्ठुर कहा। 'मानस' में किसी की इच्छित घटना नहीं घटती तो सीधा दोष ब्रह्मा को ही दिया जाता है!

बिधि बाम की करनी कठिन जेहि मातु कीन्हि...

वहां विधाता को दोष दिया गया कि विधाता की करनी वाम यानी उलटी है। जब बुद्धपुरुष के कोई निर्णय हमारे पक्ष में मालूम नहीं होता तब उसकी करनी को हम वाम कहते हैं। लेकिन गुरुमुखाश्रित व्यक्ति कभी बुद्धपुरुष का दोष नहीं निकालती। नारदजी ने ब्रह्मा का दोष नहीं निकाला। वो भी ब्रह्मा के पुत्र माने जाते हैं। नारद 'मानस' में कहते हैं, बिधाता ने जो भाल में लिखा है उसको कोई मिटा नहीं सकता। इस गुरुमुख को वो अपेल कहते हैं। उसकी बात कोई टाल नहीं सकता।

बुद्धपुरुष का दूसरा मुख है वेदमुख। ब्रह्मा के चारों मुख से वेद निकले हैं ऐसा कहते हैं। बुद्धपुरुष जो कहे वो शायद लिखित रूप में वेद में न भी मिले लेकिन 'जो बोले सो निहाल।' वो वेद है। तुलसी ने बहुत बार 'बेद अस गावा' कहा, ये बात शायद आपको वेद में न भी मिले लेकिन ये बुद्धपुरुष का वेदमुख है। वेदमुख कोई शब्द में सीमित नहीं है। पहुंचे हुए किसी भी व्यक्ति के मुख से निकलता है तो वो शास्त्र होता है। तीसरा, बुद्धपुरुष का एक मुख है सन्मुख। हमारी नासमझी में हमें गुरु को वो समझते हैं! गुरु को दोष देना बहुत सस्ता है क्योंकि वो बचाव या खुलासा नहीं करेगा। वो तो मैं जानूं ही ना, ऐसी ईश्वर से प्रार्थना करेगा ताकि दिल में कभी कटुता न आ जाए। वो कभी विमुख होता ही नहीं; सब के सन्मुख ही होता है। मैना ने तुरंत दोष दे दिया कि ये विधाता ने क्या किया? तेरे पति को ऐसा बना दिया? कैकेयी कहती है, भरत, मैंने सब काम तेरे लिए ठीक कर दिया! और बेचारी मंथरा ने थोड़ी मदद की। थोड़ा काम ब्रह्मा ने बिगाड़ दिया।

महाराज दशरथजी का देहांत हो गया। तब वहां ब्रह्मा को दोष लगाया गया! जो सन्मुख है, कभी किसी से विमुख नहीं होता, उस पर दोष लगाना बहुत आसान है।

बुद्धपुरुष का चौथा मुख है गोमुख। एक तो जहां गंगा निकली वो गोमुख। एक शिवमंदिर में गौमुखी होती है, जहां से शिव अभिषेक का जल निकलता है, वहां शिल्प गोमुख का होता है और हमारा श्रद्धाजगत कहते हैं, उसे नांघते नहीं। लेकिन भूल में कभी नांघ जाए तो चिंता नहीं करना। बैरखा करे तो मेरु आए वहां से हम लौट जाते हैं लेकिन कई भाई-बहन मेरु की ऐसी-तैसी कर के निकल जाते हैं! तो उसमें कोई चिंता नहीं। समय नियमावली का नहीं है, नामावली का है। माला तो मन का प्रतीक है। तू मन में सोचते-सोचते ऐसी जगह पे पहुंचा और लगे कि ये ठीक नहीं तो वहीं से मुड़ जाओ। बुद्धपुरुष का चेहरा इतना निर्दोष होता है जैसे गाय का मुख हो। उसका आत्मबल वज्र जैसा होता है। झहर पीना है तो शंकर भी देखता रह जाए, ऐसे पी जाएगा। कोई सहन न कर सके इतना सहन करेगा लेकिन चेहरा गाय की तरह गरीब होगा। जिसके चेहरे को देखकर लगे, एक रांकभाव, प्रपत्ति का भाव, दीनता का भाव। इसीलिए गंगासती कहती है-

भक्ति रे करवी एने रांक थईने रहेवुं पानबाई,
मेलवुं अंतरनुं अभिमान...

'विदग्ध माधव', जो चैतन्य परंपरा का ग्रंथ है, उसके आमुख में ऐसा कहा है कि बुद्धपुरुष के आश्रित को दो वस्तु निरंतर दिखनी चाहिए। एक, उनके चरण। दूसरा, उनकी आंखें। ये मुझे बहुत निकट पड़ता है। पादुका को जड़ मत समझना; वो स्वयं गुरुचरण है। ईश्वर के हाथ, कान, सिर, बाहु, उदर, नेत्र अनेक है लेकिन चरण दो ही होते हैं। ईश्वर और बुद्धपुरुष का ये अंतर है। परमात्मा के बाकी अंग बहुत होते हैं। बुद्धपुरुष के चरण अनेक होते हैं। जिसके पास गुरु की चरणपादुका हो ये उनके चरण है। पादुका चरण ही है। आपको गुरु में पूर्ण निष्ठा है तो महसूस भी होगा कि पादुका स्थूल रूप में भले घर में रही लेकिन गुरुचरण तो मेरे पीछे आ ही रहे हैं।

बरोडावाले हरीशभाई ने जो लिस्ट भेजा है; 'ब्रह्म' शब्द से जुड़े शब्दों का लिस्ट निकाला है। ब्रह्मा, ब्रह्मादि, ब्रह्मादिक, ऐसे ब्रह्म कुल सत्ताइस बार आया है। ब्रह्मा से जुड़े महत्त्व की बातें है 'मानस' में। 'ब्रह्म' शब्द आठ बार आया। कुल सोलह बार 'ब्रह्म' शब्द से जुड़ी पहचान आई वो है ब्रह्मसभा, ब्रह्मभवन, ब्रह्मगिरा, ब्रह्मसृष्टि, ब्रह्मकुल, ब्रह्मसर, ब्रह्मधाम, ब्रह्मपुर, ब्रह्मअस्त्र, ब्रह्मबाण, ब्रह्मआधार, ब्रह्मलोक। 'ब्रह्म' का सुंदर उल्लेख 'सुन्दरकांड' में है। ब्रह्म ऐसे पितामह है जो आगाह बहुत करते हैं। घर का मुखिया जिसकी आयु, समझ, अनुभव बड़ा हो वो परिवार के लोगों को आगाह बहुत करते हैं।

पुर रखवारे देखि बहु कपि मन कीन्ह बिचार।

हनुमानजी रात्रि में लंकाप्रवेश करते हैं, तो बहुत पुररक्षक को देखे। हनुमानजी सोचने लगे, सूक्ष्म रूप में नगरप्रवेश करूं। लंकिनी नामक राक्षसी हनुमानजी को रोकती है, तुम्हें पता नहीं, लंका के चोर ही मेरा आहार है! तब हनुमानजी ने मुठिका मारकर उसे गिरा दिया! रक्त निकलने लगा, गिर पड़ी। संभलकर फिर उठती है, हाथ जोड़कर सभीत है लेकिन कहने लगी, 'रावण, कुंभकर्ण, विभीषण ने बहुत तपस्या की और ब्रह्मा और शंकर ने मिलकर जो वरदान दिये और वापस लौट रहे थे तो मुझे भी कहा, जब एक बंदर लंका आएगा और तुम्हें मुष्ठि प्रहार करे और तू विफल होकर गिर जा तब समझना अब कुछ समय में राक्षसों का उद्धार होगा।

तात मोर अति पुन्य बहुता।
देखेउँ नयन राम कर दूता।।

मैं पुण्यवान हूं कि रामदूत का दर्शन कर रही हूं। 'बालकांड' में शादी के प्रसंग में विधि को बहुत आश्चर्य हो जाता है, जनकपुर में इतनी रचनाएं है, उसमें मेरी तो कोई रचना है ही नहीं! तब रामप्रताप, रामप्रभाव, रामस्वभाव की प्रभुता केवल महेश जानते हैं तो ब्रह्माजी ने महेश को इसके बारे में पूछा। तो ब्रह्मा 'मानस' में कहीं विस्मित है; कहीं आगाही दे रहे हैं; कहीं आह्वान कर रहे हैं; कहीं समझा रहे हैं; कहीं गालियां खा रहे हैं; कहीं स्तुतियां कर रहे हैं। और रावण तो ब्रह्मा की मजाक ही करता था! वरना वो ब्रह्मा की परंपरा में आता था।

कल प्रथम सोपान को हमनें विराम दिया था। दूसरा कांड 'अयोध्याकांड' है। जब से राम-सीता ब्याहकर आए हैं, नितनूतन आनंद, सुख बढ़ता जा रहा है। लेकिन अत्यंत सुख ठीक नहीं। सुख के बाद दुःख आता है। अवध के अति सुख का परिणाम ये है कि अब विषम दुःख आया चौदह साल का। महाराज दशरथजी सभा में बैठे हैं, स्वाभाविक निज दर्शन करते हुए सफेद बाल कान के पास देखा और मानो बूढ़ापे में महाराज को गुरुमंत्र दिया कि युवराजपद राम को निश्चित कर दो। प्रत्येक व्यक्ति को समय होने पर निवृत्ति की ओर जाना चाहिए। ये हम सब के लिए संकेत है। दशरथजी ने वशिष्ठजी को निवेदन किया कि सब राम को प्रेम करते हैं। राम लायक है तो राम को युवराजपद पे नियुक्त कर दें? मैं बूढ़ा हो चुका हूं। वशिष्ठजी ने प्रसन्नता व्यक्त करते कहा, मुहूर्त की जरूरत नहीं। जिस समय राम को तिलक करो वो भला दिन। दशरथजी सब व्यवस्था करके कैकेईगृह जाते हैं। उस बीच पूरी रचना बिगड़ जाती है। मंथरा नामक कैकेई की दासी अयोध्या का आनंद देखकर इर्ष्या से जल गई! मंथरा ने आकर कैकेई की सोच बदल दी। कैकेई कोपभवन में बिना बिछाना लेट गई। संध्या के समय आनंद में डूबे दशरथजी कैकेईगृह आते हैं। राजा अपनी रूठी हुई रानी को समझाते हैं। महाराज, दो वरदान देने हैं। कैकेई मांगती है, पुत्र का राज्य, राम का वनवास।

राम-सीता-लक्ष्मण वनवास जाते हैं। सुमंत प्रभु को छोड़ने जाता है। तमसा तट पर पहला विश्राम। प्रभु गंगातट गए। यहां प्रजाजन लौट गए। भगवान जटाबंधन कर के रुकते हैं। दूसरे दिन सुमंत की विदाय। प्रभु केवट की नौका से गंगापार करते हैं। फिर भरद्वाज के आश्रम में आए। वहां से चित्रकूट पहुंचते हैं। यहां सुमंत लौटते हैं। राम-लखन-जानकी तीनों में से कोई नहीं आएगा, ये बात सुनकर दशरथजी प्राणत्याग करते हैं। भरतजी आए, पितृक्रिया की। भरत के साथ पूरी अयोध्या चित्रकूट आती है। जनकपुर भी आ गया। बड़ी-बड़ी सभाएं हुई। आख़िर में तुलसी कहते हैं, प्रभु कृपा कर के पादुका देते हैं। भरतजी पादुका राजसिंहासन पर रखकर तपस्वी बनकर नंदिग्राम में मुनिव्रत धारण करके तप करने लगे।

'अरण्यकांड' में चित्रकूट में प्रभु तेरह साल निवास करते हैं। अत्रि के आश्रम में आए। अत्रि ने प्रभु की स्तुति की। अनसूया ने नारीधर्म का उपदेश दिया। वहां से सरभंग, सुतीक्ष्ण, अगस्त्य मुनि आदि सब को मिलते हुए गीधराज जटायु से मैत्री कर के भगवान पंचवटी गोदावरी तट पर पहुंचे। वहां लक्ष्मणजी से आध्यात्मिक चर्चा होती है। शूर्पणखा आई। दंड़ित हुई। खर-दूषण-त्रिशिरा का निर्वाण हुआ। रावण मारीच को लेकर योजना बनाकर आया। सीता का अपहरण हुआ। विरही लीला करते हुए भगवान राम-लखन जानकी की खोज में निकलते हैं। जटायु को योगी लोग याचना करे तो भी न मिले ऐसी गति दी। प्रभु कबंध का उद्धार कर के शबरी के आश्रम आते हैं। शबरी के साथ नव प्रकार की भक्ति की चर्चा हुई। योगाग्नि में अपना देह विलीन कर के शबरी जहां से लौटना न पड़े वहां पहुंच गई। प्रभु पंपासरोवर आए। नारदजी आए और प्रभु संत के लक्षण के बारे में कहते हैं, इसका पार श्रुति भी नहीं पा सकती।

'किष्किंधाकांड' में हनुमानजी द्वारा सुग्रीव और राम की मैत्री होती है। वालि को निर्वाण। सुग्रीव को राज। अंगद को युवराजपद मिलता है। भगवान प्रवर्षण पर्वत पर चातुर्मास का व्रत लेकर बैठते हैं। सुग्रीव प्रभु का काम भूल गया और भगवान ने थोड़ा भय दिखाया। सुग्रीव शरण में आया। जानकी की खोज की योजना बनी। सब को अलग-अलग दिशा में भेज दिए। जिसके अंगद नायक है, सलाहकार जामवंत यानी ब्रह्मा है और श्री हनुमानजी भी उसी टुकड़ी में है उसे दक्षिण दिशा में भेजते हैं। भगवान को लगा कि हनुमान ही काम कर पाएगा। मुद्रिका दी। सब गहन वन में भूले पड़े। स्वयंप्रभा से मिले। उसके बाद सागरतट पर संपाति मिला। फिर कौन लंका जाए उसकी चर्चा हुई। और आख़िर में हनुमानजी को जामवंत ने-ब्रह्मा ने कहा-

कपि सेन संग सँघारि निसिचर रामु सीतहि आनिहैं।
त्रैलोक पावन सुजसु सुर मुनि नारदादि बखानिहैं।।

आगे की कथा कल करेंगे। आज की कथा यहां विराम लेती है।

कथा ही हमारी समस्या का जवाब दे पाएगी। इस कथा में सात-आठ भाई-बहन ने कहा कि 'बापू, हमें ऐसा लगता है कि जो प्रोब्लेम्स लेकर हम आए हैं इसके जवाब हमें कथा में मिले जा रहे हैं।' अब ये तो मुझे भी पता नहीं। मैं ब्रह्मा के लिए बैठा हूं। आपको क्या हो रहा है ये आप जाने! भगवद्कथा में ताकत है। जरूर तुम्हारी मुश्किल का सामना करो; तुम्हारा उत्तरदायित्व निभाओ। फिर भी उसमें से यदि समय मिल भी गया तो उर्जा लेकर तुम यहां से जाओगे। कथा एक उपाय है साहब! कथा श्रोता, आयोजक, सेवा करनेवाले सभी को रिपेर करती है।

मानस-ब्रह्मा : ९

ब्रह्मा सर्जक है वैसे सत्य सबका सर्जक है

'मानस' में ब्रह्मा को ब्रह्म भी कहा, मानो प्रास के लिए भी, छंदबद्धता के लिए भी;'ब्रह्माधाम' नहीं; 'ब्रह्मधाम', 'ब्रह्मगिरा', 'ब्रह्मभवन' कहा। लेकिन 'ब्रह्म' शब्द आता है तो उसका अर्थ ये भी होता है कि परमतत्त्व। 'गीता' में 'धाता' कहकर विश्वतोमुख कह दिया। कभी क्षय न हो, ऐसा काल का काल हूं मैं, इस विश्व का धाता हूं, ऐसा कहा, इसमें ब्रह्मा का ही संकेत मिलता है। शंकराचार्य भगवान की दृष्टि में ब्रह्म सत्य है। दूसरा तत्त्व है विष्णु। विष्णु अवतार में राम, कृष्ण दशावतार में है तो विष्णु का अर्थ मेरी व्यासपीठ की दृष्टि से हो गया प्रेम। इसका अर्थ 'भागवत' की दृष्टि से करूं तो 'भागवत'कार दो-तीन बार दोहराए जा रहे हैं कि पूरी सृष्टि सत्य से ही प्रगट हुई है। ब्रह्मा सर्जक है, वैसे सत्य सबका सर्जक है। सत्य ही एक ऐसी गुहा है जिसमें से सब निकलता है। विष्णु प्रेम है और प्रेम पालन करता है। आप बिलकुल सामान्य धरा से भी देखो तो नफ़रत कभी किसीका पालन नहीं कर पाएगी। संसार में जब भी पालन होगा, परितोष होगा, परिपालन होगा तो ये प्रेम ही कर सकता है। हम सबको परस्पर का प्रेम ही पालता है। सत्य हम सबमें कितनी मात्रा में है? यद्यपि हम सब सत्य से ही प्रगट हुए हैं, लेकिन वो हममें कितना है ये तो अल्लाह जाने! लेकिन हम परिपालित है, परस्पर भाव से रहते हैं ये प्रेम का प्रभाव है।

कल एक चिट्ठी मिली, उसमें लिखा है, 'बापू, आप सत्य, प्रेम, करुणा ये सारभूत बातें करते हैं, उसमें आप विशेष महत्त्व किसे देंगे?' विशेष महत्त्व देना मुश्किल है। ये आध्यात्मिक त्रिकोण है। कोई भी रेखा काटी नहीं जाती। ये तीनों कोने अखंड रखने पड़ेंगे। कई बार हमारी चर्चा हुई है कि प्रेम को व्यासपीठ ने केन्द्र में रखा। इस कथा में मैं 'परमप्रेम' शब्द का ज्यादा प्रयोग किए जा रहा हूं तब मुझे कहना है कि कोई सत्य रखे, कोई प्रेम रखे, कोई करुणा रखे। ये एक-दूसरे से बिलग नहीं किया जा सकता, लेकिन यदि हममें परमप्रेम है तो वो सत्य है, परमप्रेम है तो वो करुणा है। जिसमें परमप्रेम है वो करुणावान होगा ही। जहां भगवान शंकर के मुख से जो शब्द 'मानस' में आए, उसका अर्थ तो यही होना चाहिए।

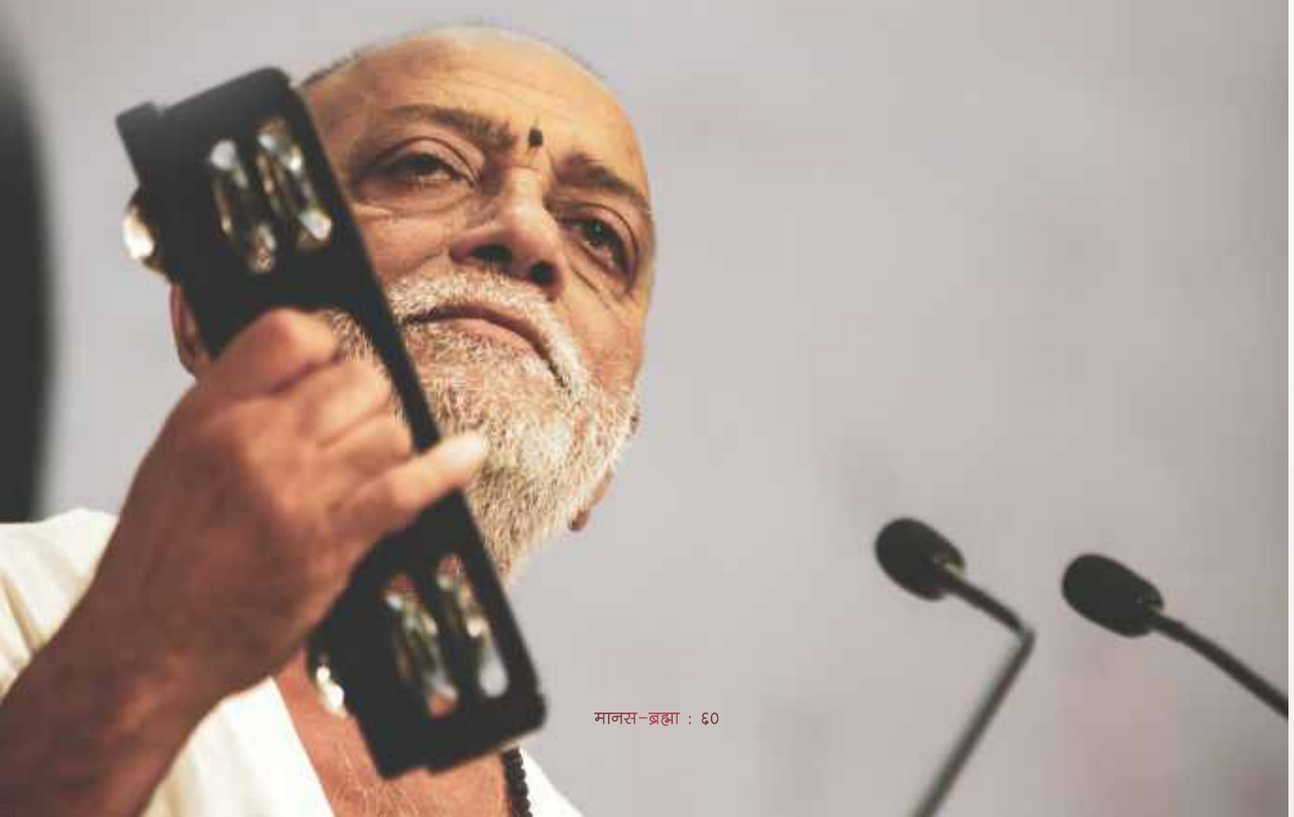

उमा कहउँ मैं अनुभव अपना।
सत हरि भजनु जगत सब सपना।।

सत हरिभजन है। भजन याने प्रेम। तो यहां ब्रह्मा, विष्णु, महेश की बात आई तो तीनों तत्त्व मौजूद है। सत्य विष्णु है, प्रेम कृष्ण है। प्रेम के साथ मैं 'परम' शब्द लगा रहा हूं ताकि कोई गलती न हो जाए। 'दोहावली रामायण' में एक दोहा है-

दंपति रस रसना दसन परिजन बदन सुगेह।
तुलसी हर हित बरन सिसु संपति सहज सनेह।।

तुलसीदासजी ने सुंदर परिवार का निर्माण किया है, जैसे हमारा छोटा-सा परिवार हो। उसमें छोटा-सा घर हो, माता-पिता हो, भाई-बहन हो, संतान हो। और चाणक्य ने कहा, 'इच्छापूर्ति धन' थोड़ी संपदा हो। ये परिवार की व्याख्या है। रसना माने जिह्वा, जीभ। और रस याने रस। रस और रसना पति-पत्नी है। कितना सुंदर दांपत्य है! ये दोनों एक-दूसरे के बिना रह नहीं सकते। रस है तो रसना होगी। और हमारे पास रसना है तो रस होगा। किसी दंपती को आशीर्वाद देना हो तो ये दो, रस और रसना की समान तुम्हारा दांपत्य सुखी हो। दसन याने दांत हमारे परिजन है। चेहरा हमारा छोटा-सा घर है। दांत काटने का काम भी करते हैं और दांत खोराक को चबाकर विशेष रसनिष्पत्ति करके जीभ को देते हैं। परिवार के लोग ऐसे होने चाहिए कि चबा-चबाकर वस्तु को रसमय बनाए। तो दसन याने भाई कैसे होने चाहिए उसकी इस प्रसंग में चर्चा है। जीभ रसना है। ज्यादातर आदमी सुबह में मुखमंजन, दंतमंजन करते हैं। जिह्वा तो साफ़ कर ही लेते हैं, लेकिन ज्यादा से ज्यादा दांत की ही सफ़ाई करते हैं। दांत को बहुत श्वेत रखने की सबकी चेष्टा होती है। इसका अर्थ है, परिवार में अपने भाई, अपनी संतान को श्वेत, साफ़-सूथरे रखे जाए।

मेरा कहना ये है कि छोटा-सा परिवार हो। रस-रसना याने पति-पत्नी; चेहरा हमारा घर; दांत के समान हमारे परिजन। तुलसी कहते हैं, शंकर को प्रिय लगे ऐसे दो बच्चें, 'रा' और 'म'। तुलसीदासजी राम को माँ-बाप भी कहते हैं और बच्चें भी कहते हैं। 'विदग्ध माधव' का शब्द 'वर्णद्वय।' ये दो वर्ण हमारी जिह्वा पर घूमते रहे और उसमें हमारा सहज स्नेह हो, परमप्रेम हो वो ही हमारी संपदा।

मेरे श्रावक भाई-बहन, हमारी संपदा परमप्रेम है। बच्चे की तरह 'रा' और 'म'; 'रा' और 'धे'; 'कृष्ण', 'शिव' इसको जपे। उसी सहज स्नेह को व्यासपीठ परमप्रेम कहती है। और करुणा के बिना निर्वाण असंभव है। ब्रह्म सत्य है, जिससे सृष्टि निर्मित हुई है। विष्णु प्रेम है जो परिपालन करता है। और महेश करुणा है जो हमारे निर्वाण की जिम्मेवारी लेता है। ऐसे ब्रह्मा एक बार ब्रह्मलोक में गए।

नारदजी बार-बार धरती में आए। राम राजा हो गए तो राम की लीला देखते हैं। फिर वीणावादन करके ब्रह्मलोक जाते हैं और भगवान की बिलग-बिलग लीलाओं का जिक्र करते हैं। एक दिन नारदजी ब्रह्मलोक में भगवद्कथा सुनाने लगे। विश्राम हुआ। नारदजी बिदा लेते समय ब्रह्मा को प्रणाम करके कहते हैं, भगवन्, मैं सब जगह घूमता हूं। लोग मुझे पूछते हैं। मेरे पास उसका स्पष्ट उत्तर नहीं है। चार प्रश्न के उत्तर आप दीजिए तो पृथ्वी पर जाकर मैं ये बात कहूं।

पहला, 'को सत्यः?' ये नारदजी का पहला प्रश्न। दूसरा, 'को तपः?' तप क्या है? तीसरा, 'को स्वर्गः?' स्वर्ग क्या है? चौथा, 'को नर्कः?' नर्क क्या है? चार प्रश्न नारदजी ने ब्रह्मा को पूछे और ब्रह्माजी छोटे-छोटे सूत्रात्मक प्रत्युत्तर देते हैं, जो हमारे लिए बहुत उपयोगी है। पहला, सत्य क्या है? 'भजनं सत्य।' ऐसा ब्रह्मा कहते हैं। 'भजन ही सत्य है।''सत हरि भजनु जगत सब सपना।' जो महेश का मत है, वो ही मत ब्रह्मा का है। विष्णु का भजन करो। ब्रह्मा का भजन करो। तो ये विष्णु के साथ भी जुड़ा हुआ है। भजन की बहुत व्याख्या हुई है, होती रहेगी। सुषुप्ति तो महान है ही लेकिन स्वप्नावस्था में भी जिसका अंतःकरण पवित्र रहे, उसका नाम है भजन। भले-बुरे सपने आते हैं। एक ही उपाय है, जाग जाओ। जप-तप-यज्ञ से सपने का दुःख नहीं मिटता। केवल आदमी जाग जाए। जाग जाए याने कोई भी विचार आए उसे देखो, कोई प्रतिक्रिया न करो। बच्चें तूफ़ान करता हो, लडाकू हो, जिद्दी हो; जितनी रोकटोक करो उतना ज्यादा तूफ़ान करता है तब सयाने माँ-बाप सब देखते रहते हैं, कुछ समय के बाद वही थककर सो जाएगा। सपने में भी जिसका अंतःकरण दूषित न हो वो भजन।

भजन का दूसरा अर्थ ये भी महसूस हो रहा है कि किसी के प्रति द्वेषदृष्टि कम हो जाए, समझ लो, भजन बढ़ा। मेरे पास कई लोग कहते हैं, राग-द्वेष नहीं जाते, कथा सुनते हैं तो भी! जैसे कजरा लगाओ तो आंख की शोभा बदल जाती है। वैसे जो आंख दूसरे का द्वेष नहीं करती वो आंख भजन करती है। तुम्हारा मन और चित्त ही भजन करे ऐसा नहीं; माला जपते समय ऊंगलियां ही भजन करे ऐसा नहीं; हमारी आंख से द्वेषदृष्टि कम हो जाए ये भजन है। निरंतर हरिनाम लेना ये तो महत्त्व का है ही।

भजन का तीसरा अर्थ, हरपल आपके मन में खयाल आए कि मैं दूसरो को कुछ दूं, प्रसन्नता दूं, मुस्कुराहट दूं।

धरम-करम के नाम पे हमें धोखा ना दो।
मांगा था एक इन्सान हमें खुदा न दो।

निरंतर जप करे ये भजन है। हमारे यहां तो बोला जाता है, 'रामनाम सत्य है।' तो 'रामनाम' भजन है तो यही सत्य है।

दूसरा, 'को तपः?' तप क्या है? तब ब्रह्माजी नारदजी को कहते हैं, विरह ही तप है। प्रेममार्ग, भजनमार्ग, भक्तिमार्ग में वियोग को तप माना गया है। तपस्वी उसे माना जाता है, जो कम खाता है। विरह का तप ऐसा है कि अपने आप विरह के कारण खाना कम होने लगता है। विरहरूपी तप से अपने आप नींद कम होने लगती है। भरत के जीवन का ये सत्य है। रामविरह में न भूख लगती है, न नींद आती है। तप की व्याख्या अपने आप विरह में चरितार्थ होने लगती है। ताप वस्तु को सूखा देता है। बारिश में जमीन गिली हुई हो फिर ताप निकले तो धरती सूखी हो जाती है। विरहरूपी तप सूखा तप नहीं है; वो गिला तप है। इसमें आंसू नहीं रुकते। शरीर को सूखा देता है, लेकिन आंसू को बढ़ाता है। जैसे गोपीजन कहती थी-

निशदिन बरसत नैन हमारे,
सदा रहत बारिश ऋतु हम पर।

चाणक्य का एक सूत्र है, भूमि से निकला पानी पवित्र है। जिसकी जुबान पर किसीकी निंदा नहीं और वेदमंत्र खेलते हो वो ब्राह्मण पवित्र है। पतिव्रता नारी का व्रत पवित्र है। जिसकी आंख में इर्ष्या नहीं वो आंख पवित्र है। परमात्मा का नाम पवित्र है। वैसे विरह में जिसकी आंख से आंसू निकलते हैं वो आंख बहुत पवित्र है। विरहरूपी तप का वरदान प्राप्त करने के लिए विरह का एक प्रकार का सुख प्राप्त करने के लिए किसीके साथ जुड़ना पड़ता है। बिना संयोग वियोग नहीं आता।

तीसरा, 'को स्वर्गः?' ब्रह्माजी कहते हैं, 'साधो स्वर्गः।' कोई साधु मिल जाए इससे बड़ा, हे नारद, कोई स्वर्ग नहीं। 'तात स्वर्ग अपबर्ग सुख धरिअ तुला एक अंग।' 'मानस' कहता है, एक पलड़े में स्वर्ग और मोक्ष का सुख रख दो, और एक पलड़े में कोई साधुसंग मिल जाए उसका सुख। साधु का दर्शन, उसका मिलना ये स्वर्ग है। स्वर्ग के वर्णन में तो ऐसा है कि वहां शराब के झरणे है, नंदनवन है, कल्पतरु है, अप्सरा है, सुख ही सुख है। साधुरूपी स्वर्ग में वो शराब नहीं कि ऊतर जाए। वो नानकवाली, भरतवाली शराब-सुरा है।

कभी रोती कभी हंसती कभी लगती शराबी-सी।
महोब्बत करनेवालों की निगाहें और होती है।

साधु मिल जाए तो स्थूलरूप में बाग नहीं। साधु होता है वहां बिलग प्रकार का नंदनवन होता है। उसका अर्थ है, आनंद ही आनंद होता है। स्वर्ग में गान-तान होता है। साधुरूपी स्वर्ग मिल जाए तो वहां कीर्तन, नर्तन, गान, तान है। स्वर्ग के वर्णन में जो बातें आती है, वो तो क्षण भंगुर भी है। साधुसंग का स्वर्ग परम शाश्वत है, अखंड है।

चौथा, 'को नर्कः?' 'निंदा नर्कः।' ब्रह्माजी कहते हैं, 'हे नारद, निंदा ही नर्क है।' हमारे हाथ में है कि नर्क में रहना कि स्वर्ग में रहना? मैं बार-बार कहता हूं, रोटी बनाने में देर लगती है, लेकिन परमतत्त्व को जानने में और समझने में देर नहीं लगती। यदि सीधे-सादे माँ के दूध की तरह ये सूत्र ऊतर जाए तो निंदा ही नर्क है। नर्क का वर्णन भयानक है! बड़ी-बड़ी कड़ाईओं में तेल उबलता होगा, उसमें पकड़कर डाले जाएंगे, उसको नर्कवासी तलेंगे। आदमी ने थोड़े पाप किए तो इतने बड़े नर्क का विधान ठीक नहीं लगता! थोड़ी इमानदारी रखनी चाहिए। मेरी अध्यक्षता में ये कमिशन यदि बिठाया जाए, तो मैं सभी नर्कवालों को बाहर निकाल दूं। नर्क का संविधान ही खतम कर दूं! असली नर्क तो निंदा है। व्रत लो तो ऐसा लो कि मैं किसी की निंदा न करूं। बोलने-सुनने में अच्छा लगता है, लेकिन मौका आते ही फिर निंदा शुरू! क्योंकि जन्म-जन्म का अभ्यास है! इसीलिए 'मानस' में लिखा है, बहुत साल अभ्यास करने से कभी ये कम होता है। नारदजी

प्रसन्न होते हैं। ब्रह्मलोक से संदेश लेकर पृथ्वी पर बांटते हैं।

मैं बहुत बोला हूं, मेरे त्रिभुवनेश्वर ने जो पांच बातें बताई। आप भी इसका ध्यान रखे। एक, सत्य बोलना और संभव हो तो प्रिय सत्य बोलना। अब मुश्किल है। हम जीव है। चुक जाते हैं। कथा लेने आए और समय हो तो भी कह दे कि समय नहीं है, तो ये झूठ ही हुआ। ये जवाब भी मुझे चूभता है। इसीलिए कुछ समय से इसमें सुधार किया है, मेरे पास समय है, पर मेरा मन नहीं है। सामनेवाला नाराज हो तो हो! दुनिया को हम कब तक खुश रखे? बहुत मुश्किल है। पानी को आप लाख मथो, घी नहीं निकलता। घी निकालने जाओ तो वो ही पानी कीचड़ बनके तुम्हें गंदा करेगा। गोस्वामीजी ठीक कहते हैं, 'उदासीन नित रहई गोसांई।' सामनेवाले को पता न लगे ऐसे तुम्हारे मन के तरंगों को धीरे-धीरे अंदर ले लो। 'कुछ तो लोग कहेंगे, लोगों का काम है कहना।' ऐसे समय में मुझे मना करना पड़ता है कि मेरा मन नहीं है। तुरंत पाघडी दिखती है। कोई ऐसे बुद्धपुरुष की शरण में रहो जो तुम्हें ब्रेक मारे। कृष्ण के हाथ में चाबुक भी है, बागडौर भी है। कृष्ण जगद्गुरु है। बुद्धपुरुष जगद्गुरु नहीं, सद्गुरु है। उसके पास चाबुक नहीं, बागडौर ही होती है। मेरे पढ़ाए जो लोग है, वो कहते हैं, ओर कोई बात नहीं है, जब गलत करने जाते हैं तो तुरंत बापू की दाढ़ी दिखती है! ये प्यारी बात है। ऊंचे से ऊंचे स्थान से प्रोग्राम लेने के लिए संदेश आते हैं, तो अब मैं यही कहूंगा कि मेरा मन नहीं है। भला मेरा कमरा। कमरे में भी एक कोना खोजकर बैठता हूं। आदमी को अपनी वेदना व्यक्त करने के लिए एक जगह होती है। वैसे परमात्मा को भजने के लिए भी ऐसे स्थान अच्छे लगते हैं। कई लोग बात करने आते हैं तो मैं कहता हूं, तेरी इच्छा बात करने की है, मेरी मानसिकता बात करने की नहीं है।

दादा ने दूसरी बात बताई कि नित्य 'मानस' और 'गीता' का पाठ करो। आपका जो इष्ट ग्रंथ हो, 'भागवत', 'बाईबल', 'कुर्रान' किसीका भी पाठ करो; कोई आपत्ति नहीं। महोब्बत कभी सांप्रदायिक नहीं होती। ना समझों ने दीवारें पैदा की है। भक्ति बिनसांप्रदायिक होती है। पारायण कभी न हुआ तो चिंता मत करना। मैंने तो छूट दी है कि कथा में आओ और आपका नित्यकर्म न निभे तो कथा सुने उसमें सब नियम पूरे हो जाते हैं।

तीसरी बात, अहंकार से सावधान रहना। मच्छर काटने से रोग होते हैं तो आदमी मच्छर से सावधान रहते हैं लेकिन मत्सर से नहीं रहते! मत्सर अहंकार का सौतेला भाई है। परमात्मा ने आपको रूप दिया है तो प्रसाद

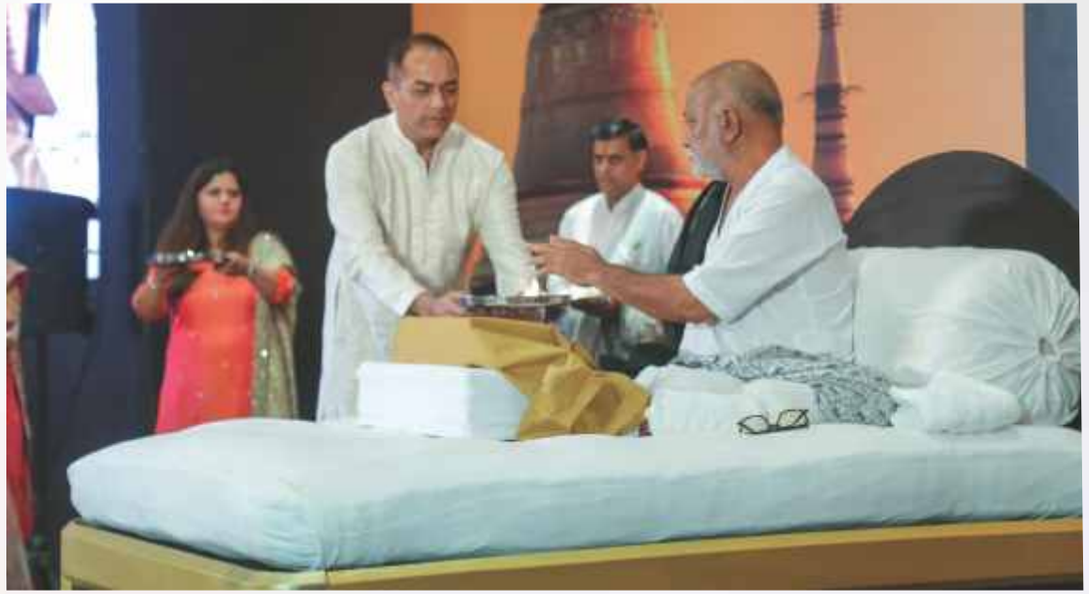

समझकर एन्जोय करना, उसका अहंकार मत करना। परमात्मा ने बुद्धि दी हो तो एन्जोय करना कि परमात्मा ने मेरी खोपडी में बुद्धि दी है, लेकिन अहंकार मत करना। अच्छा गाना-बजाना, प्रवचन करना, शिल्प, चित्र, संपदा मिले हो तो परमात्मा का प्रसाद समझना, मत्सर नहीं। भगवान किसी न किसी रूप में हमारे सामने आता है, लेकिन हम आवकार ही नहीं देते!

बनी घटना आपको सुनाऊं। संत दादु अपना निज व्यवसाय चमड़े आदि का करते थे। तो कबीर का शिष्य कमाल आता है। दो मिनट के बाद दादु का ध्यान कमाल पर गया एकदम और बुलाने लगे और पीड़ा हुई कि कबीरसाहब का बेटा अथवा शिष्य मेरे द्वार पे आये और मैं दो मिनट चुक गया! उन्होंने कहा, मेरे पास ओर आसन नहीं है। ये चर्मासन पे आप बैठो। कमाल वहां बैठ जाते हैं। कमाल के सामने दादु की आंख में आंसू आए तो कमाल ने कहा, दो मिनट ही हुई थी। आप अपने काम में थे और जैसे ध्यान गया, आपने आसन भी दिया। अब क्यों ज्यादा ग्लानि प्रगट करते हो? दादु बोले, आज मैं दो मिनिट चुक गया लेकिन यदि भगवान आए और मैं मेरी व्यस्तता में चुक जाऊं तो? अहंकार न आए इसके लिए सावधान रहना और यदि आ गया तो ओर सावधान रहना।

चौथा, किसी की निंदा और इर्ष्या मत करना; ये चौथा सूत्र। जितना हो सके मौन रहना और निरंतर हरिस्मरण करना। तो नारद को ये चार सूत्र दिए। ऐसे ब्रह्मा को हम गा रहे हैं।

आइए, कथा के क्रम में आगे बढ़ें। 'सुन्दरकांड' का आरंभ ब्रह्मा के वचन से हो रहा है। इसमें मंत्र में तो ब्रह्मा का उल्लेख है ही। जामवंत ब्रह्मा है।

शान्तं शाश्वतमप्रमेयमनघं निर्वाणशान्तिप्रदं
ब्रह्माशम्भुफणीन्द्रसेव्यमनिशं वेदान्तवेद्यं विभुम्।
रामाख्यं जगदीश्वरं सुरगुरुं मायामनुष्यं हरिं
वन्देऽहं करुणाकरं रघुवरं भूपालचूडामणिम्

●

जामवंत के बचन सुहाए।
सुनि हनुमंत हृदय अति भाए।।
तब लगि मोहि परिखेहु तुम्ह भाई।
सहि दुख कंद मूल फल खाई।।

जामवंत के वचन सुनकर सबको अच्छा लगा। श्रीहनुमानजी महाराज सबको प्रणाम करके सिंधुतट पर एक सुंदर भुवन पर चढ़ गए। बार-बार रघुबीर को याद करके पर्वत पर से भगवान के अमोघ बाण की तरह उड़ान भरी। सर्पों की माता सुरसा को हनुमानजी ने बुद्धिकौशल्य से परास्त किया। ये सब बाधाएं है भक्ति और शांति तक पहोंचने की। उसके बाद सिंहिका छाया ग्रहण करती है और हनुमानजी उसे निर्वाण देकर समुद्र लांघकर तट पर आ गए। वहां से हनुमानजी ने पूरी लंका का दर्शन किया।

श्रीहनुमानजी महाराज लंका में प्रवेश करते हैं। मंदिर-मंदिर में खोज रहे हैं सीयाजु को। अगणित योद्धाओं को तमोगुण में डूबे पाए। रावण के भवन में गए। कहीं जानकी न मिली। एक भवन देखा, जहां मंदिर है, रामायुध अंकित गृह है, तुलसी के पोधे हैं। श्रीहनुमानजी को लगा, लंका में कोई वैष्णव निवास कर रहा है। सीताजी तक पहुंचने की जुगति विभीषण ने बताई। हनुमानजी अशोकवन में जाते हैं, जानकी को अशोकवृक्ष के नीचे शोकरत पाई। तरुपल्लव में बाबा छिप गए। रावण आता है और जानकीजी को प्रलोभन देता है, 'सीता, एक बार मुझे कृपादृष्टि दो तो मंदोदरी आदि रानियां तुम्हारी गुलाम बन जाएगी।' तृण की ओट लेकर परमस्नेही राम को याद करके जानकी रावण को जवाब देती है। एक महीने की मुदत देकर रावण चला गया। राक्षसियां सीता को त्रास देने लगी। जानकीजी विरह के ताप में तप कर रही थी। उसी समय माँ को दु:खी देखकर सोचकर मुद्रिका डाली। चकित चित्त से मुद्रिका उठाई, ये कौन लाया? हनुमानजी माँ के सामने प्रगट हुए। हनुमानजी महाराज ने अपना परिचय दिया, माँ, मैं रामदूत हूं। ये मुद्रिका मैं लाया हूं। जानकीजी को हनुमानजी ने संदेश दिया। जानकीजी को बहुत तसल्ली हुई। हनुमानजी को अजर, अमर, गुणनिधि का वरदान देते हैं और कहा, राम तुझ पर बहुत कृपा करेंगे। हनुमानजी कृतकृत्य हो गए।

हनुमानजी को भूख लगी। सीताजी ने फल खाने का आदेश दिया। हनुमानजी ने फल खाए, तरु तोड़े, अक्षयकुमार को मार दिया। इन्द्रजित ब्रह्मबाण मारता है और हनुमानजी को बांध देता है। हनुमानजी को लगा कि ब्रह्मसर नहीं कबूल करूं तो उसकी महिमा मिट जाएगी। हनुमानजी को दरबार में लाए गए। वार्तालाप हुआ। आख़िर

में रावण मृत्युदंड का एलान करता है। विभीषण ने कहा, नीति मना करती है, दूत को मृत्युदंड नहीं दिया जा सकता। मंत्रीओं से रावण ने सलाह ली तो कहा, रावण को पूंछ पर ममता होती है, उसकी पूंछ जला दी जाए। पूंछ जलाई गई और हनुमानजी ने पूरी लंका को उलट-पुलट जलाई! समंदर में कूद पड़े। फिर माँ के सामने खड़े रहे। माँ, जैसे रघुनाथ ने मुद्रिका दी, वैसे आप भी कुछ दीजिए। सीताजी चूड़ामणि देती है।

हनुमानजी सागर नांघकर वापस आए। सुग्रीव समेत राम के पास गए। जामवंत ने हनुमंतकथा का गायन किया। प्रभु हनुमानजी को भेंटकर कहने लगे, मैं तुम्हारे ऋण से कभी मुक्त नहीं हो पाऊंगा। अभियान चला। समुद्रतट पर डेरा डाला। विभीषण रावण से निष्काषित होकर प्रभु की शरण में आया। तीन दिन भगवान समुद्रतट पर अनशन करने बैठे। तीन दिन के बाद प्रभु बनावटी कोप करते हैं और जैसे प्रभु ने बाण चलाया, समुद्र में ज्वाला उठने लगी। समुद्र शरण में आया। सेतुबंध का प्रस्ताव रखा। प्रभु ने प्रसन्नता व्यक्त की। गोस्वामीजी 'सुन्दरकांड' पूरा करते हैं।

'लंकाकांड' के आरंभ में सेतुबंध का निर्माण हुआ। परम धरणी समझकर प्रभु ने रामेश्वर भगवान की स्थापना का निर्णय किया। ऋषि-मुनि बुलाए गये। 'लिंग थापि बिधिवत करि पूजा।' जयजयकार हुआ। प्रस्थान हुआ। प्रभु की सेना लंका में आई। एक पर्वतशिखर पर प्रभु का डेरा। सायंकाल को रावण अखाडे में आया। मनोरंजन प्राप्त कर रहा है तब प्रभु ने अपना आगमन सूचित करने के लिए महारस भंग किया। दूसरे दिन सुबह अंगद राजदूत के रूप में संधि का प्रस्ताव लेकर जाता है। संधि हुई नहीं। युद्ध अनिवार्य हुआ। धमासाण युद्ध होता है। आख़िर में इकतीस बाण से प्रभु ने रावण को निर्वाण दिया है। मंदोदरी आई। एक ओर दु:ख और एक ओर अपने तथा रावण के भाग्य की सराहना करती है। रावण की क्रिया हुई। विभीषण का राजतिलक हुआ। हनुमानजी को भेजकर जानकी को ख़बर दी। सीताजी का मूल देह अग्नि से निकला। देवराज इन्द्रादि देवताओं ने स्तुति की। ब्रह्मा ने स्तुति की। फिर भगवान ने कहा, पुष्पक तैयार करो। अब विलंब करना ठीक नहीं। पुष्पक तैयार होता है। अपने मित्रगणों, सीया और लखनजी सहित प्रभु उत्तर दिशा की ओर जाते हैं। रणांगण का दर्शन कराया। रामेश्वर भगवान के दर्शन करवाए। हनुमानजी को अवध भेज दिया और प्रभु का विमान शृंगबेरपुर में गंगातट पर ऊतरता है। ये निषाद, वंचित लोग, गरीब लोग सब दौड़ आए। सब धन्य-धन्य हो गए। यहां 'लंकाकांड' को विराम दिया।

'उत्तरकांड' के आरंभ में भरत की विह्वल दशा का वर्णन। हनुमानजी ने खबर दी, प्रभु सकुशल आ रहे हैं। पूरे नगर में बात फैल गई। प्रभु का विमान ऊतरा और प्रभु ने जन्मभूमि को प्रणाम किया। सबको प्रभु ने व्यक्तिगत साक्षात्कार दिया। गुरु को प्रणाम किया। फिर प्रभु ने पहले कैकेई माँ के भवन में जाकर प्रणाम किया। माँ का संकोच दूर किया। सुमित्रा को प्रणाम करते हैं। कौशल्या के पास आए। वशिष्ठजी ने ब्राह्मणों की राय ली कि आज ही तिलक कर दे। बोले, हां बाबा, कल का भरोसा न करे। दिव्य वस्त्रालंकार पहने गए। दिव्य सिंघासन मांगा गया। राम को गादी पर बैठने का आदेश हुआ। पृथ्वी को, सूर्य को, दिशाओं को, ब्राह्मणों को, ऋषि-मुनियों को, माताओं को, गुरुदेव को, प्रजाजन को प्रणाम करके सीता सह ठाकुर राज्य सिंहासन पर बिराजित हुए और तीनों भवनों में जयजयकार के साथ रामराज्य का तिलक हुआ।

ब्रह्मा सर्जक है, वैसे सत्य सबका सर्जक है। सत्य ही एक ऐसी गुहा है जिसमें से सब निकलता है। विष्णु प्रेम है और प्रेम पालन करता है। आप बिलकुल सामान्य धरा से भी देखो तो नफ़रत कभी किसीका पालन नहीं कर पाएगी। संसार में जब भी पालन होगा, परितोष होगा, परिपालन होगा तो ये प्रेम ही कर सकता है। हम सबको परस्पर का प्रेम ही पालता है। सत्य हम सबमें कितनी मात्रा में है? यद्यपि हम सब सत्य से ही प्रगट हुए हैं, लेकिन वो हममें कितना है ये तो अल्लाह जाने! लेकिन हम परिपालित है, परस्पर भाव से रहते हैं ये प्रेम का प्रभाव है।

प्रथम तिलक बसिष्ट मुनि कीन्हा।
पुनि सब बिप्रन्ह आयसु दीन्हा।।

माताओं ने आरती ऊतारी। ब्रह्मभवन से चार वेद रूप धारण करके अयोध्या के दरबार में स्तुति करने आए। स्तुति करके चारों वेद ब्रह्मभवन लौट गए। उसी समय कैलासपति महादेव दरबार में आकर स्तुति करते हैं। भगवान शिव भक्ति और सदा सत्संग की भिक्षा मांगकर हर्षित होकर कैलास गए। छः मास बीत गए। प्रभु ने मित्रों को बिदा दी। पुन्यपुंज पवनकुमार रह गए। गोस्वामीजी रामराज्य का सुंदर वर्णन करते हैं। एक अर्थ में प्रभु की लौकिक लीला भी चल रही है। प्रभु के घर दो पुत्रों का जन्म हुआ। अयोध्या के रघुवंश की वेल का स्मरण करते हुए रामकथा को रोक दिया गया।

कागभुशुंडि के चरित्र की कथा। गरुड-भुशुंडि का संवाद और आखिर में अपने सद्गुरु के चरण में सात प्रश्न गरुड ने पूछे और सात प्रश्नों का उत्तर दिया। कथा को विराम और गरुड वैकुंठ गए। यहां याज्ञवल्क्य भरद्वाजजी को कथा पूरी करके कहते हैं या नहीं ये स्पष्ट नहीं। महादेव भवानी को कहते हैं, देवी, मैंने आपको कथा सुनाई। पार्वती कृतकृत्य भाव अनुभव कर रही है। आपकी कृपा से मेरे शोक-मोह नष्ट हो गए, मैं धन्य हो गई। और चौथे घाट पर बैठे कलिपावनावतार गोस्वामीजी अपने मन को और साधु-संतों को कथा सुनाकर विराम देते हुए हमें संदेश देते हैं -

एहिं कलिकाल न साधन दूजा।
जोग जग्य जप तप ब्रत पूजा।।
रामहि सुमिरिअ गाइअ रामहि।
संतत सुनिअ रामगुन ग्रामहि।।

कलियुग में हम जैसों के लिए कोई साधन नहीं। न योग, न जप, तप, व्रत नहीं। तुलसी कहते हैं, तीन ही काम करो। राम को स्मरो। जिसका अर्थ तलगाजरडा ने किया, राम सत्य है माने सत्य राम को स्मरो। गाओ; तलगाजरडा अर्थ करता है गाना ये प्रेम है। और निरंतर रामगुणगान सुनो ये करुणा है। ये तीन ही सूत्र 'मानस' का निचोड़।

तो गोस्वामीजी ने भी प्रभु की कृपा से परमविश्राम की प्राप्ति की उद्घोषणा करते हुए रामकथा को विराम दिया। चारों परम आचार्य अपनी-अपनी जगह अपने वक्तव्य को विराम देते हैं। और इन परम आचार्यों की कृपाछाया में बैठकर हम और आप संवाद कर रहे थे। ब्रह्मदेश में भगवान की कृपा से कथा का आयोजन हुआ और नववें दिन कथा को विराम दिया जा रहा है, तो क्या कहूं? पूरा आयोजन बहुत सात्त्विक और आनंदपूर्ण रहा। मैं मेरे हृदय की प्रसन्नता व्यक्त करता हूं। बहुत सुचारु रूप से, भगवद्कृपा से ही ये भगवद्कथा प्रसन्नतामय वातावरण में विराम की ओर जा रही है तब ब्रह्मदेश, जिसको ब्रह्मा भी कहा इसलिए गुरुकृपा से संकेत हुआ कि ब्रह्माजी का ही दर्शन यहां किया जाए। जहां भगवान बुद्ध के अनुयायी आए। इतने बड़े बौद्धधर्म में लोगों की आस्था है। तो ऐसे स्थान में कथा संपन्न होने को है तब पुनः एक बार प्रसन्नता व्यक्त करता हूं। जितना बोला हूं उनमें से स्वभाव के अनुसार चुन लेना। हर एक कथा में से एक-एक तिनका लोगे तो एक आशियाना बन जाएगा; वो ही हमारा वैकुंठ होगा; वो ही हमारा स्वर्ग होगा; वो ही हमारा निजधान-असली घराना होगा। इसी रूप में ये तलगाजरडी कथा विराम की ओर जा रही है तब मुझे कुछ नहीं कहना है। जो सूत्र स्वभाव में आए वो ले लो।

सभी युवानों ने बहुत भाव से अपना दायित्व निभाया। बर्मा में रहनेवाले हमारे भाई-बहन तथा बर्मा के भाई-बहन ने भी शालीनता और विनम्रता से कथा का सन्मान किया है, उसकी गहरी छाप लेकर आपसे बिदा हो रहा हूं। पूरे देश को, यहां की सरकार, जनता सबके लिए हनुमानजी के चरण में मेरी प्रार्थना कि परमात्मा आपको प्रसन्नता बक्षे और आप संपन्न रहे। खास कर युवा भाई-बहन इसमें लगे। न किसीको मजहब-संप्रदाय का भेद रहा। सब इस प्रेमयज्ञ में संमिलित हो गए ये प्रभुकृपा है। रामकथा पूरी होती है तो एक बहुत बड़ा सुक्रित बना होता है। नव दिवसीय रामकथा 'मानस-ब्रह्मा' हम सब मिलकर के पितामह ब्रह्मा के चरणों में समर्पित करते हैं। कथा ब्रह्मा के चरणों में और गुरुर्ब्रह्मा का अर्थ अपने-अपने बुद्धपुरुष भी कर लिया जाए तो सबके चरणों में कथा समर्पित करके मैं मेरी वाणी को विराम दूं इससे पूर्व; रामनवमी आ रही है। अनुकूल हो तो पूरे संसार में नवरात्रि के दिनों में 'मानस' का पाठ हो, जितना हो सके। 'भुशुंडि रामायण' का पाठ हो तो भी चलेगा। रामनवमी की आप सबको एडवान्स में बधाई।

मानस-मुशायरा

तेरी मुहब्बत से लेकर तेरी अलविदा कहने तक।
मैंने सिर्फ़ तुझे चाहा है, तुझसे कुछ नहीं चाहा।
– कतिल सफ़ाई

मेरे मुकद्दर में है फूल खिलाना।
मेरी किस्मत में खुश्बू नहीं है।
– गुलशनसाहब

अगर हम कहें ओर वो मुस्कुरा दे।
हम उनके लिए ज़िंदगानी लूटा दे।
इश्क का ज़हर पी लिया फ़ाकिर
अब मसीहा भी हमें क्या दवा दे?
– सुदर्शन फ़ाकिर

वो जहां भी रहेगा रोशनी लुटायेगा।
चरागों को अपना कोई मकां नहीं होता।
– वसीम बरेलवी

ये सच है कि तुने मुझे चाहा भी बहुत है।
लेकिन मेरी आंखों को रुलाया भी बहुत है।
– दीक्षित दनकौरी

पहले नज़र मिलाते हैं फिर मुस्कुराते हैं,
ये एक ही बार में दो-दो प्रहार करते हैं।
– अमितोष शर्मा

किसी खुदा की दखल हो ज़िंदगी के लिए।
खयाले यार ही काफ़ी है मेरी बंदगी के लिए।
ये वो अदा है जो बाज़ार में नहीं मिलती।
यहां तो लोग तरसते हैं तेरी सादगी के लिए।

हनुमानजी वैज्ञानिक है, विज्ञान विशारद है

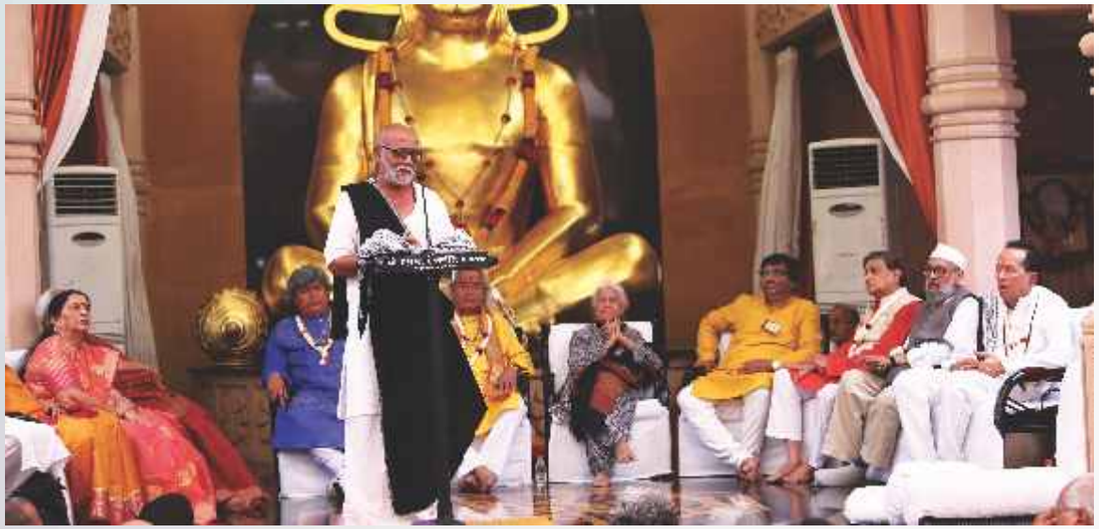

हनुमान-जयंती के अवसर पर मोरारिबापू का विचारप्रेरक वक्तव्य

बाप! सब से पहले जिस शाश्वत चेतना का जन्म महोत्सव पूरे राष्ट्र में और संसार में भी मनाया जा रहा है, ऐसे हनुमानजी के चरणों में प्रणाम करते हुए; तलगाजरडा में बार-बार हरीशभाई ने कहा कि चालीस-इकतालीस साल से ये कार्यक्रम होता रहा और फिर उसमें जोड़ा 'अस्मितापर्व', उसको भी इक्कीस साल हो गए। इस बार के 'अस्मितापर्व' में श्रोता के रूप में हम सब ने लाभ लिया। बड़ी प्रसन्नता के साथ ये तीन दिवसीय कार्यक्रम भी कल शाम को संपन्न हुआ। और तीन दिनों से चला संगीत महोत्सव भी कल रात्रि को संपन्न हुआ। आज के पावन दिन पर आप सभी को, पूरे संसार को हनुमान जन्म महोत्सव की बधाई देते हुए आप सब को मेरा प्रणाम। जय सियाराम।

मंच पर विराजित हमारे देश की परम कला और परम विद्या के सब उपासक, साधक, एक अर्थ में तपस्वी। यह कहा जाता है कि बदरीनाथ की पूजा करनी हो तो हमें वहीं जाना चाहिए। रामेश्वर भगवान का अभिषेक करना है तो हमें रामेश्वर जाना पड़े। गिरनार की परिकम्मा करनी है तो हमें गिरनार जाना पड़े। जहां कोई परम तत्त्व विराजित है, हम वहीं जाते हैं। लेकिन ये हमारा सौभाग्य है कि कितनी विधाओं के, एक अर्थ में देवता ही हैं, हमारा अर्घ्य, हमारी पूजा, हमारी वंदना कुबूल करने के लिए ये हमारे तलगाजरडा में आए हैं, ये हमारा सद्भाग्य है। हम आपको क्या दें? हम तो केवल प्रणाम करने के लिए यहां हाज़िर हैं। आप सभी ने हमारी वंदना कुबूल की इसलिए मैं फिर एक बार आप सभी को नत मस्तक प्रणाम करता हूं। हनुमान जयंती के दिन कुछ न कुछ बोलने को मन भी करता है। मैं ऐसा न कहूं कि क्या बोलूं? क्या बोलूं? वीणाधारक हनुमानजी के चरणों में, मेरा हनुमान गदाधारक मिटा चुका है और वीणाधारक है। और हनुमानजी के हाथ में वीणा का जो रूप दिया गया है वो भी आज किसी भी वीणावादक के लिए उसका बजाना जरा हमने कठिन बना दिया है! फिर भी हमारी बहनजी आई और हनुमानजी के चरणों में आपने वीणांजलि प्रस्तुत की। हम आभारी हैं। वीणा वेदवाद्य है। वीणा सनातन वाद्य है। इतिहास खोजकर बता सकते हैं कि हमारे यहां सितार कब आया, कहां से आया? वायलिन कब आया, कहां से आया? सारंगी कब आई, कहां से आई? शहनाई कब आई, कहां से आई? जो-जो हो। लेकिन वीणा एक वाद्य ऐसा है साहब, बड़ा सनातन है। और हमारी सनातन परंपरा में ये तीन वीणा मशहूर है। एक का सीधा संबंध कैलास के साथ है। वो रुद्रवीणा। डायरेक्ट संबंध कैलास से है उसका।

एक लघुकथा सुनाता हूं। एक बार महादेव को मौज़ आई। शिवरात्रि का दिन था और मेरे कैलासपति ने अपनी मस्ती से रुद्रवीणा उठाई। लेकिन जैसे बजाने लगे तो गणेशजी आये कि पापा, बिना पखावज ठीक नहीं लग रहा है। और गणेश ने पखावज उठाया। संगत दी और कार्तिकेय ने कहा कि मैं तो नृत्य नहीं कर सकूंगा लेकिन मेरा मयूर तैयार है। और मयूर ने नृत्य शुरू किया। जैसे ही मयूर ने नृत्य शुरू किया उमड़-उमड़कर बादल आने लगे। और इतनी वर्षा हुई, सरोवर हो गया कैलास! लेकिन एक दुर्घटना घटी साहब! और वो दुर्घटना ये थी कि महादेव के भाल में जो वक्र चंद्र था वो गिर गया। इतनी वर्षा हुई कि चांद नीचे आ गया। पार्वती आई कि महाराज, ये क्या कर दिया आपने? ये चांद गिर गया! और थोड़ा बर्फ़ीला हो गया, थोड़ा मिट्टी लग गई। चांद को पार्वती ने उठाया और भगवान शिव के भाल में चांद को फिर से रखने गई तो थोड़ा रजरंजित था चांद। और कहते हैं, पूर्ण चंद्रमाँ में तो कलंक है लेकिन शिव के भाल में जो चंद्र है उसमें दाग नहीं दिखता है। पहले उसमें भी थे। याद रखना, इस लघुकथा के बाद वो दाग गया है। जितना भाग वक्र है उसके मुताबिक, उसमें थोड़ा काला सा वो था लेकिन पार्वती ने कहा कि महाराज, उसको अब शुद्ध कर दो। महादेव ने पूछा कि कैसे करूं? पूरा समारोह बंद हो गया था। तब भवानी ने कहा कि मैं दुर्गा राग गाऊं और उसी समय आपकी आंख से आंसू निकले, इसमें तुम चांद को धोकर फिर अपने भाल में रखो। ये छोटी-सी लघुकथा ही। बड़ी पुरानी है। मैं पहले कहा करता था। मुझे स्मरण में आ रही है ये पुरानी कथाएं। तो रुद्रवीणा कैलास से संबंधित है। दूसरी वीणा है ब्रह्मलोक से संबंधित वो सरस्वती वीणा है। जब सरस्वती वहां से वीणा लेकर निकलती है। तुलसी कहते हैं-

भगति हेतु बिधि भवन बिहाई।
सुमिरत सारद आवति धाई।।

तीसरी वीणा है नारद वीणा, जो वैकुंठ से संबंधित है। हमारी त्रैलोक शिवलोक, विष्णुलोक और ब्रह्मलोक, तीनों से वीणा संबंधित है। इनमें से दो भाई युगों की परंपरा में वाल्मीकि के आश्रम में तैयार हुए 'रामचरितमानस' गाने के लिए और भगवान राम के दरबार में उसके लव और कुश ने जब 'रामायण' का गान किया तब भी वीणा का ही वादन हुआ था। और आज के काल में मुझे कहने दो कि कई लोगों की वाणी ही वीणा है। उपकरण की जरूरत नहीं है। और मैं गिना सकता हूं, कई लोगों का गद्य, कई लोगों का पद्य, कई लोगों का गान, कई लोगों का गुनगुनाना, वीणा से कम नहीं है। नाम भी दे सकता हूं, थोड़ा लिस्ट भी दे सकता हूं, जो मैंने समझा है। लेकिन मैं उसमें न जाऊं क्योंकि कोई रह जाए तो अपराध मुझे लगता है। कई लोगों की वाणी ही वीणा होती है। तो ये रुद्रवीणा हनुमानजी धारण करके यहां बैठे हैं। अब गदाधारक नहीं है, वीणाधारक हनुमानजी है। उसके जन्म महोत्सव के प्रसंग पर मैं मेरी प्रसन्नता व्यक्त करता हूं।

हनुमानजी के बारे में कुछ मिनटों में कुछ कहूं, मुझे अच्छा नहीं लगेगा। हनुमानजी वैज्ञानिक है ये मत भूलो। ये रूप भले बंदर का हो लेकिन सुंदर वैज्ञानिक है। विज्ञान विशारद है हनुमानजी, हम सब जानते हैं। और तलगाजरडा को कोई पूछे कि हनुमानजी वैज्ञानिक है तो आप गिना सकते हैं कि क्या-क्या विज्ञान था हनुमान के पास? कौन-सा विज्ञान था? जैसे तुलसी कहते हैं उसी रूप में तो 'सकल गुणनिधानं।' क्या नहीं है? अभी-अभी हरीशभाई ने कहा कि हनुमानजी शंकर के अवतार माने गए; रुद्र के अवतार हैं। और शंकर मूल में 'सकल कला गुणधाम।' तो हनुमानजी वैज्ञानिक हैं। हमारे देश में हनुमंत आराधना, हनुमंत पूजा, हनुमंत साधना, केवल, केवल, केवल धार्मिक रूप में प्रस्थापित नहीं हुई है। उसके पीछे कई कारण हैं। हमने केवल एक धार्मिक कारण पकड़करके पूजा अर्चना की है, करनी चाहिए। तो धार्मिक रीत में तो हनुमंततत्त्व केन्द्र में है ही लेकिन इक्कीसवीं सदी में हनुमानजी का अभ्यास, हनुमानजी का दर्शन एक वैज्ञानिक रूप में भी होना चाहिए। और मुझे लगता है, हनुमानजी का ये वैज्ञानिक रूप आज की पीढ़ी के लिए बहुत उपयोगी है। हमारी पुरानी पीढ़ी तो तेल चढ़ाकर, सिंदूर लगाकर, उड़द के दाने लगाकर, कुछ धागे लगाकर हनुमानजी को गंदे किये जा रहे हैं! जिसमें कोई मल नहीं हैं उसकी मली ली जाती है। धन हो वो धनी, ज्ञान हो वो ज्ञानी, और जिसमें मल हो वो मली। लेकिन हमारे देहातों में आज भी हनुमानजी की मली लो, ताबीज़ में बांध दो। ठीक है, ये श्रद्धा है। जलन मातरीसाहब को इस स्थान से अंजलि दे दूं कि-

श्रद्धा नो हो विषय तो पुरावानी शी जरूर?
कुर्रानमां तो क्यांय पयंबरनी सही नथी।

तो श्रद्धा की बात ओर है। परंतु बाप! हनुमानजी विज्ञानधाम हैं। परमात्मा भी विज्ञानधाम है। परमात्मा का नाम भी विज्ञानधाम हैं। 'विज्ञानधामा विभौ', ये मेरे शब्द नहीं है। विद्वानों को चाहिए, विशेष रूप में जिसने विद्या अर्जित की है उसको चाहिए कि हनुमानजी के इस रूप को भी समाज के सामने प्रस्तुत करें। हनुमंततत्त्व वैज्ञानिक है। मैं पांच ही विज्ञान की चर्चा करके अपनी बात को पूरी करूंगा। ये मेरी जिम्मेवारी से कह रहा हूं। शास्त्र में बाद में खोजना। मिल जाए तो मुझे बल मिलेगा। न मिले तो मुझे कोई चिंता नहीं है। पांच विज्ञान तलगाजरडी आंखों ने हनुमान में देखा है। हनुमानजी के पास विज्ञान है श्वास का। श्वास का विज्ञान मानी योग विज्ञान। और मुझे लगता है, कई योगी हुए हमारे

देश में, होते रहेंगे लेकिन हनुमानजी ने जैसे पतंजलि के योगदर्शन को अपने जीवन में पूरा का पूरा जिस रूप में उतारा है वो शायद कहीं मिले! श्वास का विज्ञान हनुमानजी के पास है। मैं निमंत्रित करूं आपको कि जिसको योग साधना करनी है, श्वास की प्रक्रिया के साथ जुड़कर योग की आराधना करनी है तो हनुमंत आश्रय करें। कोई भी योगगुरु से ये अमूर्त योगगुरु बहुत सफ़ल होगा। अब 'योग' शब्द आया है तब मैं ये भी कहना चाहूंगा कि ये एक प्रवचन का विषय है। घंटे-डेढ़ घंटे का विषय है। थोड़ा-थोड़ा विद्वानों के साथ बैठकर मैं भी सीख गया हूं! ये थोड़ी एकेडेमिक बात है कि कुछ खास लोग बैठे हो उसके साथ ये चर्चा की जाए।

आपको नहीं लगता साहब कि भगवान योगेश्वर ने अर्जुन के सामने जो 'गीता' प्रस्तुत की, दोहरा रहा हूं कई बार कहा है, सब से ज्यादा 'भगवद्गीता' का श्रवण जिसने किया है एक भी प्रश्न पूछे बिना, बिलकुल स्वीकार भाव से कि एक परम बुद्धपुरुष बोल रहा है, 'कृष्णं वंदे जगद्गुरुम्।' और उसका एक-एक शब्द अपने में उतारा हो तो मुझे लगता है श्री हनुमानजी थे। और कभी चर्चा करूंगा 'गीता' के अठारह अध्याय 'योग' हैं। 'विषादयोग' से लेकर 'मोक्षसंन्यासयोग' तक ये अठारह योग जो 'भगवद्गीता' का है, ये किसी में यदि नखशिख परिपूर्ण प्रतीत होते हैं तो मेरे हनुमानजी में होते हैं। मैं गिनकर एक 'मानस' के छात्र के रूप में, एक गायक के रूप में, 'मानस'मैया के एक बच्चे के रूप में आपको कह सकता हूं कि हनुमानजी में 'विषादयोग' कब आया, हनुमानजी में 'कर्मयोग' कब आया, हनुमानजी में 'ज्ञानयोग' कब आया, हनुमानजी में 'विश्वरूपदर्शनयोग' कब आया, हनुमानजी में 'विभूतियोग', 'पुरुषोत्तमयोग', जो-जो भी हो, अठारह-अठारह ये जो 'गीता' के प्रकरण हैं, श्री हनुमानजी में नखशिख तलगाजरडा को प्रतीत होता है। श्वास का विज्ञान हनुमान के पास था। जिसको श्वास के द्वारा साधना करनी है उसको हनुमानजी का आश्रय करना बहुत आवश्यक है। वड़ोदरा के पास एक कायावरोहण स्थान है। नकुलेश के उपासक कृपालवानंदजी महाराज जीवनपर्यंत करीब मौन रहे हैं ये महापुरुष। मुझे दो-तीन बार आपके दर्शन का अवसर मिला था। वो शुरूआत की मेरी वड़ोदरा की कथाएं होती थी; एक-दो जगह ब्रह्मलीन कृपालवानंदजी महाराज उसका दीप प्रज्वलित करने आते थे, मौन रहते थे। मुझे तो कुछ पूछना होता नहीं क्योंकि पूछना आता नहीं! बस, बैठे देखते रहे। एक दिन उसने अचानक दो बात कही कि बापू, आपसे मैं बहुत राजी हूं। मैंने कहा, भगवन्, आपकी कृपा है। तो लिखकर देते थे कि एक तो इतना मौन और इतना बोल, बोल, बोल के इतनी साधना के बाद अब मेरी समझ में आया है कि रामनाम से श्रेष्ठ कुछ नहीं है। और दूसरी हनुमानजी के प्रति आपकी इतनी आस्था है। मैं तो एक योगी हूं और योगी के रूप में आपको कहना चाहता हूं कि जिसको भी योग में सफ़ल होना है वो हनुमंत आश्रय करें। आप करके देखिए।

मैं कभी योग-बोग नहीं करता। आप मुझे कभी वोक करते नहीं देखेंगे। इसका मतलब ये नहीं कि आप वोक न करें। मैं आदर्श न बनूं प्लीज़, किसी भी बात का। मैं खाली टोक करता हूं। वो भी कम करता हूं; कथा में ज्यादा करता हूं। बाकी चुप! योग मुझे रास नहीं आता। बड़ा विज्ञान है लेकिन जिसको योग विज्ञान में सफ़ल होना है मेरी प्रार्थना है, हनुमंत तत्त्व के पास बैठें। विश्वास विज्ञान; मैं तो विश्वास का आदमी हूं। लोग विश्वास को लाख गालियां दें, दे! श्रद्धा भी मुझमें इतनी है कि नहीं, मुझे ख़बर नहीं! कभी-कभी आप मुझे ठीस से देखोगे तो इतना श्रद्धालु मैं आपकी नज़रों में दिखाई भी नहीं दूंगा, हो सकता है। लेकिन एक बात कहूं, मैं विश्वास का आदमी हूं और लोग विश्वास को कितनी भी गालियां दें, विश्वास को कुछ भी कहें! मेरी समझ में उतरा है हनुमानजी का विश्वास का विज्ञान था। विश्वास एक विज्ञान है कभी करके तो देखो। बिना प्रयोग किये ही इति हो जाएगी। केवल विश्वास। अब मैं समझता हूं कि ये विश्वास की बात आती है तो ये अंध विश्वास, ये पागलपन, ये अकारण भावुकता, ख़बर नहीं क्या-क्या बातें होती है! विश्वास के विज्ञान की कोई किताब नहीं है कि आप पढ़ लो। विश्वास विज्ञान पाने के लिए परमतत्त्व हनुमानजी के पास बैठना होगा। वो भी रात्रि के सन्नाटे में। विश्वास बहुधा मौन होता है। श्रद्धा तो त्रिगुणी होती है, थोड़ी मुखर है। श्रद्धा सतोगुणी है तो थोड़ी कम बोलती है। रजोगुणी है तो ख़बर नहीं, क्या-क्या नखरें दिखाती है! और तमोगुणी है तो लंकेश के मुख से शिव तांडव दे देती है। ये तमोगुणी श्रद्धा थी साहब! ये सतोगुणी श्रद्धा नहीं थी। और गुणातीत तो थी ही नहीं। गुणातीत की तो याचना करता है लंकेश कि कब ऐसा मौका मिले कि मैं कोई गुफा में बैठकर 'शिव-शिव' का स्मरण करूं? और शिव का स्मरण विश्वास का स्मरण है। तो विश्वास विज्ञान हनुमानजी हैं।

मुझे कई लोग पूछते हैं कि बापू, भारत का और दुनिया का भविष्य कैसा लगता है? तो मैं कहता हूं कि मुझे बहुत अच्छा लगता है। अब आप मेरे से प्रमाण मांगो तो मैं अनपढ़ आदमी कहां से लाऊं? और पढ़े-लिखे ने भी कोई प्रमाण नहीं दिए हैं। कितने प्रमाण हैं! सब 'नेति' करके रुक गए हैं। तो मैं कहां से प्रमाण दूं? मेरा विश्वास बोल रहा है, विश्व का भला होगा और मेरी इज्जत हनुमानजी रखे! और कोई भी चीज़ में विश्वास न रखो तो मैं प्रार्थना करूं थोड़ा हटके, तुलसी कहते हैं 'विनयपत्रिका' में-

बिस्वास एक राम-नामको।

बाप! मैं कहना चाहूंगा राम पर विश्वास न हो तो भी चिंता नहीं, अयोध्या पर विश्वास न हो तो भी चिंता नहीं, सरजू पर न हो तो भी चिंता नहीं, 'मानस' में न हो तो भी

चिंता नहीं, मोरारिबापू में न हो तो भी चिंता नहीं, रामनाम में रखना। गांधी ने कहा था कि मेरे अंतिम समय में मेरे मुख से यदि रामनाम निकले तो ही समझना कि ये आदमी सत्य का उपासक था। आख़िरी समय में मेरे मुख से रामनाम न निकले तो मेरे लिए लिख देना कि ये आदमी पाखंड़ी था। अब मैं समझ रहा हूं विश्वास का प्रमाण नहीं दिया जाता है। श्रद्धा का प्रमाण होता है, श्रद्धा के फल होते हैं, यस। श्रद्धा नाम की गाय दुहो ना, तो तुम घी तक पहुंच जाते हो। दुहो, उसका दहीं बनाओ, फिर मथो, फिर ताओ, फिर एक दीपक में लो, बाती बनाओ और उजाले तक पहुंच जाते हैं। और उजाला होने के बाद भी खतरे कम हैं?

आग तो अपने ही लगाते हैं,

गैर तो सिर्फ़ हवा देते हैं।

कल भी हमारे फ़िरदोश ने शायद संचालन में ये बात कही थी। आदमी प्रकाश तक, आत्मदीप तक पहुंच जाता है श्रद्धा के द्वारा। विश्वास में कुछ नहीं चाहिए। विश्वास एक विश्वास। मुझे लगता है, मेरे हनुमानजी में विश्वास का विज्ञान है। बनारस में तो आज भी कहते हैं, मेरी बुद्धि ज्यादा कुबूल न करें, मैं इतना श्रद्धावाला आदमी नहीं हूं कि आज भी गंगा के एक घाट से रामलीला के जब प्रसंग मनाते हैं तब हनुमानजी कूदते हैं! तो आज भी ऐसी चमत्कारिक घटना; हो सकता है। लेकिन मुझे इन बातों से कोई लेना-देना नहीं है। विश्वास के कारण तलगाजरडु बहुत कूदा! विश्वास विज्ञान हनुमानजी में हैं। लंका में हनुमानजी न जलें और पूरी लंका उलट-पुलट जल जाए। कई लोग कहते हैं, पूरी लंका जल गई तो ऐसी लंका विभीषण को देने में राम की बड़ाई क्या है? लंका नहीं जली थी, लंकावृत्ति जल रही थी। लंका की प्रवृत्ति जली, लंका की वृत्ति जली। सोना कभी भस्म नहीं होता, ओर निखरता है। एक विश्वास के आधार पर मुझे लगता है, श्री हनुमानजी में विश्वास का विज्ञान है।

भवानीशंङ्करौ वन्दे श्रद्धाविश्वासरूपिणौ।

तीसरा विज्ञान हनुमानजी में समास का। आज का विज्ञान ऐसा कह रहा है। मैं पढ़ते हुए युवकों से भी सुन लेता हूं। कहीं अखबारों में पढ़ लेता हूं, कोई ऐसी किताब मुझे मिल जाए। मैं ज्यादा पढ़ता नहीं लेकिन फिर भी पढ़ लेता हूं। तो आज का विज्ञान दो बात पर अटका है। कोई कहता है कि ये ब्रह्मांड का विस्तार हो रहा है। मैंने नगीनबापा से इस पर एक बार चर्चा की कि आप इस बात से संमत हैं? कि हां बापू! ब्रह्मांड विस्तृत हो रहा है। और आज की पीढ़ी जो नयी टेकनोलोजी, नये विज्ञान के छात्र हैं, सब जानते हैं कि सब विकसित हो रहा है, व्यास हो रहा है। ये विस्तृत होना एक विज्ञान है। और कोई कहते हैं, एकल-दोकल कहते हैं कि पूरा ब्रह्मांड सिकुड़ता जा रहा है। मानो समास हो रहा है। ये समास और व्यास का विज्ञान यदि किसी में है तो मेरी समझ में हनुमानजी में हैं। प्रमाण-

जोजन भरि तेहिं बदनु पसारा।

कपि तनु कीन्ह दुगुन बिस्तारा।।

सोरह जोजन मुख तेहिं ठयऊ।

तुरत पवनसुत बत्तिस भयऊ।।

जस जस सुरसा बदनु बढ़ावा।

तासु दून कपि रूप देखावा।।

ये विश्वास विस्तृत विज्ञान है। आप अपना मुंह फैलाओ। किसी का मुंह बंद करने की चेष्टा क्यों करते हो? बोलने दो। तुम अपनी लीटी बड़ी करो। हनुमानजी अपना विस्तार करते हैं। और एक समय ये आया बाप!

सत जोजन तेहिं आनन कीन्हा।

अति लघु रूप पवनसुत लीन्हा।।

ऐसी कथा है रस भरी कि समंदर का विस्तार सत जोजन था वहां। और सुरसा ने सत जोजन का मुंह फैलाया तो पूरे समंदर पर सुरसा छा गई। अब हनुमान को लगा कि केवल व्यास का विज्ञान काम नहीं आएगा। अब समास का विज्ञान चाहिए। 'अति लघु रूप पवनसुत लीन्हा।' एकदम सिकुड़ लिया आपने। ब्रह्मांड विस्तृत होता है; कोई कहता है, ब्रह्मांड सिकुड़ जाता है। सब प्रत्याहार हो रहा है। ये दोनों विज्ञान के विशारद मेरा हनुमान है।

सूक्ष्म रूप धरि सियहिं दिखावा।

बिकट रूप धरि लंक जरावा।।

बाप! युवान भाई-बहन, जीवन में दोनों विज्ञान सीखना। जहां विस्तृत होना है परोपकार के लिए, वहां खूब विस्तरो। मुझे कोई पीड़ा तो है नहीं, दया आती है। मुझे वड़ील लोग बताएं प्लीज़, कि कोई क्षेत्र है दुनिया में जो बिना स्पर्धा हो रहा है? हर क्षेत्र में स्पर्धा! साहित्यिक क्षेत्र में स्पर्धा! संगीत क्षेत्र में स्पर्धा! आर्थिक क्षेत्र में स्पर्धा! दुनिया स्पर्धा से भरी हुई है। एक आयोजन ये करे तो दूसरा उसका सामने ये करे! एक प्रोग्राम मैं करूं तो उसको तोड़ने के लिए दूसरा प्रोग्राम करें! स्पर्धा के सिवाय श्रद्धा से कितने आयोजन हो रहे हैं? और मैं विनम्रता से कहना चाहूंगा कि तलगाजरडा में जो-जो कार्यक्रम होता है वो स्पर्धा से नहीं हो रहा है। और याद रखना, श्रद्धा से भी नहीं हो रहे हैं, केवल विश्वास से हो रहा है। कौन पूरा करता है? कैसे होता है? क्या होता है?

मेरे पास एक एन.डी.टी.वी.वाला युवक आया। तीन दिन से यहां घूम रहा है। बड़े अच्छे पत्रकार है, युवान है। ख़बर नहीं, अखबार में क्या-क्या लिखेगा! जो लिखना हो वो लिखे लेकिन आंखें तो धोखा नहीं दे सकती उसकी। आंख तो देख चुकी है। गुजराती न जानते हुए भी 'अस्मितापर्व' में बैठा था और एन्जोय कर रहा था। सोचो! यहां केवल विश्वास का विज्ञान है। मुझे कई लोग कहते हैं, बापू, इतने प्रोग्राम में

आप बैठते हैं, आप बोर नहीं होते? मैंने कहा, नहीं। ये सब मुझे शबरी के बोर लगते हैं। मैं बोर नहीं होता। दुनिया में कई वड़ील लोग कहते हैं कि मैंने वेकेशन लिया है। मैंने ज़िंदगी में वेकेशन नहीं लिया है साहब! कई लोग अपने-अपने क्षेत्र से बोल रहे हैं। अच्छी बात है। खूब काम करो।

कहे कबीर कुछ उद्यम कीजै।

मेरे पास कई लोग आते हैं, बापू, आठ दिन होलिडे? मेरे सब दिन पवित्र हैं। मुझे होलिडे की क्या जरूरत है? हर एक क्षण, हर एक मोमेंट, हर लम्हा पावन है। तो बाप! केवल विश्वास। तो विस्तार का विज्ञान, व्यास का विज्ञान हनुमानजी में हैं और समास का विज्ञान भी हनुमानजी में हैं। हमारे तुलसी कहते हैं-

कबहुँक हौं यहि रहनि रहौंगो।

तुलसी रघुनाथजी को प्रार्थना करते हैं कि प्रभु, हमारी इच्छा है, मैं ऐसे रहूं; ऐसे जीऊं। तो ठाकुर ने पूछा कि कैसे रहना चाहते हो? कैसे जीना चाहते हो? तो कहते हैं-

श्रीरघुनाथ-कृपालु-कृपातें संत-सुभाव गहौंगो।

मुझसे साधु स्वभाव हो। तो बाप! श्री हनुमानजी महाराज व्यास विज्ञान के वो हैं।

कनक भूधराकार सरीरा।

समर भयंकर अतिबल बीरा।।

बच्चों, खूब विस्तरो लेकिन माँ-बाप के चरणों में लघु भी हो जाओ। अपने गुरुजनों; दीदी, मैं प्रणाम करता हूं कि अभी भी ये झुकने की कला इस क्षेत्र में है। कोई कितना भी बड़ा संगीतज्ञ क्यों न हो लेकिन गुरुजन को देखकर उसके चरण छूए बिना रह नहीं सकेगा। ये इस क्षेत्र ने बहुत काम किया है। हम थोड़े विकसित होते हैं तो फिर सिकुड़ना भूल जाते हैं, लघु होना भूल जाते हैं! तो श्री हनुमानजी हमें ये विज्ञान के दोनों पार्ट सिखाते हैं कि विकसो और जरूरत पड़े तो छोटे भी हो जाओ। तो श्वास, विश्वास, व्यास और समास का विज्ञान हनुमानजी जानते हैं। और ये व्यवहार में जरूरी है साहब! मैं बार-बार कथा में कहता हूं कि लोग साधना को जीवन से बिलग क्यों करते हैं? जीवन ही साधना है। तेरी हर पल साधना होनी चाहिए। उसको बिलग न किया जाए। साध्य छोड़ो लेकिन साधन और साधक तो कम से कम एक हो। फिर साध्य मिले, न मिले। मुझे लगता है कि व्यावहारिक जीवन के लिए भी ऐसा हम और आप तो हनुमानजी को तेल न चढ़ाओ तो हनुमानजी बुरा नहीं मानेंगे। श्रद्धा है तो चढ़ाओ। बाकी मेरा देवीपूजक समाज और विचरती जाति का समाज, इन्हीं के घर तेल दे आओ तो ये हनुमानजी को चढ़ जाता है। आप ये करो। तो ये व्यवहार सीखें।

पांचवां विज्ञान है श्री हनुमानजी में, मुझे बहुत विश्वास के साथ कहना है, वो विज्ञान है भजन विज्ञान। भजन भी एक विज्ञान है। ये माला घुमाना भी विज्ञान है। जब समझ में आये। हम कोई पागल नहीं हो गए! थोड़ी तो अक्ल है! चौथी बार मेट्रिक में पास हुआ। कुछ तो अक्ल रही होगी! और कहूंगा, चोरी नहीं की है। मेरी तरफ सद्भाव रखनेवाले कई मेरे छात्र थे उदार क्योंकि उन्होंने कहीं से चोरी की थी। वो मुझे दान देना चाहते थे। मैंने कहा, तीन बार फैल हुआ हूं, एक बार ओर! बाकी चोरी नहीं की। भजन विज्ञान है। आप भजन न करो तो कोई चिंता नहीं, भजनानंदी की उपेक्षा मत करना तुम्हारी बुद्धि के तान में। आचार्य शंकर कहते हैं-

अङ्गं गलितं पलितं मुण्डं दशनविहिनं जातं तुण्डं।

वृद्धो याति गृहीत्वा दण्डं तद्पि न मुञ्चत्याशापिण्डं।

भज गोविन्दं भज गोविन्दं...

कुछ महीने पहले अभी निवृत्त हुए हैं, हमारे बहुत आदरणीय और राष्ट्रपति पद की गरिमा बढ़ाकर चले गए प्रणव दा। उसका गुजरात में अंकलेश्वर में कार्यक्रम था होस्पिटल का उद्घाटन और अहमदभाई का एक स्नेहादर, क्योंकि जिस होस्पिटल का उद्घाटन आप करने जा रहे थे उसकी नींव मैंने डाली थी किसी कथा के कारण। तो मुझे जाना पड़ा। तो राष्ट्रपति महोदय तो नहीं बोले, तो उनकी सिक्योरिटीवाले आये और मेरी माला झोली के बारे में पूछते हैं कि इसमें क्या है? मैंने कहा कि बच्चा, इसमें भजन है। ये जलाराम की झोली है! डांग जिल्ले में मैं कथा करने गया। तो एक झौंपड़ा बनाया गया मेरे लिए। तो उसमें मैं रहता था। और अफ़वाह ऐसी उड़ा दी देहाती और आदिवासियों में कि मोरारिबापू अपनी झोली में सांप रखते हैं! आदिवासी भोले लोग! तो बोले कि चेक करना है! मैंने कहा, कर लो। राष्ट्रपति का जो प्रोटोकोल था उसमें मैंने कहा कि इस झोले में माला है। उन्होंने कहा कि माफ़ करिएगा। आप ये माला हमको दे दो और फिर राष्ट्रपतिजी के साथ जाना। अब मेरे स्वभाव में तो नहीं है। ज्यादा मैं न कहूं। मुझे रजा दे दो। मैं जा सकता हूं। मुझे बुरा नहीं लगेगा। उसने दूसरे को पूछा, दूसरे ने तीसरे को पूछा! बड़े लोगों को मेरी प्रार्थना है, सामान्य लोगों के लिए अवेलेबल रहो। अब राष्ट्रपति को तो पता ही नहीं था! अब पांच-सात मिनट हमको जहां से जाना था, मैं चला। शंकरसिंह बापू वाघेला पूछते हैं, इसमें क्या है? मैंने कहा कि माला है। और ये माला मैं इसको नहीं दे सकता। ये तो हमारा-

मारा गुरुजीना नामनी हो,

माळा छे डोकमां...

तो भजन का एक विज्ञान है। काष्ट की माला, तुलसी काष्ट की माला एक विज्ञान है, भजन विज्ञान। ये माला का जतन और उसकी आबरू वो ही रख सकता है जो जीवन में काष्ट जिह्वा बन सकता है।

भला बुरा सब का सुन लीजै।

मन लागों मेरा यार फ़कीरी में।

तो बाप! भजन एक विज्ञान है। हनुमानजी का पंचम विज्ञान और भजन जब विज्ञान कहता हूं तब मेरी तीन बात आप सुनें। भजन मानी क्या? मैं माला घुमाता रहूं ये भजन है। लेकिन इसमें ही सब भजन आ जाता है, ऐसा दावा मैं न कर सकूं। हमारे पद्मभूषण पंडितजी छन्नू महाराजजी, ज़िंदगीभर गाते रहे, ये भजन नहीं है तो क्या है? आप तबला बजाते रहे, ये भजन नहीं है तो क्या है? आप नर्तन करते रहे माँ! ये भजन नहीं है तो क्या है?

मोहे पनघट पे नंदलाल छेड़ गयो रे,

कंकरी मोहे मारी, गगरियां फ़ोर डारी।

मोरी सारी अनारी भिगोय गयो रे...

ये 'मानस-मुगल-ए-आज़म' है! बाप! भजन विज्ञान है। ये सब भजन कर रहे हैं। अपनी-अपनी कला में साधना यही तो भजन है। भजन को क्यों हम एक फ्रेम में जड़ देते हैं? भजन की तीन विधा है। सहज सिमरन। फिर माला हो, न हो; कोई भी काम में आप व्यस्त हो; ये विज्ञान है। और याद रखना साधक भाई-बहन, सहज सिमरन प्रयास से नहीं होता, किसी के प्रसाद से होता है। हर प्रयास खेद है, विश्वास नहीं है। मैं इस एन.डी.टी.वी.वाले युवक को कह रहा था, वो कह रहे थे कि बापू, इतने व्होट्सअप और ये सब, एक-एक हाथ में तीन-तीन मोबाइल है और सब इतने व्यस्त हैं! मैंने कहा, बच्चा, थक जाने दे एक बार! थक जाने दे दुनिया को! जब बच्चा भूखा हो न तब भी सो जाता है। दुनिया थकेगी, फिर थक कर सो जाएगी। थकने दो उसको। सब साधन खेद है बाप! केवल प्रसाद आदमी को सहज सुमिरन में बहाता है। नानकदेव कहते हैं-

सुमिरन कर ले मेरे मना।

तेरी बीती जाए उम्र हरि नाम बिना।

बाप! सहज सुमिरन एक विज्ञान है। सहज सुमिरन भजन विज्ञान की एक शाखा है। दूसरा, सहज स्मृति। ये प्रयास से नहीं आती। 'गीता' कहती है, सहज स्मृति गोविंद, तेरे प्रसाद से आती है। 'स्मृतिर्लब्धा', मुझे स्मृति आई, प्रयास से नहीं, तेरे प्रसाद से आई। तीसरा, सहज स्वरूपानुसंधान। आदमी अंदर गया, अंदर गया। कोबीज की हर परतें निकलने लगी, निकलने लगी। मैं कोबीज अच्छे शब्द मैं यूझ करता हूं। ये भजन विज्ञान है। थोड़ा कठिन पड़ता है। पहले दो आवश्यक है। सहज स्मृति ज्ञान है। और सहज स्वरूपानुसंधान ये योग है। ये तीन प्रकार का भजन विज्ञान मेरे हनुमानजी में हैं। सहज सुमिरन। हनुमानजी का तो बहुत प्रसिद्ध वाक्य है 'मानस' में-

कह हनुमंत बिपति प्रभु सोई।

जब तव सुमिरन भजन न होई।।

तो सहज स्मरण, सहज स्मृति, सहज स्वरूपानुसंधान मेरी दृष्टि में भजन है। और इस भजन का विज्ञान; श्री हनुमानजी इसके विशारद हैं। बाप! आज हनुमानजी के जन्म महोत्सव के पावन अवसर पर मेरी प्रसन्नता व्यक्त करनी थी और प्रसन्नता बोलकर कितनी व्यक्त की जा सकती है? शब्द की सीमा है। प्रसन्नता तो नर्तन से ही पेश की जा सकती है। बाप! बहुत अच्छा काल है; बहुत प्यारा समय है। हनुमानजी के पंच विज्ञान में हम कुछ पढ़ लें तो मुझे लगता है, जीवन विशेष आनंदप्रद होगा, उसका मुझे विश्वास है। आनंद करजो बाप!

बाखुदा अब तो मुझे कोई तमन्ना ही नहीं।

फिर भी क्या बात है कि दिल कहीं लगता ही नहीं।

कोई वासना नहीं, कोई मंज़िल नहीं, कोई लक्ष्य नहीं, कोई उद्देश्य नहीं। मैं तुलसी को पगे लागूं, कहूं कि स्वात: सुख भी उद्देश्य नहीं। ये दर्द चाहिए। पीड़ा देखिए शायर की! निष्काम, कोई अपेक्षा नहीं। चिंता, ग्लानि, पीड़ा, डिप्रेशन, ये तो उसको होता है जिसको सब कुछ चाहिए। ये कर लूं, ये कर लूं, ये कर लूं। कोई तमन्ना नहीं और फिर भी इसको बयां नहीं किया जा सकता! हाउ केन आई डिस्क्राइब? आदमी निष्काम हो जाए तो परम विश्राम हो जाए। लेकिन कशमश देखिये साहब सूफ़ी फ़कीर की! ओस्मान मीर का कम्पोज़िशन है। शे'र सुनियेगा साहब!

सिर्फ़ चेहरे की उदासी से निकल आये आंसू।

दिल का आलम तो आपने अभी देखा ही नहीं।

वो कर्म करते हैं या हम पे सितम करते हैं,

इस नज़र से हमने उन्हें देखा ही नहीं।

'यथायोग्यं तथा कुरु।' अरे यार! दोस्तों की बात छोड़िये, हमने दुश्मनों को भी कभी ऐसे देखा ही नहीं। आपने इतने प्यार से सुना। हनुमानजी के महोत्सव पर न नाचें तो कहां नाचें यार! बहुत जी करता है कि बहुत नाचूं, बहुत रो लूं, बहुत छलक जाऊं। लेकिन हर मौसम वर्षा ऋतु हो, ये तो व्रज की गोपांगनाओं को वरदान है। हम जैसे पुरुषों को कहां?

निश दिन बरसत नैन हमारें।

सदा रहत बारिस ऋतु हम पर, जब तें स्याम सिधारे।

साहब! मन में आया तो थोड़ा गा लिया, थोड़ा नाच लिया। कुछ दिनों से बैठे हैं काम के बिना तो थोड़ा वो कर लिया! रिहर्सल चालु रहनी चाहिए।

एना दासना दास थई रहीए,

शांति पमाडे एने संत कहीए।

(हनुमान जयंती महोत्सव-२०१८ के अवसर पर तलगाजरडा (गुजरात) में प्रस्तुत वक्तव्य: दिनांक ३१-३-२०१८)

अस्मितापर्व : २१, तसवीरी झलक

'अस्मितापर्व' के उद्घाटन समारोह में मोरारिबापू एवं अन्य महानुभाव

संगोष्ठी : सर्वश्री राम मोरी, नीतिन वडगामा, नीलम दोशी, रेखाबा सरवैया, भगीरथ ब्रह्मभट्ट, अरविंद गज्जर, हरीश महुवाकर, मणिलाल पटेल,प्रेमजी पटेल, नटवर आहलपरा

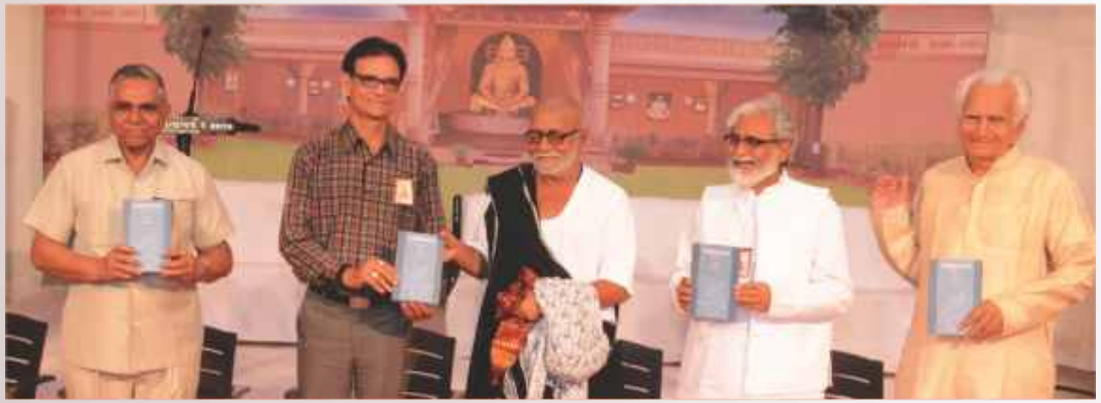

ग्रंथ-लोकार्पण : सर्वश्री गोपालभाई पटेल, विनोद जोशी, मोरारिबापू, हर्षद त्रिवेदी, रघुवीर चौधरी

संगोष्ठी : सर्वश्री देवकी दवे, उत्कर्ष मझुमदार, राज ब्रह्मभट्ट, भरत याज्ञिक

कविकर्मप्रतिष्ठा : सर्वश्री मुकुल चोकसी, खलील धनतेजवी, मणिलाल पटेल, कमल वोरा, राजेश पंड्या

संगोष्ठी : सर्वश्री लिपि ओझा, देवकी दवे, जय वसावडा, विनोद जोशी, काजल ओझा-वैद्य, निमित्त ओझा, सुभाष भट्ट, नेहल गढवी

संगोष्ठी : सुजाता शाह, मित्तल पटेल, लक्ष्मीनारायण त्रिपाठी,गौरांग जानी

काव्यायन : सर्वश्री हार्दिक व्यास, जितेन्द्र प्रजापति, दिनेश डोंगरे, कनैयालाल भट्ट, रमेश पटेल'क्ष', प्रज्ञा वशी, फिरदौस देखैया

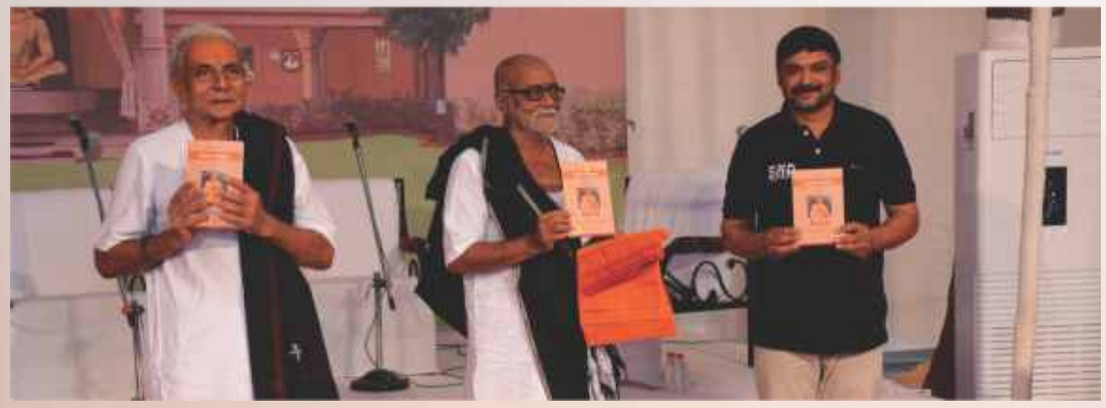

ग्रंथ-लोकार्पण : सर्वश्री वसंतबापू हरियाणी, मोरारिबापू, धर्मेश गोंडलिया

श्री हिंमत शाह
शिल्पकला (कैलास ललितकला अवॉर्ड)

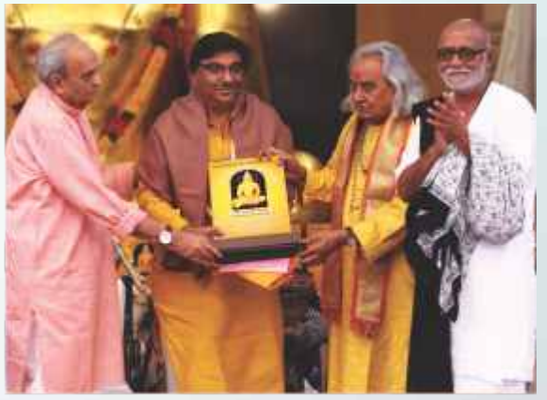

श्री नयनेश जानी
(अविनाश व्यास अवॉर्ड)

सुश्री लीलाबहेन (लीली) पटेल
गुजराती लोकनाट्य-भवाई (नटराज अवॉर्ड)

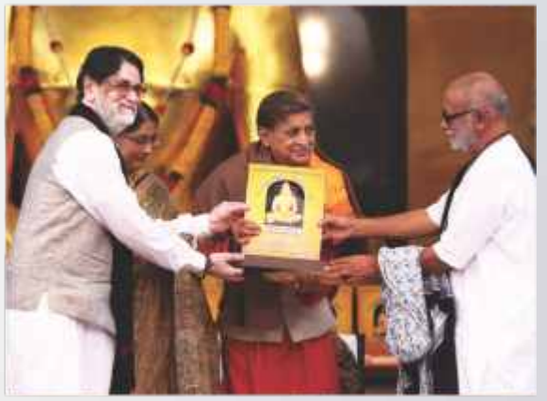

श्री दीपक घीवाळा
गुजराती रंगभूमि-नाटक (नटराज अवॉर्ड)

श्री अरविंद त्रिवेदी
भारतीय टेलिविज़न श्रेणी (नटराज अवॉर्ड)

श्रीमती कामिनी कौशल
भारतीय फिल्म (नटराज अवॉर्ड)

पं.रामकुमार मिश्र
शास्त्रीय तालवाद्य संगीत-तबलां (हनुमंत अवॉर्ड)

श्रीमती एन. राजम
शास्त्रीय वाद्यसंगीत-वायोलीन (हनुमंत अवॉर्ड)

सुश्री कुमुदिनी लाखिया
शास्त्रीय नृत्य-कथक (हनुमंत अवॉर्ड)

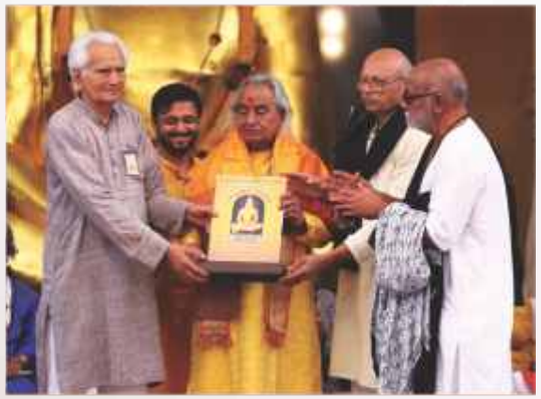

पं. छन्नुलाल मिश्र
शास्त्रीय कंठ्यसंगीत (हनुमंत अवॉर्ड)

हनुमानजी की गदा का रुद्रवीणा में स्वरूपांतर और वीणावादन

शास्त्रीय कंठयसंगीत प्रस्तुति : पंडित छन्नुलाल मिश्र

शास्त्रीय वाद्यसंगीत प्रस्तुति : श्रीमती एन. राजम

शास्त्रीय नृत्य प्रस्तुति : श्री विशालकृष्ण

॥ जय सीयाराम ॥